कभी गानेकी इच्छा हो तो मेरी मूर्तिके आगे मेरा गुणानुवाद गाओ, सुननेकी इच्छा हो तो हमारी कथा सुनो। इस प्रकार मुझमें अपने मनको अर्पण करनेसे तुम्हें परमपदकी प्राप्ति हो जायगी। सभी कर्म मुझमें अर्पण करो, डरनेकी कोई बात नहीं। मुझमें मन लगाओ, जो कुछ करो मेरे लिये करो, ऐसा करनेसे तुम ब्रह्महत्या आदि सभी दोष-पापोंसे रहित होकर मुक्त हो जाओगे, इसलिये तुम इस क्रियायोगका आश्रय ग्रहण करो।

दिण्डी बोले—महाराज! इस अमृतरूप क्रियायोगको आप विस्तारसे कहें, क्योंकि आपके बिना कोई भी इसे बतलानेमें समर्थ नहीं है। यह अत्यन्त गोपनीय और पवित्र है।

भगवान् सूर्यने कहा—तुम चिन्ता मत करो। इस सम्पूर्ण क्रियायोगका ब्रह्माजी तुमको विस्तारपूर्वक उपदेश करेंगे और मेरी कृपासे तुम इसे ग्रहण करोगे। इतना कहकर तीनों लोकोंके दीपस्वरूप भगवान् सूर्य अन्तर्हित हो गये और दिण्डी भी ब्रह्माजीके धामको चले गये। ब्रह्मलोक पहुँचकर दिण्डी सुरज्येष्ठ चतुर्मुख ब्रह्माजीको प्रणाम कर कहने लगे।

दिण्डीने प्रार्थनापूर्वक कहा—ब्रह्मन्! मुझे भगवान् सूर्यदेवने आपके पास भेजा है। आप कृपाकर मुझे क्रियायोगका उपदेश करें, जिसके सहारे मैं शीघ्र ही भगवान् सूर्यको प्रसन्न कर सकूँ।

ब्रह्माजी बोले—गणाधिप! भगवान् सूर्यका दर्शन करते ही तुम्हारी ब्रह्महत्या तो नष्ट हो गयी। तुम भगवान् सूर्यके कृपापात्र हो। यदि सूर्यनारायणकी आराधना करनेकी इच्छा है तो प्रथम दीक्षा ग्रहण करो, क्योंकि दीक्षाके बिना उपासना नहीं होती। अनेक जन्मोंके पुण्यसे भगवान् सूर्यमें भक्ति होती है। जो पुरुष भगवान् सूर्यसे द्वेष रखता है, ब्राह्मण तथा वेदकी निन्दा करता है, उसे अवश्य ही अधम पुरुषसे उत्पन्न समझो। मायाके प्रभावसे ही अधम पुरुषोंकी कुकर्ममें प्रवृत्ति होती है और उनके स्वल्प शेष रहनेपर सूर्यकी आराधनाके लिये दीक्षाकी इच्छा होती है। इस भवसागरमें डूबनेवाले पुरुषोंका हाथ पकड़कर उद्धार करनेवाले एकमात्र भगवान् सूर्य ही हैं। इसलिये तुम दीक्षा ग्रहण कर भगवान् सूर्यमें तन्मय होकर उनकी उपासना करो, इससे शीघ्र ही भगवान् सूर्य तुमपर अनुग्रह करेंगे।

दिण्डीने पूछा—महाराज! दीक्षाका अधिकारी कौन पुरुष है और दीक्षा-ग्रहण करनेके बाद क्या करना चाहिये। कृपया आप इसे बतायें।

ब्रह्माजीने कहा—दिण्डिन्! दीक्षा-ग्रहणकी इच्छावाले व्यक्तिको मन, वचन और कर्मसे हिंसा नहीं करनी चाहिये। सूर्यभगवान्‌में भक्ति करनी चाहिये, दीक्षित ब्राह्मणोंको सदा नमस्कार करना चाहिये, किसीसे द्रोह नहीं करना चाहिये। सभी प्राणियोंको सूर्यके रूपमें समझना चाहिये। देव, मनुष्य, पशु, पक्षी, चींटी, वृक्ष, पाषाण आदि जगत्‌के सभी पदार्थों और आत्माको सूर्यसे भिन्न न समझकर मन, वचन और कर्मसे जीवोंमें पापबुद्धि नहीं करनी चाहिये—ऐसा ही पुरुष दीक्षाका अधिकारी होता है। जो गति सूर्यनारायणकी आराधनासे प्राप्त होती है, वह न तो तपसे मिलती है और न बहुत दक्षिणावाले यज्ञोंके करनेसे। सभी प्रकारसे जो भगवान् सूर्यका भक्त है, वह धन्य है। उस सूर्यभक्तके अनेक कुलोंका उद्धार हो जाता है। जो अपने हृदयप्रदेशमें भगवान् सूर्यकी अर्चा करता है, वह निष्पाप होकर सूर्यलोकको प्राप्त करता है। सूर्यका मन्दिर बनवानेवाला अपनी सात पीढ़ियोंको सूर्यलोकमें निवास कराता है और जितने वर्षोंतक मन्दिरमें पूजा होती है, उतने हजार वर्षोंतक वह सूर्यलोकमें आनन्दका भोग करता है। निष्कामभावसे सूर्यकी

उपासना करनेवाला व्यक्ति मुक्तिको प्राप्त करता है। जो उत्तम लेप, सुन्दर पुष्प, अतिशय सुगन्धित धूप प्रतिदिन सूर्यनारायणको अर्पित करता है, वह यज्ञके फलको प्राप्त करता है। यज्ञमें बहुत सामग्रियोंकी अपेक्षा रहती है, इसलिये मनुष्य यज्ञ नहीं कर सकते, परंतु भक्तिपूर्वक दूर्वासे भी सूर्यनारायणकी पूजा करनेसे यज्ञ करनेसे भी अधिक फलकी प्राप्ति हो जाती है—

बहूपकरणा यज्ञा नानासम्भारविस्तराः॥
न दिण्डिन्नवाप्यन्ते मनुष्यैरल्पसंचयैः।
भक्त्या तु पुरुषैः पूजा कृता दूर्वाङ्कुरैरपि।
भानोर्ददाति हि फलं सर्वयज्ञैः सुदुर्लभम्॥

(ब्राह्मपर्व ६३। ३२-३३)

दिण्डिन्! गन्ध, पुष्प, धूप, वस्त्र, आभूषण तथा विविध प्रकारके नैवेद्य जो भी प्राप्त हों और तुम्हें जो प्रिय हों, उन्हें भक्तिपूर्वक सूर्यनारायणको निवेदित करो। तीर्थके जल, दही, दूध, घृत, शर्करा और शहदसे उन्हें स्नान कराओ। गीत-वाद्य, नृत्य, स्तुति, ब्राह्मण-भोजन, हवन आदिसे भगवान्‌को प्रसन्न करो, किंतु सभी पूजाएँ भक्तिपूर्वक होनी चाहिये। मैंने भगवान् सूर्यकी आराधना करके ही सृष्टि की है। विष्णु उनके अनुग्रहसे ही जगत्‌का पालन करते हैं और रुद्रने उनकी प्रसन्नतासे ही संहारशक्ति प्राप्त की है। ऋषिगण भी उनके ही कृपाप्रसादको प्राप्तकर मन्त्रोंका साक्षात्कार करनेमें समर्थ होते हैं। इसलिये तुम भी पूजन, व्रत, उपवास आदिसे वर्षपर्यन्त भगवान् सूर्यकी आराधना करो, जिससे सभी क्लेश दूर हो जायँगे और तुम शान्ति प्राप्त करोगे[1]।

(अध्याय ६१—६३)

भगवान् सूर्यके व्रतोंके अनुष्ठान तथा उनके मन्दिरोंमें अर्चन-पूजनकी विधि तथा फल-सप्तमी-व्रतका फल

दिण्डीने ब्रह्माजीसे पूछा—ब्रह्मन्! आपने आदित्य-क्रियायोगको मुझे बतलाया, अब आप यह बतलानेकी कृपा करें कि भगवान् सूर्य उपवाससे कैसे प्रसन्न होते हैं? उपवास करनेवालोंके लिये क्या-क्या त्याज्य है? आराधनामें क्या-क्या करना चाहिये, इसका आप विस्तारपूर्वक वर्णन करें।

ब्रह्माजी बोले—दिण्डिन्! भगवान् सूर्य पुष्प आदिद्वारा पूजन करनेसे ही प्रसन्न हो जाते हैं और उत्तम फल देते हैं। पापोंसे रहित होकर सद्गुणोंका आश्रय ग्रहण कर, सभी भोगोंका परित्याग करना ही उपवास कहलाता है[2]। अतः ऐसे उपवाससे क्यों नहीं मनोवाञ्छित फल प्राप्त होगा? एक रात, दो रात, तीन रात या नक्त-व्रत करनेवाला निष्काम होकर उपवासकर मन, वचन और कर्मसे सूर्यनारायणकी आराधनामें तत्पर रहे तो ब्रह्मलोकको प्राप्त कर सकता है। यदि साधक किसी कामनासे दत्तचित्त होकर भगवान् सूर्यकी उपासना करता है तो प्रसन्न होकर भगवान् उसकी कामना पूर्ण कर देते हैं। अन्धकारका नाश करनेवाले जगदात्मा सूर्यनारायणकी तन्मयतापूर्वक आराधनाके बिना किसी प्रकार भी सद्गति नहीं मिलती। अतः पुष्प, धूप, चन्दन, नैवेद्य आदिसे भक्तिपूर्वक सूर्यकी पूजा और उनकी प्रसन्नताके लिये उपवास करना चाहिये। उत्तम पुष्पके न मिलनेपर वृक्षोंके कोमल पत्ते अथवा दूर्वाङ्कुरसे पूजन करना चाहिये। पुष्प, पत्र, फल, जल जो भी यथाशक्ति मिले, उसे ही

१-क्रियायोगका वर्णन सभी पुराणोंमें मिलता है, विशेषरूपसे पद्मपुराणका क्रियायोगसार-खण्ड द्रष्टव्य है।

२-उपावृतस्य पापेभ्यो यस्तु वासो गुणैः सह। उपवासः स विज्ञेयः सर्वभोगविवर्जितः॥ (ब्राह्मपर्व ६४। ४)

भक्तिके साथ भगवान् सूर्यको अर्पण करना चाहिये। इससे भगवान् सूर्यको अतुल तुष्टि प्राप्त होती है। सूर्यनारायणके मन्दिरमें सदा झाड़ू देनेपर धूलिमें जितनी कणिकाएँ होती हैं, उतने समयतक सूर्यके समान होकर वह स्वर्गमें रहता है। मन्दिरके छोटे भागका भी मार्जन करनेपर उस दिनके पापसे व्यक्ति मुक्त हो जाता है। जो गोमयसे, मृत्तिका अथवा अन्य धातुओंके चूर्णोंसे मन्दिरमें उपलेपन करता है, वह विमानपर चढ़कर सूर्यलोकमें जाता है। मन्दिरमें जलसे छिड़काव करनेवाला वरुणलोकमें निवास करता है। जो लेपन किये हुए मन्दिरमें पुष्प बिखेरता है, वह कभी दुर्गति नहीं प्राप्त करता। मन्दिरमें दीपक प्रज्वलित करनेवाला व्यक्ति सभी ऋतुओंमें सुखप्रद सवारी प्राप्त करता है। ध्वजा चढ़ानेवालेके ज्ञात और अज्ञात सभी पाप पताकाके वायुसे हिलनेपर नष्ट हो जाते हैं। गीत, वाद्य और नृत्यके द्वारा मन्दिरमें उत्सव करनेवाला उत्तम विमानमें बैठता है, गन्धर्व और अप्सराएँ उसके आगे गान और नृत्य करती हैं। जो मन्दिरमें पुराणका पाठ करता है, उसे श्रेष्ठ बुद्धिकी प्राप्ति होती है और वह जातिस्मर (सभी जन्मोंकी बात जाननेवाला) हो जाता है। दिण्डिन्! सूर्यकी आराधनासे जो चाहो वह प्राप्त कर सकते हो। इनकी आराधनासे कई लोग गन्धर्व, कतिपय विद्याधर, कतिपय देवता बन गये हैं। इन्द्रने इनकी आराधनासे ही इन्द्रपद प्राप्त किया है। ब्रह्मचारी, गृहस्थ और वानप्रस्थ एवं स्त्रियोंके ये ही उपास्य हैं। जितेन्द्रिय संन्यासी भी इनके अनुग्रहसे ही मुक्तिको प्राप्त करते हैं, क्योंकि ये ही मोक्षके द्वार हैं। इस तरह सभी वर्ण और आश्रमोंके आश्रय एवं परमगति भगवान् सूर्य ही हैं।

दिण्डिन्! अब मैं काम्य उपवास और फल-सप्तमीका वर्णन करता हूँ। फल-सप्तमीका व्रत करनेसे सभी पाप नष्ट हो जाते हैं और सूर्यलोककी प्राप्ति होती है। भाद्रपद मासकी शुक्ला चतुर्थीको अयाचित-व्रत कर पञ्चमीको एक बार भोजन करे, षष्ठीको जितक्रोध, जितेन्द्रिय होकर पूर्ण उपवास करे और भक्तिके साथ सभी सामग्रियोंसे सूर्यनारायणकी पूजा करे। रातमें भगवान् सूर्यके सम्मुख पृथ्वीपर शयन करे। सप्तमीको सूर्यभगवान्का ध्यान करते हुए प्रातः उठकर स्नान-पूजन करे और खजूर, नारियल, आम, मातुलुंग आदि नैवेद्योंका भोग लगाये और ब्राह्मणको दे तथा स्वयं भी प्रसादके रूपमें उन्हें ग्रहण करे। यदि ये फल न मिलें तो शालि (चावल)-का या गेहूँका आटा लेकर उसमें गुड़ मिलाये और घीमें पकाकर उनका ही भगवान् सूर्यको भोग लगाये, अनन्तर हवन कर ब्राह्मण-भोजन कराये। इस प्रकार एक वर्षतक सप्तमीका व्रत कर अन्तमें उद्यापन करे। गोमूत्र, गोमय, गोदुग्ध, दही, घी, कुशका जल, श्वेत मृत्तिका, तिल और सरसोंका उबटन, दूर्वा, गौके सींगका जल, चमेलीके फूलके रस—इनसे स्नान करे और इनका ही प्राशन करे। ये सभी पापोंका हरण करनेवाले हैं। सभी प्रकारके फल, सस्यसम्पन्न भूमि, धान्ययुक्त भवन, बछड़ेके साथ गौ, विद्रुमके साथ ताम्रपात्र और श्वेत वस्त्र ब्राह्मणोंको दे। जो शक्ति-सम्पन्न हो वह चाँदी अथवा आटेके पिष्टक, फल तथा दो वस्त्र दे। सोना, रत्न और वस्त्र आचार्यको दे। ब्राह्मणको भोजन कराये। इस प्रकार व्रतको सम्पन्न करे। यह फल-सप्तमीका विधान कहा गया है।

यह अतिशय पुण्यमयी सप्तमी सभी पापोंका नाश करनेवाली है। इस दिन उपवासकर मनुष्य सूर्यलोकको प्राप्त करता है। वहाँ देव, गन्धर्व और अप्सराओंके साथ पूजित होता है। इस व्रतको जो करता है, वह पाप, दरिद्रता और

सभी प्रकारके दुःखोंसे मुक्त हो जाता है। इस व्रतके करनेसे ब्राह्मण मुक्ति, क्षत्रिय इन्द्रलोक, वैश्य कुबेरलोकमें निवास करता है। शूद्र इस व्रतके करनेसे द्विजत्व प्राप्त कर लेता है। पुत्रहीन पुत्र प्राप्त करता है, दुर्भगा सौभाग्यशालिनी होती है और विधवा नारी अगले जन्ममें वैधव्य प्राप्त नहीं करती। इस फल-सप्तमीको समस्त वाञ्छित पदार्थोंको प्रदान करनेवाली चिन्तामणिके समान समझना चाहिये। इस फल-सप्तमीकी कथाके श्रवण अथवा व्रत करनेवालोंकी सभी इच्छाएँ पूर्ण हो जाती हैं।

(अध्याय ६४)

रहस्य-सप्तमी-व्रतके दिन त्याज्य पदार्थका निषेध तथा व्रतका विधान एवं फल

ब्रह्माजीने कहा—दिण्डिन्! अब मैं रहस्य-सप्तमी-व्रतका विधान कह रहा हूँ। इस व्रतके करनेसे अपनेसे आगे आनेवाली सात पीढ़ी तथा पीछेकी भी सात पीढ़ीके कुलोंका उद्धार हो जाता है। जो इस व्रतका नियमसे पालन करता है, उसे धन, पुत्र, आरोग्य, विद्या, विनय, धर्म तथा अप्राप्य वस्तुकी भी प्राप्ति हो जाती है। इस व्रतके नियम इस प्रकार हैं—सबमें मैत्रीभाव रखते हुए भगवान् सूर्यका चिन्तन करता रहे। मनुष्यको व्रतके दिन न तेलका स्पर्श करना चाहिये, न नीला वस्त्र धारण करना चाहिये तथा न आँवलेसे स्नान करना चाहिये। किसीसे कलह तो करे ही नहीं। इस दिन नीला वस्त्र धारण करके जो सत्कर्म करता है, वह निष्फल होता है। जो ब्राह्मण इस व्रतके दिन एक बार नीला वस्त्र धारण कर ले तो उसे उचित है कि स्वयंकी शुद्धिके लिये उपवास करके पञ्चगव्य-प्राशन करे, तभी वह शुद्ध होता है। यदि अज्ञानवश नील-वृक्षकी लकड़ीसे कोई ब्राह्मण दन्तधावन कर लेता है तो वह दो चान्द्रायण-व्रत करनेसे शुद्ध होता है। इस दिन रोमकूपमें नीले रंगके प्रवेश करनेमात्रसे ही तीन कृच्छ्र-चान्द्रायणव्रत करेनेसे शुद्धि होती है। जो व्यक्ति प्रमादवश नील-वृक्षके उद्यानमें चला जाता है वह पञ्चगव्य-प्राशनसे ही शुद्ध होता है। जहाँ नील एक बार बोयी जाती है, वह भूमि बारह वर्षतक अपवित्र रहती है।

रहस्य-सप्तमी-व्रतके दिन जो तेलका स्पर्श करता है, उसकी प्रिय भार्या नष्ट हो जाती है, अतः तैलका स्पर्श नहीं करना चाहिये। इस तिथिको किसीके साथ द्रोह और क्रूरता भी करना उचित नहीं है। इस दिन गीत गाना, नृत्य करना, वीणादि वाद्ययन्त्र बजाना, शव देखना, व्यर्थमें हँसना, स्त्रीके साथ शयन करना, द्यूत-क्रीडा, रोना, दिनमें सोना, असत्य बोलना, दूसरेके अनिष्टका चिन्तन करना, किसी भी जीवको कष्ट देना, अत्यधिक भोजन करना, गली-कूचोंमें घूमना, दम्भ, शोक, शठता तथा क्रूरता—इन सबका प्रयत्नपूर्वक परित्याग कर देना चाहिये।

इस व्रतका आरम्भ चैत्र मासमे करना चाहिये। व्रत करनेवाले मनुष्यको चाहिये कि वह चैत्रादि मासोंमें धाता, अर्यमा, मित्र, वरुण, इन्द्र, विवस्वान्, पर्जन्य, पूषा, भग, त्वष्टा, विष्णु तथा भास्कर—इन द्वादश सूर्योंका क्रमशः पूजन करे। प्रत्येक सप्तमीके दिन भोजक ब्राह्मणको घीके साथ भोजन कराकर उसे घृतसहित पात्र, एक माशा सुवर्ण और दक्षिणा देनी चाहिये। यदि भोजक न मिल सके तो श्रेष्ठ ब्राह्मणको ही भोजककी भाँति भोजन कराकर वही वस्तुएँ दानमें देनी चाहिये।

हे दिण्डिन्! इस प्रकार मैंने सप्तमीके इस माहात्म्यका वर्णन किया, जिसके श्रवणमात्रसे भी सभी पाप नष्ट हो जाते हैं और सूर्यलोककी प्राप्ति होती है।

सुमन्तु बोले—राजन्! इतना कहकर ब्रह्माजी अन्तर्धान हो गये और दिण्डी भी उनके द्वारा बताये गये इस व्रतके अनुसार सूर्यनारायणका पूजन करके अपने मनोवाञ्छित फलको प्राप्त करनेमें सफल हुए और भगवान् सूर्यके अनुचर हो गये। (अध्याय ६५)

शंख एवं द्विज, वसिष्ठ एवं साम्ब तथा याज्ञवल्क्य और ब्रह्माके संवादमें आदित्यकी आराधनाका माहात्म्य-कथन, भगवान् सूर्यकी ब्रह्मरूपता

राजा शतानीकने कहा—मुने! आप भगवान् सूर्यनारायणके प्रभावका और भी वर्णन करें। आपकी अमृतमयी वाणी सुन-सुनकर मुझे तृप्ति नहीं हो रही है।

सुमन्तुजीने कहा—राजन्! इस विषयमें शंख और द्विजका जो संवाद हुआ है, उसे आप सुनें, जिसे सुनकर मानव सम्पूर्ण पापोंसे मुक्त हो जाता है।

एक अत्यन्त रमणीय आश्रम था, जिसमें सभी वृक्ष फलोंके भारसे झुक रहे थे। कहीं मृग अपनी सींगोंसे परस्पर एक-दूसरेके शरीरमें खुजला रहे थे, किसी दिशामें मयूरोंका नृत्य और भ्रमरोंकी मधुर ध्वनिका गुंजार हो रहा था। ऐसे मनोहारी आश्रममें अनेक तपस्वियोंसे सेवित भगवान् सूर्यके अनन्य भक्त शंख नामके एक मुनि रहते थे। एक बार भोजक-कुमारोंने मुनिके समीप जाकर विनयपूर्वक अभिवादन कर निवेदन किया—महाराज! वेदोंके विषयमें हमें संदेह है। आप उसका निवारण करें। उन विनयी भोजकोंकी इस प्रार्थनाको सुनकर प्रसन्न हुए शंखमुनि उन सभीको वेदाध्ययन कराने लगे। एक दिन वे सभी कुमार वेदका अध्ययन कर रहे थे, उसी समय परम तपस्वी द्विज नामके एक श्रेष्ठ मुनि वहाँ आये। अमित तेजस्वी उन शंखमुनिने उनकी विधिवत् अर्चना की और उन्हें आसनपर बैठाया। उन कुमारोंने भी उनकी वन्दना की, जिससे द्विज बहुत प्रसन्न हुए।

शंख मुनिने उन भोजक-कुमारोंसे कहा—शिष्ट पुरुषके आगमनसे अनध्याय होता है। अतः तुम सब इस समय अपना अध्ययन समाप्त करो। यह सुनते ही कुमारोंने अपने-अपने ग्रन्थ बंद कर दिये।

द्विजने शंख मुनिसे पूछा—ये बालक कौन हैं और क्या पढ़ते हैं?

शंख मुनिने कहा—महाराज! ये भोजक-कुमार हैं। सूत्र और कल्पके साथ चारों वेद, सूर्यनारायणके पूजन और हवनका विधान, प्रतिष्ठाविधि, रथयात्राकी रीति तथा सप्तमी तिथिके कल्पका ये अध्ययन कर रहे हैं।

द्विजने पुनः पूछा—मुने! सप्तमी-व्रतका क्या विधान है और भगवान् सूर्यके अर्चनकी क्या विधि है? सूर्य-मन्दिरमें गन्ध, पुष्प, दीप आदि देनेसे क्या फल प्राप्त होता है? किस व्रत, नियम और दानसे भगवान् सूर्य प्रसन्न होते हैं? उन्हें कौन-से पुष्प-धूप तथा उपहार दिये जाते हैं? यह सब मैं सुनना चाहता हूँ, इसे आप बतायें। सूर्यनारायणके माहात्म्यकी भी विशेषरूपसे चर्चा करें।

शंख मुनिने कहा—इस प्रसंगमें मैं महाराज

साम्ब और महर्षि वसिष्ठके संवादका वर्णन कर रहा हूँ।

एक बार साम्ब महर्षि वसिष्ठके पवित्र आश्रमपर गये। वहाँ जाकर उन्होंने नियतात्मा वसिष्ठके चरणोंमें प्रणाम किया और वे हाथ जोड़कर विनीत भावसे खड़े हो गये। महर्षि वसिष्ठने भी उनके भक्तिभावको देखकर प्रसन्नमनसे उनसे पूछा।

वसिष्ठ बोले—साम्ब! तुम्हारा तो सम्पूर्ण शरीर भयंकर कुष्ठ-रोगसे विदीर्ण हो गया था, यह सर्वथा रोगमुक्त कैसे हुआ और तुम्हारे शरीरकी दिव्य कान्ति एवं शोभा कैसे बढ़ गयी? यह सब मुझे बताओ।

साम्बने कहा—महाराज! मैंने भगवान् सूर्यनारायणकी आराधना उनके सहस्रनामोंद्वारा की है। उसी आराधनाके प्रभावसे उन्होंने प्रसन्न होकर मुझे साक्षात् दर्शन दिया है और उनसे मुझे वरकी भी प्राप्ति हुई है।

वसिष्ठने पुनः पूछा—तुमने किस विधिसे सूर्यकी आराधना की है? तुम्हें किस व्रत, तप अथवा दानसे उनका साक्षात् दर्शन हुआ? यह सब विस्तारसे बतलाओ।

साम्बने कहा—महाराज! जिस विधिसे मैंने भगवान् सूर्यको प्रसन्न किया है, वह समस्त वृत्तान्त आप ध्यानपूर्वक सुनें।

आजसे बहुत पहले मैंने अज्ञानवश दुर्वासा-मुनिका उपहास किया था। इसलिये क्रोधमें आकर उन्होंने मुझे कुष्ठरोगसे ग्रस्त होनेका शाप दे दिया, जिससे मैं कुष्ठरोगी हो गया। तब अत्यन्त दुःखी एवं लज्जित होते हुए मैंने अपने पिता भगवान् श्रीकृष्णके पास जाकर निवेदन किया—'तात! मैं दुर्वासा मुनिके शापसे कुष्ठरोगसे ग्रस्त होकर अत्यधिक पीड़ित हो रहा हूँ, मेरा शरीर गलता जा रहा है। कण्ठका स्वर भी बैठता जा रहा है। पीड़ासे प्राण निकल रहे हैं। वैद्यों आदिके द्वारा उपचार करानेपर भी मुझे शान्ति नहीं मिलती। अब आपकी आज्ञा प्राप्त कर मैं प्राण त्यागना चाहता हूँ। अतः आप मुझे यह आज्ञा देनेकी कृपा करें, जिससे मैं इस कष्टसे मुक्त हो सकूँ।' मेरा यह दीन वचन सुनकर उन्हें बड़ा दुःख हुआ और उन्होंने क्षणभर विचार कर मुझसे कहा—'पुत्र! धैर्य धारण करो, चिन्ता मत करो, क्योंकि जैसे सूखे तिनकेको आग जलाकर भस्म कर देती है, वैसे ही चिन्ता करनेसे रोग और अधिक कष्ट देता है। भक्तिपूर्वक तुम देवाराधन करो। उससे सभी रोग नष्ट हो जायँगे।' पिताके ऐसे वचन सुनकर मैंने पूछा—'तात! ऐसा कौन देवता है, जिसकी आराधना करनेसे इस भयंकर रोगसे मैं मुक्ति पा सकूँ?'

भगवान् श्रीकृष्ण बोले—पुत्र! एक समयकी बात है, योगिश्रेष्ठ याज्ञवल्क्य मुनिने ब्रह्मलोकमें जाकर पद्मयोनि ब्रह्माजीको प्रणाम किया और उनसे पूछा कि महाराज! मोक्ष प्राप्त करनेके इच्छुक प्राणीको किस देवताकी आराधना करनी चाहिये? अक्षय स्वर्गकी प्राप्ति किस देवताकी उपासना करनेसे होती है? यह चराचर विश्व किससे उत्पन्न हुआ है और किसमें लीन होता है? इन सबका आप वर्णन करें।

ब्रह्माजी बोले—महर्षे! आपने बहुत अच्छा प्रश्न पूछा है। यह सुनकर मैं बहुत प्रसन्न हूँ। मैं आपके प्रश्नोंका उत्तर दे रहा हूँ, इसे ध्यानपूर्वक सुनें—जो देवश्रेष्ठ अपने उदयके साथ ही समस्त जगत्का अन्धकार नष्ट कर तीनों लोकोंको प्रतिभासित कर देते हैं, वे अजर-अमर, अव्यय, शाश्वत, अक्षय, शुभ-अशुभके जाननेवाले, कर्मसाक्षी, सर्वदेवता और जगत्के स्वामी हैं। उनका मण्डल कभी क्षय नहीं होता। वे पितरोंके पिता, देवताओंके भी देवता, जगत्के आधार, सृष्टि, स्थिति तथा संहारकर्ता

हैं। योगी पुरुष वायुरूप होकर जिनमें लीन हो जाते हैं, जिनकी सहस्र रश्मियोंमें मुनि, सिद्धगण और देवता निवास करते हैं, जनक, व्यास, शुकदेव, बालखिल्य, आदि ऋषिगण, पञ्चशिख आदि योगिगण जिनके प्रभामण्डलमें प्रविष्ट हुए हैं, ऐसे वे प्रत्यक्ष देवता सूर्यनारायण ही हैं। ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव आदिका नाम तो मात्र सुननेमें ही आता है, पर सभीको वे दृष्टिगोचर नहीं होते, किंतु तिमिरनाशक सूर्यनारायण सभीको प्रत्यक्ष दिखायी देते हैं। इसलिये ये सभी देवताओंमें श्रेष्ठतम हैं। अतः याज्ञवल्क्य! आपको भी सूर्यनारायणके अतिरिक्त अन्य किसी देवताकी उपासना नहीं करनी चाहिये। इन प्रत्यक्ष देवताकी आराधना करनेसे सभी फल प्राप्त हो सकते हैं।

याज्ञवल्क्य मुनिने कहा—महाराज! आपने मुझे बहुत ही उत्तम उपदेश दिया है, जो बिलकुल सत्य है, मैंने पहले भी बहुत बार सूर्यनारायणके माहात्म्यको सुना है। जिनके दक्षिण अङ्गसे विष्णु, वाम अङ्गसे स्वयं आप और ललाटसे रुद्र उत्पन्न हुए हैं, उनकी तुलना और कौन देवता कर सकते हैं? उनके गुणोंका वर्णन भला किन शब्दोंमें किया जा सकता है? अब मैं उनकी उस आराधना-विधिको सुनना चाहता हूँ, जिसके द्वारा मैं संसार-सागरको पार कर जाऊँ। वे कौन-से व्रत-उपवास-दान, होम-जप आदि हैं, जिनके करनेसे सूर्यनारायण प्रसन्न होकर समस्त कष्टोंको दूर कर देते हैं? यह सब आप बतलानेकी कृपा करें; क्योंकि प्राणियोंद्वारा धर्म, अर्थ तथा कामकी प्राप्तिके लिये जो चेष्टाएँ की जाती हैं, उनमें वही चेष्टा सफल है जो भगवान् सूर्यका आश्रय ग्रहण कर अनुष्ठित हो; अन्यथा वे सभी क्रियाएँ व्यर्थ हैं। इस अपार घोर संसार-सागरमें निमग्न प्राणियोंद्वारा एक बार भी किया गया सूर्यनमस्कार मुक्तिको प्राप्त करा देता है*। भक्तिभावसे परिपूर्ण याज्ञवल्क्यके इन वचनोंको सुनकर ब्रह्माजी प्रसन्न हो उठे और कहने लगे कि याज्ञवल्क्य! आपने सूर्यनारायणकी आराधनाका जो उपाय पूछा है, उसका मैं वर्णन कर रहा हूँ, एकाग्रचित्त होकर आप सुनें।

ब्रह्माजी बोले—आदि और अन्तसे रहित, सर्वव्याप्त, परब्रह्म अपनी लीलासे प्रकृति-पुरुष-रूप धारण करके संसारको उत्पन्न करनेवाले, अक्षर, सृष्टि-रचनाके समय ब्रह्मा, पालनके समय विष्णु और संहारकालमें रुद्रका रूप धारण करनेवाले सर्वदेवमय, पूज्य भगवान् सूर्यनारायण ही हैं। अब मैं भेदाभेदस्वरूप उन भगवान् सूर्यको प्रणाम करके उनकी आराधनाका वर्णन करूँगा, यह अत्यन्त गुप्त है, जिसे प्रसन्न होकर भगवान् भास्करने मुझसे कहा था।

ब्रह्माजी पुनः बोले—याज्ञवल्क्य! एक बार मैंने भगवान् सूर्यनारायणकी स्तुति की। उस स्तुतिसे प्रसन्न होकर वे प्रत्यक्ष प्रकट हुए, तब मैंने उनसे पूछा कि महाराज! वेद-वेदाङ्गोंमें और पुराणोंमें आपका ही प्रतिपादन हुआ है। आप शाश्वत, अज तथा परब्रह्मस्वरूप हैं। यह जगत् आपमें ही स्थित है। गृहस्थाश्रम जिनका मूल है, ऐसे वे चारों आश्रमोंवाले रात-दिन आपकी अनेक मूर्तियोंका पूजन करते हैं। आप ही सबके माता-पिता और पूज्य हैं। आप किस देवताका ध्यान एवं पूजन करते हैं? मैं इसे नहीं समझ पा रहा हूँ, इसे मैं सुनना चाहता हूँ, मेरे मनमें बड़ा कौतूहल है।

भगवान् सूर्यने कहा—ब्रह्मन्! यह अत्यन्त गुप्त बात है, किंतु आप मेरे परम भक्त हैं, इसलिये मैं इसका यथावत् वर्णन कर रहा हूँ—वे परमात्मा सभी प्राणियोंमें व्याप्त, अचल, नित्य, सूक्ष्म तथा

* दुर्गसंसारकान्तारमपारमभिधावताम्। एकः सूर्यनमस्कारो मुक्तिमार्गस्य देशकः॥ (ब्राह्मपर्व ६६। ७२)

इन्द्रियातीत हैं, उन्हें क्षेत्रज्ञ, पुरुष, हिरण्यगर्भ, महान्, प्रधान तथा बुद्धि आदि अनेक नामोंसे अभिहित किया जाता है। जो तीनों लोकोंके एकमात्र आधार हैं, वे निर्गुण होकर भी अपनी इच्छासे सगुण हो जाते हैं, सबके साक्षी हैं, स्वतः कोई कर्म नहीं करते और न तो कर्मफलकी प्राप्तिसे संलिप्त रहते हैं। वे परमात्मा सब ओर सिर, नेत्र, हाथ, पैर, नासिका, कान तथा मुखवाले हैं, वे समस्त जगत्को आच्छादित करके अवस्थित हैं तथा सभी प्राणियोंमें स्वच्छन्द होकर आनन्दपूर्वक विचरण करते हैं।

शुभाशुभ कर्मरूप बीजवाला शरीर क्षेत्र कहलाता है। इसे जाननेके कारण परमात्मा क्षेत्रज्ञ कहलाते हैं। वे अव्यक्तपुरमें शयन करनेसे पुरुष, बहुत रूप धारण करनेसे विश्वरूप और धारण-पोषण करनेके कारण महापुरुष कहे जाते हैं। ये ही अनेक रूप धारण करते हैं। जिस प्रकार एक ही वायु शरीरमें प्राण-अपान आदि अनेक रूप धारण किये हुए है और जैसे एक ही अग्नि अनेक स्थान-भेदोंके कारण अनेक नामोंसे अभिहित की जाती है, उसी प्रकार परमात्मा भी अनेक भेदोंके कारण बहुत रूप धारण करते हैं। जिस प्रकार एक दीपसे हजारों दीप प्रज्वलित हो जाते हैं, उसी प्रकार एक परमात्मासे सम्पूर्ण जगत् उत्पन्न होता है। जब वह अपनी इच्छासे संसारका संहार करता है, तब फिर एकाकी ही रह जाता है। परमात्माको छोड़कर जगत्में कोई स्थावर या जंगम पदार्थ नित्य नहीं है, क्योंकि वे अक्षय, अप्रमेय और सर्वज्ञ कहे जाते हैं। उनसे बढ़कर कोई अन्य नहीं है, वे ही पिता हैं, वे ही प्रजापति हैं, सभी देवता और असुर आदि उन परमात्मा भास्करदेवकी आराधना करते हैं और वे उन्हें सद्गति प्रदान करते हैं। वे सर्वगत होते हुए भी निर्गुण हैं। उसी आत्मस्वरूप परमेश्वरका मैं ध्यान करता हूँ तथा सूर्यरूप अपने आत्माका ही पूजन करता हूँ। हे याज्ञवल्क्य मुने! भगवान् सूर्यने स्वयं ही ये बातें मुझसे कही थीं।

(अध्याय ६६-६७)

सूर्यनारायणके प्रिय पुष्प, सूर्यमन्दिरमें मार्जन-लेपन आदिका फल, दीपदानका फल तथा सिद्धार्थ-सप्तमी-व्रतका विधान और फल

ब्रह्माजी बोले—याज्ञवल्क्य! एक बार मैंने भगवान् सूर्यनारायणसे उनके प्रिय पुष्पोंके विषयमें जिज्ञासा की। तब उन्होंने कहा था कि मल्लिका (बेला फूलकी एक जाति)-पुष्प मुझे अत्यन्त प्रिय है। जो मुझे इसे अर्पण करता है, वह उत्तम भोगोंको प्राप्त करता है। मुझे श्वेत कमल अर्पण करनेसे सौभाग्य, सुगन्धित कुटज-पुष्पसे अक्षय ऐश्वर्यकी प्राप्ति होती है तथा मन्दार-पुष्पसे सभी प्रकारके कुष्ठ-रोगोंका नाश होता है और बिल्व-पत्रसे पूजन करनेपर विपुल सम्पत्तिकी प्राप्ति होती है। मन्दार-पुष्पकी मालासे सम्पूर्ण कामनाओंकी पूर्ति, वकुल (मौलसिरी)-पुष्पकी मालासे रूपवती कन्याका लाभ, पलाश-पुष्पसे अरिष्ट-शान्ति, अगस्त्य-पुष्पसे पूजन करनेपर (मेरा) सूर्यनारायणका अनुग्रह तथा करवीर (कनैल)-पुष्प समर्पित करनेसे मेरे अनुचर होनेका सौभाग्य प्राप्त होता है। बेलाके पुष्पोंसे (मेरी) सूर्यकी पूजा करनेपर मेरे लोककी प्राप्ति होती है। एक हजार कमल-पुष्प चढ़ानेपर मेरे (सूर्य) लोकमें निवास करनेका फल प्राप्त होता है। वकुल-पुष्प अर्पित करनेसे भानुलोक प्राप्त होता है। कस्तूरी, चन्दन, कुंकुम तथा कपूरके योगसे बनाये गये यक्षकर्दम गन्धका लेपन करनेसे

सद्गति प्राप्त होती है। सूर्यभगवान्‌के मन्दिरका मार्जन तथा उपलेपन करनेवाला सभी रोगोंसे मुक्त हो जाता है और उसे शीघ्र ही प्रचुर धनकी प्राप्ति होती है। जो भक्तिपूर्वक गेरूसे मन्दिरका लेपन करता है, उसे सम्पत्ति प्राप्त होती है और वह रोगोंसे मुक्ति प्राप्त करता है तथा यदि मृत्तिकासे लेपन करता है तो उसे अठारह प्रकारके कुष्ठरोगोंसे मुक्ति मिल जाती है।

सभी पुष्पोंमें करवीरका पुष्प और समस्त विलेपनोंमें रक्तचन्दनका विलेपन मुझे अधिक प्रिय है। करवीरके पुष्पोंसे जो सूर्यभगवान्‌की (मेरी) पूजा करता है, वह संसारके सभी सुखोंको भोगकर अन्तमें स्वर्गलोकमें निवास करता है।

मन्दिरमें लेपन करनेके पश्चात् मण्डल बनानेपर सूर्यलोककी प्राप्ति होती है। एक मण्डल बनानेसे अर्थकी प्राप्ति, दो मण्डल बनानेसे आरोग्य, तीन मण्डलकी रचना करनेसे अविच्छिन्न संतान, चार मण्डल बनानेसे लक्ष्मी, पाँच मण्डल बनानेसे विपुल धन-धान्य, छः मण्डलोंकी रचना करनेसे आयु, बल और यश तथा सात मण्डलोंकी रचना करनेसे मण्डलका अधिपति होता है तथा आयु, धन, पुत्र और राज्यकी प्राप्ति होती है एवं अन्तमें उसे सूर्यलोक मिलता है।

मन्दिरमें घृतका दीपक प्रज्वलित करनेसे नेत्र-रोग नहीं होता। महुएके तेलका दीपक जलानेसे सौभाग्य प्राप्त होता है, तिलके तेलका दीपक जलानेसे सूर्यलोक तथा कड़ुआ तेलसे दीपक जलानेपर शत्रुओंपर विजय प्राप्त होती है।

सर्वप्रथम गन्ध-पुष्प-धूप-दीप आदि उपचारोंसे सूर्यका पूजन कर नाना प्रकारके नैवेद्य निवेदित करने चाहिये। पुष्पोंमें चमेली और कनेरके पुष्प, धूपोंमें विजय-धूप, गन्धोंमें कुंकुम, लेपोंमें रक्तचन्दन दीपोंमें घृतदीप तथा नैवेद्योंमें मोदक भगवान् सूर्यनारायणको परम प्रिय हैं। अतः इन्हीं वस्तुओंसे उनकी पूजा करनी चाहिये। पूजन करनेके पश्चात् प्रदक्षिणा और नमस्कार करके हाथमें श्वेत सरसोंका एक दाना और जल लेकर सूर्यभगवान्‌के सम्मुख खड़े होकर हृदयमें अभीष्ट कामनाका चिन्तन करते हुए सरसोंसहित जलको पी जाना चाहिये, परंतु दाँतोंसे उसका स्पर्श नहीं हो। इसी प्रकार दूसरी सप्तमीको श्वेत सर्षप (पीली सरसों)-के दो दाने जलके साथ पान करना चाहिये और इसी तरह सातवीं सप्तमीतक एक-एक दाना बढ़ाते हुए इस मन्त्रसे उसे अभिमन्त्रित करके पान करना चाहिये—

सिद्धार्थकस्त्वं हि लोके सर्वत्र श्रूयसे यथा।
तथा मामपि सिद्धार्थमर्थतः कुरुतां रविः॥

(ब्राह्मपर्व ६८। ३६)

तदनन्तर शास्त्रोक्त रीतिसे जप और हवन करना चाहिये। यह भी विधि है कि प्रथम सप्तमीके दिन जलके साथ सिद्धार्थ (सरसों)-का पान करे, दूसरी सप्तमीको घृतके साथ और आगे शहद, दही, दूध, गोमय और पञ्चगव्यके साथ क्रमशः एक-एक सिद्धार्थ बढ़ाते हुए सातवीं सप्तमीतक सिद्धार्थका पान करे। इस प्रकार जो सर्षप-सप्तमीका व्रत करता है, वह बहुत-सा धन, पुत्र और ऐश्वर्य प्राप्त करता है। उसकी सभी मनःकामनाएँ सिद्ध हो जाती हैं और वह सूर्यलोकमें निवास करता है। (अध्याय ६८)

शुभाशुभ स्वप्न और उनके फल

ब्रह्माजी बोले—याज्ञवल्क्य! जो व्यक्ति सप्तमीमें उपवास करके विधिपूर्वक सूर्यनारायणका पूजन, जप एवं हवन आदि क्रियाएँ सम्पन्नकर रात्रिके समय भगवान् सूर्यका ध्यान करते हुए शयन करता है, तब उसे रात्रिमें जो स्वप्न दिखायी देते हैं, उन स्वप्न-फलोंका मैं अब वर्णन कर रहा हूँ। यदि स्वप्नमें सूर्यका उदय, इन्द्रध्वज और चन्द्रमा दिखायी दे तो सभी समृद्धियाँ प्राप्त होती हैं। माला पहने व्यक्ति, गाय या वंशीकी आवाज, श्वेत कमल, चामर, दर्पण, सोना, तलवार, पुत्रकी प्राप्ति, रुधिरका थोड़ा या अधिक मात्रामें निकलना तथा पान करना ऐसा स्वप्न देखनेसे ऐश्वर्यकी प्राप्ति होती है। घृताक्त प्रजापतिके दर्शनसे पुत्र-प्राप्तिका फल होता है। स्वप्नमें प्रशस्त वृक्षपर चढ़े अथवा अपने मुखमें महिषी, गौ या सिंहनीका दोहन करे तो शीघ्र ही ऐश्वर्य प्राप्त होता है। सोने या चाँदीके पात्रमें अथवा कमल-पत्रमें जो स्वप्नमें खीर खाता है उसे बलकी प्राप्ति होती है। द्यूत, वाद तथा युद्धमें विजयप्राप्तिका जो स्वप्न देखता है, वह सुख प्राप्त करता है। स्वप्नमें जो अग्नि-पान करता है, उसके जठराग्निकी वृद्धि होती है। यदि स्वप्नमें अपने अङ्ग प्रज्वलित होते दिखायी दें और सिरमें पीड़ा हो तो सम्पत्ति मिलती है। श्वेतवर्णके वस्त्र, माला और प्रशस्त पक्षीका दर्शन शुभ होता है। देवता-ब्राह्मण, आचार्य, गुरु, वृद्ध तथा तपस्वी स्वप्नमें जो कुछ कहते हैं, वह सत्य होता है[१]। स्वप्नमें सिरका कटना अथवा फटना, पैरोंमें बेड़ीका पड़ना, राज्य-प्राप्तिका संकेतक है। स्वप्नमें रोनेसे हर्षकी प्राप्ति होती है। घोड़ा, बैल, श्वेत कमल तथा श्रेष्ठ हाथीपर निडर होकर चढ़नेसे महान् ऐश्वर्य प्राप्त होता है। ग्रह और ताराओंका ग्रास देखे, पृथ्वीको उलट दे और पर्वतको उखाड़ फेंके तो राज्यका लाभ होता है। पेटसे आँत निकले और उससे वृक्षको लपेटे, पर्वत-समुद्र तथा नदी पार करे तो अत्यधिक ऐश्वर्यकी प्राप्ति होती है। सुन्दर स्त्रीकी गोदमें बैठे और बहुत-सी स्त्रियाँ आशीर्वाद दें, शरीरको कीड़े भक्षण करें, स्वप्नमें स्वप्नका ज्ञान हो, अभीष्ट बात सुनने और कहनेमें आये तथा मङ्गलदायक पदार्थोंका दर्शन एवं प्राप्ति हो तो धन और आरोग्यका लाभ होता है। जिन स्वप्नोंका फल राज्य और ऐश्वर्यकी प्राप्ति है, यदि उन स्वप्नोंको रोगी देखता है तो वह रोगसे मुक्त हो जाता है। इस प्रकार रात्रिमें स्वप्न देखनेके पश्चात् प्रातःकाल स्नानकर राजा-ब्राह्मण अथवा भोजकको अपना स्वप्न सुनाना चाहिये[२]।

(अध्याय ६९)

१-देवद्विजजनाचार्यगुरुवृद्धतपस्विनः ॥
यद्यद्वदन्ति तत्सर्वं सत्यमेव हि निर्दिशेत्। (ब्राह्मपर्व ६९।१४-१५)

२-भारत तथा विदेशोंमें भी मैटिनी आदिके 'डिक्शेनरी ऑफ ड्रीम्स' आदि अनेक ग्रन्थ हैं। बृहस्पतिप्रोक्त 'स्वप्नाध्याय' ग्रन्थ विशेष प्रसिद्ध है। वाल्मीकीय रामायणमें त्रिजटाके स्वप्नका वर्णन ध्येय है। स्वप्नका योगसे घनिष्ठ सम्बन्ध है। सभीके संयुक्त अध्ययनसे साधकोंको विशेष लाभ हो सकता है।

सिद्धार्थ (सर्षप)-सप्तमी-व्रतके उद्यापनकी विधि

ब्रह्माजी बोले—याज्ञवल्क्य! सिद्धार्थ-सप्तमीके व्रतके अनन्तर दूसरे दिन स्नान-पूजन-जप तथा हवन आदि करके भोजक, पुराणवेत्ता और वेद-पारङ्गत ब्राह्मणोंको भोजन कराकर लाल वस्त्र, दूध देनेवाली गाय, उत्तम भोजन तथा जो-जो पदार्थ अपनेको प्रिय हों, वे सब मध्याह्नकालमें भोजकोंको दान देने चाहिये। यदि भोजक न प्राप्त हो सकें तो पौराणिकको और पौराणिक न मिल सकें तो सामवेद जाननेवाले मन्त्रविद् ब्राह्मणको वे सभी वस्तुएँ देनी चाहिये। मुने! यह सिद्धार्थ-सप्तमीके उद्यापनकी संक्षिप्त विधि है।

इस प्रकार भक्तिपूर्वक सात सप्तमीका व्रत करनेसे अनन्त सुखकी प्राप्ति होती है और दस अश्वमेध-यज्ञका फल प्राप्त होता है। इस व्रतसे सभी कार्य सिद्ध हो जाते हैं। गरुड़को देखकर सर्प आदिकी तरह कुष्ठ आदि सभी रोग इसके अनुष्ठानसे दूर भागते हैं। व्रत-नियम तथा तप करके सात सप्तमीको व्रत करनेसे मनुष्य विद्या, धन, पुत्र, भाग्य, आरोग्य और धर्मको तथा अन्त समयमें सूर्यलोकको प्राप्त कर लेता है। इस सप्तमी-व्रतकी विधिका जो श्रवण करता है अथवा उसे पढ़ता है, वह भी सूर्यनारायणमें लीन हो जाता है। देवता और मुनि भी इस व्रतके माहात्म्यको सुनकर सूर्यनारायणके भक्त हो गये हैं। जो पुरुष इस आख्यानका स्वयं श्रवण करता है अथवा दूसरेको सुनाता है तो वे दोनों सूर्यलोकको जाते हैं। रोगी यदि इसका श्रवण करे तो रोगमुक्त हो जाता है। इस व्रतकी जिज्ञासा रखनेवाला भक्त अभिलषित इच्छाओंको प्राप्त करता है और सूर्यलोकको जाता है। यदि इस आख्यानको पढ़कर यात्रा की जाय तो मार्गमें विघ्न नहीं आते और यात्रा सफल होती है। जो कोई भी जिस पदार्थकी कामना करता है, वह उसे निश्चित प्राप्त कर लेता है। गर्भिणी स्त्री इस आख्यानको सुने तो वह सुखपूर्वक पुत्रको जन्म देती है, बन्ध्या सुने तो संतान प्राप्त करती है। याज्ञवल्क्य! यह सब कथा सूर्यनारायणने मुझसे कही थी तथा मैंने आपको सुना दी और अब आप भी भक्तिपूर्वक सूर्यनारायणकी आराधना करें, जिससे सभी पातक नष्ट हो जायँ। उदित होते ही जो अपनी किरणोंसे संसारका अन्धकार दूर कर प्रकाश फैलाते हैं, वे द्वादशात्मा सूर्यनारायण ही जगत्के माता-पिता तथा गुरु हैं, अदिति-पुत्र भगवान् सूर्य आपपर प्रसन्न हों।

(अध्याय ७०)

ब्रह्माद्वारा कहा गया भगवान् सूर्यका नाम-स्तोत्र

ब्रह्माजी बोले—याज्ञवल्क्य! भगवान् सूर्य जिन नामोंके स्तवनसे प्रसन्न होते हैं, मैं उनका वर्णन कर रहा हूँ—

नमः सूर्याय नित्याय रवयेऽर्काय भानवे।
भास्कराय मतङ्गाय मार्तण्डाय विवस्वते॥

नित्य, रवि, अर्क, भानु, भास्कर, मतङ्ग, मार्तण्ड तथा विवस्वान् नामोंसे युक्त भगवान् सूर्यको मेरा नमस्कार है।

आदित्यायादिदेवाय नमस्ते रश्मिमालिने।
दिवाकराय दीप्ताय अग्नये मिहिराय च॥

आदिदेव, रश्मिमाली, दिवाकर, दीप्त, अग्नि तथा मिहिर नामक भगवान् आदित्यको मेरा नमस्कार है।

प्रभाकराय मित्राय नमस्तेऽदितिसम्भव।
नमो गोपतये नित्यं दिशां च पतये नमः॥

हे अदितिके पुत्र भगवान् सूर्य! आप प्रभाकर, मित्र, गोपति (किरणोंके स्वामी) तथा दिक्पति नामवाले हैं, आपको मेरा नित्य नमस्कार है।

नमो धात्रे विधात्रे च अर्यम्णे वरुणाय च।
पूष्णे भगाय मित्राय पर्जन्यायांशवे नमः॥

धाता, विधाता, अर्यमा, वरुण, पूषा, भग, मित्र, पर्जन्य, अंशुमान् नामवाले भगवान् सूर्यको मेरा प्रणाम है।

नमो हितकृते नित्यं धर्माय तपनाय च।
हरये हरिताश्वाय विश्वस्य पतये नमः॥

हितकृत् (संसारका कल्याण करनेवाले), धर्म, तपन, हरि, हरिताश्व (हरे रंगके अश्वोंवाले), विश्वपति भगवान् सूर्यको नित्य मेरा नमस्कार है।

विष्णवे ब्रह्मणे नित्यं त्र्यम्बकाय तथात्मने।
नमस्ते सप्तलोकेश नमस्ते सप्तसप्तये॥

विष्णु, ब्रह्मा, त्र्यम्बक (शिव), आत्मस्वरूप, सप्तसप्ति, हे सप्तलोकेश! आपको मेरा नमस्कार है।

एकस्मै हि नमस्तुभ्यमेकचक्ररथाय च।
ज्योतिषां पतये नित्यं सर्वप्राणभृते नमः॥

अद्वितीय, एकचक्ररथ (जिनके रथमें एक ही चक्र है), ज्योतिष्पति, हे सर्वप्राणभृत्! (सभी प्राणियोंका भरण-पोषण करनेवाले) आपको मेरा नित्य नमस्कार है।

हिताय सर्वभूतानां शिवायार्तिहराय च।
नमः पद्मप्रबोधाय नमो वेदादिमूर्तये॥

समस्त प्राणिजगत्का हित करनेवाले, शिव (कल्याणकारी) और आर्तिहर (दुःखविनाशी), पद्मप्रबोध (कमलोंको विकसित करनेवाले), वेदादिमूर्ति भगवान् सूर्यको नमस्कार है।

काधिजाय नमस्तुभ्यं नमस्तारासुताय च।
भीमजाय नमस्तुभ्यं पावकाय च वै नमः॥

प्रजापतियोंके स्वामी महर्षि कश्यपके पुत्र! आपको नमस्कार है। भीमपुत्र तथा पावक नामवाले तारासुत! आपको नमस्कार है, नमस्कार है।

धिषणाय नमो नित्यं नमः कृष्णाय नित्यदा।
नमोऽस्त्वदितिपुत्राय नमो लक्ष्याय नित्यशः॥

धिषण, कृष्ण, अदितिपुत्र तथा लक्ष्य नामवाले भगवान् सूर्यको बार-बार नमस्कार है।

ब्रह्माजीने कहा—याज्ञवल्क्य! जो मनुष्य सायंकाल और प्रातःकाल इन नामोंका पवित्र होकर पाठ करता है, वह मेरे समान ही मनोवाञ्छित फलोंको प्राप्त करता है। इस नाम-स्तोत्रसे सूर्यकी आराधना करनेपर उनके अनुग्रहसे धर्म, अर्थ, काम, आरोग्य, राज्य तथा विजयकी प्राप्ति होती है। यदि मनुष्य बन्धनमें हो तो इसके पाठसे बन्धनमुक्त हो जाता है। इसके जप करनेसे सभी पापोंसे छुटकारा मिल जाता है। यह जो सूर्यस्तोत्र मैंने कहा है, वह अत्यन्त रहस्यमय है।

(अध्याय ७१)

जम्बूद्वीपमें सूर्यनारायणकी आराधनाके तीन प्रमुख स्थान, दुर्वासा मुनिका साम्बको शाप देना

सुमन्तु मुनि बोले—राजन्! ब्रह्माजीसे इस प्रकार उपदेश प्राप्तकर याज्ञवल्क्य मुनिने सूर्यभगवान्की आराधना की, जिसके प्रभावसे उन्हें सालोक्य-मुक्ति प्राप्त हुई। अतः भगवान् सूर्यकी उपासना करके आप भी उस देवदुर्लभ मोक्षको प्राप्त कर सकेंगे।

राजा शतानीकने पूछा—मुने! जम्बूद्वीपमें भगवान् सूर्यदेवका आदि स्थान कहाँ है? जहाँ विधिपूर्वक आराधना करनेसे शीघ्र ही मनोवाञ्छित फलकी प्राप्ति हो सके।

सुमन्तु मुनिने कहा—राजन्! इस जम्बूद्वीपमें भगवान् सूर्यनारायणके मुख्य तीन स्थान हैं[१]। प्रथम इन्द्रवन है, दूसरा मुण्डीर तथा तीसरा तीनों लोकोंमें प्रसिद्ध कालप्रिय (कालपी) नामक स्थान है। इस द्वीपमें इन तीनोंके अतिरिक्त एक अन्य स्थान भी ब्रह्माजीने बतलाया है, जो चन्द्रभागा नदीके तटपर अवस्थित है, जिसको साम्बपुर भी कहा जाता है, वहाँ भगवान् सूर्यनारायण साम्बकी भक्तिसे प्रसन्न होकर लोककल्याणके लिये अपने द्वादश रूपोंमेंसे मित्ररूपमें निवास करते हैं। जो भक्तिपूर्वक उनका पूजन करता है, उसको वे स्वीकार करते हैं।

राजा शतानीकने पुनः पूछा—महामुने! साम्ब कौन है? किसका पुत्र है? भगवान् सूर्यने उसके ऊपर अपनी कृपा क्यों की? यह भी आप बतानेकी कृपा करें।

सुमन्तु मुनिने कहा—राजन्! संसारमें द्वादश आदित्य प्रसिद्ध हैं, उनमेंसे विष्णु नामके जो आदित्य हैं, वे इस जगत्में वासुदेव श्रीकृष्णरूपमें अवतीर्ण हुए। उनकी जाम्बवती नामकी पत्नीसे महाबलशाली साम्ब नामक पुत्र हुआ। वह शापवश कुष्ठरोगसे ग्रस्त हो गया। उससे मुक्त होनेके लिये उसने भगवान् सूर्यनारायणकी आराधना की और उसीने अपने नामसे साम्बपुर[२] नामक एक नगर बसाया तथा यहींपर भगवान् सूर्यनारायणकी प्रथम प्रतिमा प्रतिष्ठापित की।

राजा शतानीकने पूछा—महाराज! साम्बके द्वारा ऐसा कौन-सा अपराध हुआ था, जिससे उसे इतना कठोर शाप मिला। थोड़ेसे अपराधपर तो शाप नहीं मिलता।

सुमन्तु मुनिने कहा—राजन्! इस वृत्तान्तका वर्णन हम संक्षेपमें कर रहे हैं, आप सावधान होकर सुनें। एक समय रुद्रके अवतारभूत दुर्वासा मुनि तीनों लोकोंमें विचरण करते हुए द्वारकापुरीमें आये, परंतु पीले-पीले नेत्रोंसे युक्त कृश-शरीर, अत्यन्त विकृत रूपवाले दुर्वासाको देखकर साम्ब अपने सुन्दर स्वरूपके अहंकारमें आकर उनके देखने, चलने आदि चेष्टाओंकी नकल करने लगे। उनके मुखके समान अपना ही विकृत मुख बनाकर उन्हींकी भाँति चलने लगे। यह देखकर और 'साम्बको रूप तथा यौवनका अत्यन्त अभिमान है' यह समझकर दुर्वासा मुनिको अत्यधिक क्रोध हो आया। वे क्रोधसे काँपते हुए यह कह उठे—'साम्ब! मुझे कुरूप और अपनेको अति रूपसम्पन्न मानकर तूने मेरा परिहास किया है। जा, तू शीघ्र ही कुष्ठरोगसे ग्रस्त हो जायगा।'

ऐसे ही एक बार पुनः परिहास किये जानेके कारण दुर्वासा मुनिको फिर शाप देना पड़ा और उसी शापके फलस्वरूप साम्बसे लोहेका एक मूसल उत्पन्न हुआ, जो समस्त यदुवंशियोंके विनाशका कारण बना।

अतः देवता, गुरु और ब्राह्मण आदिकी अवज्ञा बुद्धिमान् पुरुषको कभी नहीं करनी चाहिये। इन लोगोंके समक्ष सदैव विनम्र ही बना रहना चाहिये और सदा मधुर वाणी ही बोलनी चाहिये। राजन्! ब्रह्माजीने भगवान् शिवके समक्ष जो दो श्लोक पढ़े थे, क्या उनको आपने सुना नहीं है?

यो धर्मशीलो जितमानरोषो विद्याविनीतो न परोपतापी।
स्वदारतुष्टः परदारवर्जितो न तस्य लोके भयमस्ति किंचित्॥

१-इन तीनों स्थानोंकी विशेष जानकारीके लिये 'कल्याण' के ५३ वें वर्षके विशेषाङ्क 'सूर्याङ्क' का 'तीन प्रसिद्ध सूर्य-मन्दिर' नामक अन्तिम लेख देखना चाहिये।

२-यही नगर आगे चलकर 'मूलस्थान' पुनः मुसलिम शासनमें 'मुल्तान' नामसे प्रसिद्ध हुआ, जो आज पाकिस्तानमें लाहौरके पश्चिम भागमें स्थित है।

न तथा शशी न सलिलं न चन्दनं नैव शीतलच्छाया।
प्रह्लादयति पुरुषं यथा हिता मधुरभाषिणी वाणी॥

(ब्राह्मपर्व ७३। ४७-४८)

'जो धर्मात्मा है तथा जिसने सम्मान एवं क्रोधपर विजय प्राप्त कर ली है, विद्यासे युक्त और विनम्र है, दूसरेको संताप नहीं देता, अपनी स्त्रीसे संतुष्ट है तथा परायी स्त्रीका परित्याग करनेवाला है, ऐसे मनुष्यके लिये संसारमें किंचिन्मात्र भी भय नहीं है।'

'पुरुषको चन्द्रमा, जल, चन्दन और शीतल छाया वैसा आनन्दित नहीं कर पाते हैं, जैसा आनन्द उसे हितकारी मधुर वाणी सुननेसे प्राप्त होता है।'

राजन्! इस प्रकार दुर्वासा मुनिके शापसे साम्बको कुष्ठरोग हुआ था। तदनन्तर उसने भगवान् सूर्यनारायणकी आराधना करके पुनः अपने सुन्दर रूप तथा आरोग्यको प्राप्त किया और अपने नामका साम्बपुर नामक एक नगर बसाकर उसमें भगवान् सूर्यको प्रतिष्ठापित किया।

(अध्याय ७२-७३)

सूर्यनारायणकी द्वादश मूर्तियोंका वर्णन

राजा शतानीकने कहा—महामुने! साम्बके द्वारा चन्द्रभागा नदीके तटपर सूर्यनारायणकी जो स्थापना की गयी है, वह स्थान आदिकालसे तो नहीं है, फिर भी आप उस स्थानके माहात्म्यका इतना वर्णन कैसे कर रहे हैं? इसमें मुझे संदेह है।

सुमन्तु मुनि बोले—भारत! वहाँपर सूर्यनारायणका स्थान तो सनातनकालसे है। साम्बने उस स्थानकी प्रतिष्ठा तो बादमें की है। इसका हम संक्षेपमें वर्णन करते हैं। आप प्रेमपूर्वक उसे सुनें—

इस स्थानपर परमब्रह्मस्वरूप जगत्स्वामी भगवान् सूर्यनारायणने अपने मित्ररूपमें तप किया है। वे ही अव्यक्त परमात्मा भगवान् सूर्य सभी देवताओं और प्रजाओंकी सृष्टि करके स्वयं बारह रूप धारण कर अदितिके गर्भसे उत्पन्न हुए। इसीसे उनका नाम आदित्य पड़ा। इन्द्र, धाता, पर्जन्य, पूषा, त्वष्टा, अर्यमा, भग, विवस्वान्, अंशु, विष्णु, वरुण तथा मित्र—ये सूर्यभगवान्की द्वादश मूर्तियाँ हैं। इन सबसे सम्पूर्ण जगत् व्याप्त है। इनमेंसे प्रथम इन्द्र नामक मूर्ति देवराजमें स्थित है, जो सभी दैत्यों और दानवोंका संहार करती है। दूसरी धाता नामक मूर्ति प्रजापतिमें स्थित होकर सृष्टिकी रचना करती है। तीसरी पर्जन्य नामक मूर्ति किरणोंमें स्थित होकर अमृतवर्षा करती है। पूषा नामक चौथी मूर्ति मन्त्रोंमें अवस्थित होकर प्रजापोषणका कार्य करती है। पाँचवीं त्वष्टा नामकी जो मूर्ति है, वह वनस्पतियों और ओषधियोंमें स्थित है। छठी मूर्ति अर्यमा प्रजाकी रक्षा करनेके लिये पुरोंमें स्थित है। सातवीं भग नामक मूर्ति पृथ्वी और पर्वतोंमें विद्यमान है। आठवीं विवस्वान् नामक मूर्ति अग्निमें स्थित है और वह प्राणियोंके भक्षण किये हुए अन्नको पचाती है। नवीं अंशु नामक मूर्ति चन्द्रमामें अवस्थित है, जो जगत्को आप्यायित करती है। दसवीं विष्णु नामक मूर्ति दैत्योंका नाश करनेके लिये सदैव अवतार धारण करती है। ग्यारहवीं वरुण नामकी मूर्ति समस्त जगत्की जीवनदायिनी है और समुद्रमें उसका निवास है। इसीलिये समुद्रको वरुणालय भी कहा जाता है। बारहवीं मित्र नामक मूर्ति जगत्का कल्याण करनेके लिये चन्द्रभागा नदीके तटपर विराजमान है। यहाँ सूर्यनारायणने मात्र वायु-पान करके तप किया है और मित्ररूपसे यहाँपर अवस्थित हैं, इसलिये इस स्थानको मित्रपद (मित्रवन) भी कहते हैं। ये

अपनी कृपामयी दृष्टिसे संसारपर अनुग्रह करते हुए भक्तोंको भाँति-भाँतिके वर देकर संतुष्ट करते रहते हैं। यह स्थान पुण्यप्रद है। महाबाहो! यहींपर अमित तेजस्वी साम्बने सूर्यनारायणकी आराधना करके मनोवाञ्छित फल प्राप्त किया है। उनकी प्रसन्नता और आदेशसे साम्बने यहाँ भगवान् सूर्यको प्रतिष्ठापित किया। जो पुरुष भक्तिपूर्वक सूर्यनारायणको प्रणाम करता है और श्रद्धा-भक्तिसे उनकी आराधना करता है, वह सम्पूर्ण पापोंसे मुक्त होकर सूर्यलोकमें निवास करता है। (अध्याय ७४)

देवर्षि नारदद्वारा सूर्यके विराट्रूप तथा उनके प्रभावका वर्णन

सुमन्तुजी बोले—राजन्! भयंकर कुष्ठरोगका शाप प्राप्तकर दुःखित हो साम्बने अपने पिता भगवान् श्रीकृष्णसे पूछा—तात! मेरा यह कष्ट कैसे दूर होगा? कृपाकर इसका उपाय आप बतायें।

भगवान् श्रीकृष्णने कहा—वत्स! तुम भगवान् सूर्यकी आराधना करो, उससे तुम्हारा यह कुष्ठरोग दूर हो जायगा। तुम देवर्षि नारदद्वारा सूर्यनारायणके आराधना-विधानकी शिक्षा प्राप्त करो। वे प्रसन्न होकर तुम्हें विस्तारसे उनकी आराधनाका विधान बतलायेंगे।

एक दिन नारदजी द्वारकापुरीमें भगवान् श्रीकृष्णका दर्शन करनेके लिये आये। उसी समय साम्बने अत्यन्त विनम्रभावसे जाकर उन्हें प्रणाम किया और हाथ जोड़कर प्रार्थना की। महामुने! मैं आपकी शरण हूँ, आप मेरे ऊपर कृपाकर कोई ऐसा उपाय बतायें, जिससे मेरा शरीर कुष्ठरोगसे मुक्त हो सके और मेरा कष्ट दूर हो जाय।

नारदजीने कहा—साम्ब! सभी देव जिनकी स्तुति करते हैं, उन्हींका तुम भी पूजन करो। उन्हींकी कृपासे तुम रोगसे मुक्त हो जाओगे।

साम्बने पूछा—महाराज! देवगण किसका पूजन और स्तवन करते हैं? आप ही उसे भी बतायें, जिससे मैं उनकी शरणमें जा सकूँ। यह शापाग्नि मुझे दग्ध कर रही है। ऐसे कौन देवता हैं, जो कृपा करके मुझे इस विपत्तिसे मुक्त करा सकेंगे?

नारदजीने कहा—पुत्र! समस्त देवताओंके पूज्य, नमस्कार करने योग्य और निरन्तर स्तुत्य भगवान् सूर्यनारायण ही हैं। तुम उनके प्रभावको सुनो—

किसी समय समस्त लोकोंमें विचरण करता हुआ मैं सूर्यलोकमें पहुँचा। वहाँ मैंने देखा कि देवता, गन्धर्व, नाग, यक्ष, राक्षस और अप्सराएँ सूर्यनारायणकी सेवामें लगे हुए हैं। गन्धर्व गीत गा रहे हैं और अप्सराएँ नृत्य कर रही हैं। राक्षस-यक्ष तथा नाग शस्त्र धारण करके उनकी रक्षाके लिये खड़े हैं। ऋग्वेद, यजुर्वेद एवं सामवेद मूर्तिमान् स्वरूप धारण कर स्वयं स्तुति कर रहे हैं और ऋषिगण भी वेदोंकी ऋचाओंसे उनका स्तवन कर रहे हैं। मूर्तिरूपमें प्रातः, मध्याह्न और सायंकालकी तीनों सुन्दर रूपवाली संध्याएँ हाथमें वज्र तथा बाण धारण किये हुए सूर्यनारायणके चारों ओर स्थित हैं। प्रातः-संध्या रक्तवर्णकी है, मध्याह्न-संध्या चन्द्रमाके समान श्वेतवर्णकी एवं सायं-संध्या मंगलके समान वर्णवाली है। आदित्य, वसु, रुद्र, मरुत् तथा अश्विनीकुमार आदि सभी देवगण तीनों संध्याओंमें उन भगवान् सूर्यका पूजन करते हैं। इन्द्र सदैव वहाँ खड़े होकर भगवान् सूर्यकी जय-जयकार करते रहते हैं। गरुड़का ज्येष्ठ भ्राता अरुण उनका सारथि है। वह कालके अवयवोंसे निर्मित उनके रथका संचालक है। हरे वर्णके छन्दरूप सात अश्व उनके रथमें जुते हुए हैं। राज्ञी तथा निक्षुभा नामकी दो पत्नियाँ उनके दोनों ओर बैठी हुई हैं। सभी देवता हाथ जोड़कर

चारों ओर खड़े हैं। पिंगल, लेखक, दण्डनायक आदि गण तथा कल्माष नामक दो पक्षी द्वारपालके रूपमें उनकी सेवामें लगे हुए हैं। दिण्डी उनके सामने तथा ब्रह्मा आदि सभी देवता उनकी स्तुति कर रहे हैं।

भगवान् सूर्यनारायणका ऐसा प्रभाव देखकर मैंने सोचा कि यही देव हैं, जो समस्त देवताओंके पूज्य हैं। साम्ब! तुम उन्हींकी शरणमें जाओ।

साम्बने पूछा—महाराज! मैं भलीभाँति यह जानना चाहता हूँ कि सूर्यनारायण सर्वगत कैसे हैं? उनकी कितनी रश्मियाँ हैं? कितनी मूर्तियाँ हैं? राज्ञी तथा निक्षुभा नामकी ये दोनों भार्याएँ कौन हैं? पिंगल, लेखक और दण्डनायक वहाँ क्या कार्य करते हैं? कल्माष पक्षी कौन हैं? उनके आगे स्थित रहनेवाला दिण्डी कौन है? और वे कौन-कौन देवता हैं, जो उनके चतुर्दिक् खड़े रहते हैं? आप इन सबका तत्त्वतः अच्छी तरहसे वर्णन करें, जिससे मैं भी सूर्यनारायणके प्रभावको जानकर उनकी शरणमें जा सकूँ।

नारदजीने कहा—साम्ब! अब मैं सूर्यनारायणके माहात्म्यका वर्णन कर रहा हूँ। तुम उसे प्रेमपूर्वक सुनो—

विवस्वान् देव अव्यक्त कारण, नित्य, सत् एवं असत्-स्वरूप हैं। जो तत्त्वचिन्तक पुरुष हैं, वे उनको प्रधान और प्रकृति कहा करते हैं। वे गन्ध, वर्ण तथा रससे हीन एवं शब्द और स्पर्शसे रहित हैं। वे जगत्की योनि हैं तथा सनातन परब्रह्म हैं। वे सभी प्राणियोंके नियन्ता हैं। वे अनादि, अनन्त, अज, सूक्ष्म, त्रिगुण, निराकार तथा अविज्ञेय हैं, उन्हें परमपुरुष कहा जाता है। उन्हीं महात्मा भगवान् सूर्यसे यह सब जगत् परिव्याप्त है। उन परमेश्वरकी प्रतिमा ज्ञान एवं वैराग्य-लक्षणोंवाली है। उनकी बुद्धि धर्म एवं ऐश्वर्यको प्रदान करनेवाली ब्राह्मी बुद्धि कही जाती है। उन अव्यक्तकी जो भी इच्छा होती है, वही सब उत्पन्न होता है। वे ही सृष्टिके समय चतुर्मुख ब्रह्मा बन जाते हैं और प्रलयके समय कालरूप हो जाते हैं। पालनके समय वे ही पुरुष विष्णुरूप ग्रहण कर लेते हैं। स्वयम्भू पुरुषकी ये तीनों अवस्थाएँ उनके तीन गुणोंके अनुसार हैं। वे आदिदेव होनेके कारण आदित्य तथा अजात होनेके कारण अज कहे गये हैं। देवताओंमें महान् होनेसे वे महादेव कहे गये हैं। समस्त लोकोंके ईश होने तथा अधीश होनेके कारण वे ईश्वर कहे गये हैं। बृहत् होनेसे ब्रह्मा तथा भवत्व होनेसे भव कहे जाते हैं। वे समस्त प्रजाओंकी रक्षा और पालन करते हैं, इसलिये प्रजापति कहे गये हैं। पुर्में शयन करनेसे 'पुरुष,' उत्पाद्य न होने और अपूर्व होनेसे 'स्वयम्भू' नामसे प्रसिद्ध हैं। हिरण्याण्डमें रहनेके कारण ये हिरण्यगर्भ कहे जाते हैं। ये दिशाओंके स्वामी, ग्रहोंके ईश, देवताओंके भी देवता होनेसे देवदेव तथा दिवाकर भी कहे जाते हैं। तत्त्वद्रष्टा ऋषियोंने अप्को नार कहा है, यह अप् इनका आश्रय है, इसीलिये 'आप' नारायण कहे गये हैं। 'अर' यह शीघ्रतावाचक शब्द है। 'आप' ही समुद्ररूप धारण करनेपर फिर उसमें शीघ्रता नहीं रहती, इसीके कारण उसे नार कहते हैं। प्रलयकालमें सभी स्थावर-जंगम नष्ट हो जाते हैं। जब सम्पूर्ण जगत् समुद्रके समान एकाकार हो जाता है, तब वे पुरुष नारायणरूप धारण करके उस समुद्रमें शयन करते हैं। वे पुरुष वेदोंमें सहस्रों सिरों, सहस्रों भुजाओं, सहस्रों नेत्रों तथा सहस्रों चरणोंवाले कहे गये हैं। वे ही देवताओंमें प्रथम देवता तथा जगत्की रक्षा करनेवाले हैं।

नारदजीने पुनः कहा—साम्ब! सहस्रयुगके समान अपनी रात्रि बिताकर प्रभात होते ही उन

पुरुषने जब सृष्टि रचनेकी इच्छा की, तब उन्होंने देखा कि सम्पूर्ण पृथ्वी जलमें डूबी हुई है। तदनन्तर उन्होंने वराहरूप धारण करके महासागरके जलमें निमग्न पृथ्वीका उद्धार किया। उस समय उनका वेदमय शरीर कम्पित हो उठा और रोमोंमें स्थित महर्षिगण उनकी स्तुति करने लगे। पुनः ब्रह्माका रूप धारण करके वे सृष्टिकी रचना करने लगे। उन्होंने सर्वप्रथम अपने ही समान अपने मनसे मुझ-सहित श्रेष्ठ दस मानसपुत्रोंको उत्पन्न किया। जिनके नाम हैं—भृगु, अंगिरा, अत्रि, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु, मरीचि, दक्ष एवं वसिष्ठ—इन प्रजापतियोंकी सृष्टि करनेके बाद प्रजाओंकी हित-कामनासे वे ही सूर्यनारायण देवी अदितिके पुत्र-रूपमें स्वयं प्रादुर्भूत हुए। मरीचिके पुत्र कश्यप हुए। दक्षकी कन्या अदितिका विवाह महर्षि कश्यपके साथ हुआ। उसने '**भूर्भुवः स्वः**' से संयुक्त एक अण्ड उत्पन्न किया, जिससे द्वादशात्मा भगवान् सूर्य प्रकट हुए। इस सूर्यमण्डलका व्यास नौ हजार योजन है। सत्ताईस हजार योजन उसकी परिधि है। जिस प्रकार कदम्बका पुष्प चारों ओर केसरोंसे व्याप्त रहता है, उसी प्रकार सूर्यमण्डल अपनी किरणोंसे परिव्याप्त रहता है। वह सहस्रों सिरवाला पुरुष जिसको परमात्मा कहते हैं, इस तेजोमय मण्डलके मध्य स्थित है। वह अपनी सहस्र किरणोंद्वारा नदी, समुद्र, ह्रद, कूप आदिसे जलको ग्रहण कर लेता है। सूर्यकी प्रभा (तेज) रात्रिके समय अग्निमें प्रवेश कर जाती है, इसीलिये रात्रिमें अग्नि दूरसे ही दिखायी देने लगती है। सूर्योदयके समय वही प्रभा पुनः सूर्यमें प्रविष्ट हो जाती है। प्रकाशत्व और उष्णत्व—ये दोनों गुण सूर्यमें तथा अग्निमें भी हैं। इस प्रकार सूर्य और अग्नि एक-दूसरेको आप्यायित किया करते हैं।

साम्ब! हेति, किरण, गौ, रश्मि, गभस्ति, अभीषु, घन, उस्र, वसु, मरीचि, नाडी, दीधिति, साध्य, मयूख, भानु, अंशु, सप्तार्चि, सुपर्ण, कर तथा पाद—ये बीस भगवान् सूर्यकी किरणोंके नाम कहे गये हैं, जो संख्यामें एक हजार हैं। इनमेंसे चार सौ किरणें वृष्टि करती हैं, जिनका नाम चन्दन है। इन किरणोंका स्वरूप अमृतमय है। तीन सौ किरणें हिमको वहन करती हैं। उनका नाम चन्द्र है और वर्ण पीत है। शेष तीन सौ शुक्ल नामवाली किरणें धूपकी सृष्टि करती हैं, ये सभी किरणें ओषधियों, स्वधा तथा अमृतके रूपमें मनुष्यों, पितरों तथा देवताओंको सदा संतृप्त करती रहती हैं। ये द्वादशात्मा कालस्वरूप सूर्यदेव तीनों लोकोंमें अपने तेजसे तपते रहते हैं। ये ही ब्रह्मा-विष्णु तथा शिव हैं। ऋक्, यजुः एवं साम—ये तीनों वेद भी ये ही हैं। प्रातःकालमें ऋग्वेद, मध्याह्नकालमें यजुर्वेद तथा संध्याकालमें सामवेद इनकी स्तुति करते हैं। ब्रह्मा, विष्णु तथा शिवके द्वारा इनका पूजन नित्य होता रहता है। जिस प्रकार वायु सर्वगत है, उसी प्रकार सूर्यकी किरणें भी सर्वव्याप्त हैं। तीन सौ किरणोंके द्वारा भूर्लोक प्रकाशित होता रहता है। इसके पश्चात् जो शेष किरणें हैं, वे तीन-तीन सौकी संख्यामें शेष अन्य दोनों लोकों (भुवर्लोक और स्वर्लोक)-को प्रकाशित करती हैं। एक सौ किरणोंसे पाताल प्रकाशित होता है। ये नक्षत्र, ग्रह तथा चन्द्रमादि ग्रहोंके अधिष्ठान हैं। चन्द्रमा, ग्रह, नक्षत्र तथा तारागणोंमें सूर्यनारायणका ही प्रकाश है। इनकी एक सहस्र किरणोंमें ग्रहसंज्ञक सात किरणें मुख्य हैं, जिन्हें सुषुम्णा, हरिकेश, विश्वकर्मा, सूर्य, रश्मि, विष्णु, और सर्वबन्धु कहा जाता है।

सम्पूर्ण जगत्के मूल भगवान् आदित्य ही हैं। इन्द्र आदि देवता इन्हींसे उत्पन्न हुए हैं। देवताओं तथा जगत्का सम्पूर्ण तेज इन्हींका है।

अग्निमें दी गयी आहुति सूर्यनारायणको ही प्राप्त होती है। इसलिये आदित्यसे ही वृष्टि उत्पन्न होती है। वृष्टिसे अन्न उत्पन्न होता है तथा अन्नसे प्रजाका पालन होता है। ध्यान करनेवाले लोगोंके लिये ध्यानरूप और मोक्ष प्राप्त करनेकी इच्छासे आराधना करनेवाले लोगोंके लिये ये मोक्षस्वरूप हैं। क्षण, मुहूर्त, दिन, पक्ष, मास, ऋतु, अयन, संवत्सर तथा युगकी कल्पना सूर्यनारायणके बिना सम्भव नहीं है। काल-नियमके बिना अग्निहोत्रादि कर्म नहीं हो सकते। ऋतु-विभागके बिना पुष्प-फल तथा मूलकी उत्पत्ति सम्भव नहीं है। उनके न रहनेसे तो जगत्के सम्पूर्ण व्यवहार ही नष्ट हो जाते हैं। सूर्यनारायणके सामान्य द्वादश नाम इस प्रकार हैं—आदित्य, सविता, सूर्य, मिहिर, अर्क, प्रतापन, मार्तण्ड, भास्कर, भानु, चित्रभानु, दिवाकर और रवि। विष्णु, धाता, भग, पूषा, मित्र, इन्द्र, वरुण, अर्यमा, विवस्वान्, अंशुमान्, त्वष्टा तथा पर्जन्य—ये द्वादश आदित्य हैं। चैत्रादि बारह महीनोंमें ये द्वादश आदित्य उदित रहते हैं। चैत्रमें विष्णु, वैशाखमें अर्यमा, ज्येष्ठमें विवस्वान्, आषाढ़में अंशुमान्, श्रावणमें पर्जन्य, भाद्रपदमें वरुण, आश्विनमें इन्द्र, कार्तिकमें धाता, मार्गशीर्षमें मित्र, पौषमें पूषा, माघमें भग और फाल्गुनमें त्वष्टा नामके आदित्य तपते हैं।

उत्तरायणमें सूर्य-किरणें वृद्धिको प्राप्त करती हैं और दक्षिणायनमें वह किरण-वृद्धि घटने लगती है। इस प्रकार सूर्य-किरणें लोकोपकारमें प्रवृत्त रहती हैं। जैसे स्फटिकमें विभिन्न रंगोंके प्रविष्ट होनेसे वह अनेक वर्णका दिखायी देता है, जैसे एक ही मेघ आकाशमें अनेक रूपोंका हो जाता है तथा गुण-विशेषसे जैसे आकाशसे गिरा हुआ जल भूमिके रस-वैशिष्ट्यसे अनेक स्वाद और गुणवाला हो जाता है, जिस प्रकार एक ही अग्नि ईंधन-भेदके कारण अनेक रूपोंमें विभक्त हो जाती है, जैसे वायु पदार्थोंके संयोगसे सुगन्धित और दुर्गन्धयुक्त हो जाती है, जैसे गृह्याग्निके भी अनेक नाम हो जाते हैं, उसी प्रकार एक सूर्यनारायण ही ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव आदि अनेक रूप धारण करते हैं, इसलिये इनकी ही भक्ति करनी चाहिये। इस प्रकार जो सूर्यनारायणको जानता है, वह रोग तथा पापोंसे शीघ्र ही मुक्त हो जाता है।

पापी पुरुषकी सूर्यनारायणके प्रति भक्ति नहीं होती। इसलिये साम्ब! तुम सूर्यनारायणकी आराधना करो, जिससे तुम इस भयंकर व्याधिसे मुक्त होकर सभी कामनाओंको प्राप्त कर लोगे।

(अध्याय ७५—७८)

भगवान् सूर्यका परिवार

सुमन्तु मुनि बोले—राजन्! साम्बने नारदजीसे पुनः कहा—महामुने! आपने भगवान् सूर्यनारायणके अत्यन्त आनन्दप्रद माहात्म्यका वर्णन किया, जिससे मेरे हृदयमें उनके प्रति दृढ़ भक्ति उत्पन्न हो गयी। अब आप भगवान् सूर्यनारायणकी पत्नी महाभागा राज्ञी एवं निक्षुभा तथा दिण्डी और पिंगल आदिके विषयमें बतायें।

नारदजीने कहा—साम्ब! भगवान् सूर्यनारायणकी राज्ञी और निक्षुभा नामकी दो पत्नियाँ हैं। इनमेंसे राज्ञीको द्यौ अर्थात् स्वर्ग और निक्षुभाको पृथ्वी भी कहा जाता है। पौष शुक्ल सप्तमी तिथिको द्यौके साथ और माघ कृष्णपक्षकी सप्तमी तिथिको निक्षुभा (पृथ्वी)-के साथ सूर्यनारायणका संयोग होता है। जिससे राज्ञी—द्यौसे जल और निक्षुभा—पृथ्वीसे तीनों लोकोंके कल्याणके लिये अनेक प्रकारकी सस्य-सम्पत्तियाँ उत्पन्न होती हैं। सस्य

(अन्न)-को देखकर अत्यन्त प्रसन्नतासे ब्राह्मण हवन करते हैं। स्वाहाकार तथा स्वधाकारसे देवताओं और पितरोंकी तृप्ति होती है। जिस प्रकार राज्ञी अपने दो रूपोंमें हुई और ये जिनकी पुत्री हैं तथा इनकी जो संतानें हुईं उनका हम वर्णन करते हैं, इसे आप सुनें—

साम्ब! ब्रह्माके पुत्र मरीचि, मरीचिके कश्यप, कश्यपसे हिरण्यकशिपु, हिरण्यकशिपुसे प्रह्लाद, प्रह्लादसे विरोचन नामका पुत्र हुआ। विरोचनकी बहिनका विवाह विश्वकर्माके साथ हुआ, जिससे संज्ञा नामकी एक कन्या उत्पन्न हुई। मरीचिकी सुरूपा नामकी कन्याका विवाह अंगिरा ऋषिसे हुआ, जिससे बृहस्पति उत्पन्न हुए। बृहस्पतिकी ब्रह्मवादिनी बहिनने आठवें प्रभास नामक वसुसे पाणिग्रहण किया, जिसका पुत्र विश्वकर्मा समस्त शिल्पोंको जाननेवाला हुआ। उन्हींका नाम त्वष्टा भी है। जो देवताओंके बढ़ई हुए। इन्हींकी कन्या संज्ञाको राज्ञी कहा जाता है। इन्हींको द्यौ, त्वाष्ट्री, प्रभा तथा सुरेणु भी कहते हैं। इन्हीं संज्ञाकी छायाका नाम निक्षुभा है। सूर्यभगवान्‌की संज्ञा नामक भार्या बड़ी ही रूपवती और पतिव्रता थी। किंतु भगवान् सूर्यनारायण मानवरूपमें उसके समीप नहीं जाते थे और अत्यधिक तेजसे परिव्याप्त होनेके कारण सूर्यनारायणका वह स्वरूप सुन्दर मालूम नहीं होता था। अतः वह संज्ञाको भी अच्छा नहीं लगता था। संज्ञासे तीन संतानें उत्पन्न हुईं, किंतु सूर्यनारायणके तेजसे व्याकुल होकर वह अपने पिताके घर चली गयी और हजारों वर्षतक वहाँ रही। जब पिताने संज्ञासे पतिके घर जानेके लिये अनेक बार कहा, तब वह उत्तर कुरुदेशको चली गयी। वहाँ वह अश्विनीका रूप धारण करके तृण आदि चरती हुई समय बिताने लगी।

सूर्यभगवान्‌के समीप संज्ञाके रूपमें उसकी छाया निवास करती थी। सूर्य उसे संज्ञा ही समझते थे। इससे दो पुत्र हुए और एक कन्या हुई। श्रुतश्रवा तथा श्रुतकर्मा—ये दो पुत्र और अत्यन्त सुन्दर तपती नामकी कन्या छायाकी संतानें हैं। श्रुतश्रवा तो सावर्णि मनुके नामसे प्रसिद्ध होगा और श्रुतकर्माने शनैश्चर नामसे प्रसिद्धि प्राप्त की। संज्ञा जिस प्रकारसे अपनी संतानोंसे स्नेह करती थी, वैसा स्नेह छायाने नहीं किया। इस अपमानको संज्ञाके ज्येष्ठ पुत्र सावर्णि मनुने तो सहन कर लिया, किंतु उनके छोटे पुत्र यम (धर्मराज) सहन नहीं कर सके। छायाने जब बहुत ही क्लेश देना शुरू किया, तब क्रोधमें आकर बालपन तथा भावी प्रबलताके कारण उन्होंने अपनी विमाता छायाकी भर्त्सना की और उसे मारनेके लिये अपना पैर उठाया। यह देखकर क्रुद्ध विमाता छायाने उन्हें कठोर शाप दे दिया—'दुष्ट! तुम अपनी माँको पैरसे मारनेके लिये उद्यत हो रहे हो, इसलिये तुम्हारा यह पैर टूटकर गिर जाय।' छायाके शापसे विह्वल होकर यम अपने पिताके पास गये और उन्हें सारा वृत्तान्त कह सुनाया। पुत्रकी बातें सुनकर सूर्यनारायणने कहा—'पुत्र! इसमें कुछ विशेष कारण होगा, क्योंकि अत्यन्त धर्मात्मा तुझ-जैसे पुत्रके ऊपर माताको क्रोध आया है। सभी पापोंका तो निदान है, किंतु माताका शाप कभी अन्यथा नहीं हो सकता। पर मैं तुम्हारे ऊपर अधिक स्नेहके कारण एक उपाय कहता हूँ। यदि तुम्हारे पैरके मांसको लेकर कृमि भूमिपर चले जायँ तो इससे माताका शाप भी सत्य होगा और तुम्हारे पैरकी रक्षा भी हो जायगी।'

सुमन्तु मुनिने कहा—राजन्! इस प्रकार पुत्रको आश्वासन देकर सूर्यनारायण छायाके समीप जाकर बोले—'छाये! तुम इनसे स्नेह क्यों नहीं करती

हो? माताके लिये तो सभी संतानें समान ही होनी चाहिये।' यह सुनकर छायाने कोई उत्तर नहीं दिया, जिससे सूर्यनारायणको क्रोध आ गया और वे शाप देनेके लिये उद्यत हो गये। छाया भगवान् सूर्यको क्रुद्ध देखकर भयभीत हो गयी और उसने अपना सम्पूर्ण वृत्तान्त बतला दिया। तब सूर्य अपने ससुर विश्वकर्माके पास गये। अपने जामाता सूर्यको क्रुद्ध देखकर विश्वकर्माने उनका पूजन किया तथा मधुर वचनोंसे शान्त किया और कहा—'देव! मेरी पुत्री संज्ञा आपके अत्यन्त तेजको सहन न कर सकनेके कारण वनको चली गयी है और वह आपके उत्तम रूपके लिये वहाँपर महान् तपस्या कर रही है। ब्रह्माजीने मुझे आज्ञा दी है कि यदि उनकी अभिरुचि हो तो तुम संसारके कल्याणके लिये सूर्यको तराशकर उत्तम रूप बनाओ।' विश्वकर्माका यह वचन सूर्यनारायणने स्वीकार कर लिया और तब विश्वकर्माने शाकद्वीपमें सूर्यनारायणको भ्रमि (खराद)-पर चढ़ाकर उनके प्रचण्ड तेजको खराद डाला, जिससे उनका रूप बहुत कुछ सौम्य बन गया। सूर्यनारायणने भी अपने योगबलसे इस बातकी जानकारी की कि सम्पूर्ण प्राणियोंसे अदृश्य हमारी पत्नी संज्ञा अश्विनीके रूपको धारण करके उत्तरकुरुमें निवास कर रही है। अतः सूर्य भी स्वयं अश्वका रूप धारण करके उसके पास आकर मिले। फलतः कालान्तरमें अश्विनीसे देवताओंके वैद्य जुड़वाँ अश्विनीकुमारोंका जन्म हुआ। उनके नाम हैं नासत्य तथा दस्र। इसके पश्चात् सूर्यनारायणने अपना वास्तविक रूप धारण किया। उस रूपको देखकर संज्ञा अत्यन्त प्रीतिसे प्रसन्न हुई और वह उनके समीप गयी। तत्पश्चात् संज्ञासे 'रेवन्त' नामका पुत्र उत्पन्न हुआ, जो भगवान् सूर्यनारायणके समान ही सौन्दर्य-सम्पन्न था।

इस प्रकार सावर्णि मनु, यम, यमुना, शनि, तपती, दो अश्विनीकुमार, वैवस्वत मनु और रेवन्त—ये सब सूर्यनारायणकी संतानें हुईं। यमकी भगिनी यमी यमुना नदी बनकर प्रवाहित हुई। सावर्णि आठवें मनु होंगे। सावर्णि मनु मेरु पर्वतके पृष्ठप्रदेशपर तपस्या कर रहे हैं। सावर्णिके भ्राता शनि एक ग्रह बन गये और उनकी भगिनी तपती नदी बन गयी, जो विन्ध्यगिरिसे निकलकर पश्चिमी समुद्रमें जाकर मिलती है। इस नदीमें स्नान करनेसे बहुत ही पुण्य प्राप्त होता है। सौम्या नदीसे तपतीका संगम और गङ्गा नदीसे वैवस्वती—यमुनाका संगम होता है। दोनों अश्विनीकुमार देवताओंके वैद्य हैं, जिनकी विद्यासे ही वैद्यगण भूमिपर अपना जीवन-निर्वाह करते हैं। सूर्यनारायणने अपने समान रूपवाले रेवन्त नामक पुत्रको अश्वोंका स्वामी बनाया। जो मानव अपने गन्तव्य मार्गके लिये रेवन्तकी पूजा करके प्रस्थान करता है, उसे मार्गमें क्लेश नहीं होता। विश्वकर्माके द्वारा सूर्यनारायणको खरादपर चढ़ाकर जो तेज ग्रहण किया गया, उससे उन्होंने भगवान् सूर्यकी पूजा करनेके लिये भोजकोंको उत्पन्न किया। जो अमित तेजस्वी सूर्यनारायणकी संतानोत्पत्तिकी इस कथाको सुनता अथवा पढ़ता है, वह सभी पापोंसे मुक्त होकर सूर्यलोकमें दीर्घकालतक रहनेके पश्चात् पृथ्वीपर चक्रवर्ती राजा होता है। (अध्याय ७९)

सूर्यभगवान्‌को नमस्कार एवं प्रदक्षिणा करनेका फल और विजया-सप्तमी-व्रतकी विधि

देवर्षि नारदने कहा—सांम्ब! अब मैं आपको भगवान् सूर्यनारायणके पूजन, उनके निमित्त दिये गये दान तथा उनको किये गये प्रणाम एवं प्रदक्षिणाके फलके विषयमें दिण्डी और ब्रह्माजीका संवाद सुना रहा हूँ, आप ध्यानसे सुनें—

ब्रह्माजी बोले—दिण्डिन्! सूर्यभगवान्‌का पूजन, उनकी स्तुति, जप, प्रदक्षिणा तथा उपवास आदि करनेसे अभीष्ट फलकी प्राप्ति होती है। सूर्यनारायणको नम्र होकर प्रणाम करनेके लिये भूमिपर जैसे ही सिरका स्पर्श होता है, वैसे ही तत्काल सभी पातक नष्ट हो जाते हैं[१]। जो मनुष्य भक्तिपूर्वक सूर्यनारायणकी प्रदक्षिणा करता है, उसे सप्तद्वीपा वसुमतीकी प्रदक्षिणाका फल प्राप्त हो जाता है और वह समस्त रोगोंसे मुक्त होकर अन्त समयमें सूर्यलोकको प्राप्त करता है, किंतु प्रदक्षिणामें पवित्रताका ध्यान रखना आवश्यक है। अतएव जूता या खड़ाऊँ आदि पहनकर प्रदक्षिणा नहीं करनी चाहिये। जो मनुष्य जूता या खड़ाऊँ पहनकर सूर्य-मन्दिरमें प्रवेश करता है, वह असिपत्र-वन नामक घोर नरकमें जाता है। जो प्राणी षष्ठी या सप्तमीके दिन एकाहार अथवा उपवास रखकर भक्तिपूर्वक सूर्यनारायणका पूजन करता है, वह सूर्यलोकमें निवास करता है। कृष्ण पक्षकी सप्तमीको रक्त पुष्पोपचारोंसे और शुक्ल पक्षकी सप्तमीको श्वेत कमलपुष्प तथा मोदक आदि उपचारोंसे भगवान् सूर्यनारायणका पूजन करना चाहिये। ऐसा करनेसे व्रती सम्पूर्ण पापोंसे मुक्त हो सूर्यलोकको प्राप्त करता है।

दिण्डिन्! जया, विजया, जयन्ती, अपराजिता, महाजया, नन्दा तथा भद्रा नामकी ये सात प्रकारकी सप्तमियाँ कही गयी हैं। यदि शुक्ल पक्षकी सप्तमीको रविवार हो तो उसे विजया सप्तमी कहते हैं। उस दिन किया गया स्नान, दान, होम, उपवास, पूजन आदि सत्कर्म महापातकोंका विनाश करता है। इस विजया-सप्तमी-व्रतमें पञ्चमी तिथिको दिनमें एकभुक्त रहे, षष्ठी तिथिको नक्तव्रत करे और सप्तमीको पूर्ण उपवास करे, तदनन्तर अष्टमीके दिन व्रतकी पारणा करे। इस तिथिके दिन किया गया दान, हवन, देवता तथा पितरोंका पूजन अक्षय होता है।

(अध्याय ८०-८१)

द्वादश रविवारोंका वर्णन और नन्दादित्य-व्रतकी विधि

दिण्डीने ब्रह्माजीसे पूछा—ब्रह्मन्! जो मनुष्य आदित्यवारके दिन श्रद्धा-भक्तिसे सूर्यदेवका स्नान-दानादि कर पूजन करते हैं, उनको कौन-सा फल प्राप्त होता है? और जिस वारके संयोगसे सप्तमी तिथि विजया कहलाती है, उसके माहात्म्यका आप पुनः वर्णन करें।

ब्रह्माजीने कहा—दिण्डिन्! जो मनुष्य आदित्यवारको श्राद्ध करते हैं, वे सात जन्मतक नीरोग रहते हैं तथा जो नक्तव्रत एवं आदित्यहृदयका[२] पाठ करते हैं, वे रोगसे मुक्त हो जाते हैं और सूर्यलोकमें

१-प्रणिधाय शिरो भूमौ नमस्कारपरो रवेः। तत्क्षणात् सर्वपापेभ्यो मुच्यते नात्र संशयः॥ (ब्राह्मपर्व ८०। १०)

२-भविष्यपुराणके नामसे प्राप्त होनेवाले स्तोत्रोंमें 'श्रीआदित्यहृदय-स्तोत्र' का अत्यधिक प्रचार है और इसकी प्रसिद्धि प्राचीन कालमें भी इतनी अधिक थी कि महर्षि पराशरने सूर्यकी दशा-अन्तर्दशाओंमें शान्तिके लिये सर्वत्र इसी स्तोत्रके जपका निर्देश दिया है। यह स्तोत्र प्रायः दो सौ श्लोकोंमें उपनिबद्ध है। इसके पाठसे मनुष्य दुःख-दारिद्र्य तथा कुष्ठ आदि असाध्य रोगोंसे मुक्त होकर महासिद्धिको प्राप्त कर लेता है। इस स्तोत्रमें भगवान् सूर्यकी महिमा, अर्घ्यदानविधि आदिका सुन्दर वर्णन है। इसका मण्डलाष्टक बड़ा ही सुन्दर है। इसके पाठसे भगवान् सूर्यमें श्रद्धा उत्पन्न हो जाती है। सूर्योपासनामें इस 'आदित्यहृदय' का महत्त्वपूर्ण स्थान है।

निवास करते हैं। उपवास रखकर जो महाश्वेता मन्त्रका* जप करते हैं, वे मनोवाञ्छित फलको प्राप्त करते हैं। आदित्यवारके दिन महाश्वेता-मन्त्र तथा षडक्षर-मन्त्र '**ॐ खखोल्काय स्वाहा**' का जप करनेसे निःसंदेह सूर्यलोककी प्राप्ति होती है।

सूर्यनारायणके द्वादश वार इस प्रकार हैं—नन्द, भद्र, सौम्य, कामद, पुत्रद, जय, जयन्त, विजय, आदित्याभिमुख, हृदय, रोगहा एवं महाश्वेता-प्रिय। माघ शुक्लपक्षकी षष्ठीकी नन्दसंज्ञा है। उस दिन नक्तव्रत करके घृतसे सूर्यनारायणको स्नान कराना चाहिये तथा श्वेत चन्दन, अगस्त्यके पुष्प, गुग्गुल-धूप आदिसे पूजन करके अपूप आदिका नैवेद्य समर्पित करना चाहिये। ब्राह्मणको अपूप देकर स्वयं भी मौन धारण कर भोजन करना चाहिये। गेहूँके अथवा यवके चूर्णमें घृत तथा खाँड़ या शक्कर मिलाकर अपूप बनाना चाहिये और उसीका नैवेद्य सूर्यनारायणको निवेदित कर निम्न मन्त्र पढ़ते हुए ब्राह्मणको वह नैवेद्य दे देना चाहिये—

आदित्यतेजसोत्पन्नं राज्ञीकरविनिर्मितम्।
श्रेयसे मम विप्र त्वं प्रतीक्षापूपमुत्तमम्॥

(ब्राह्मपर्व ८२। १८)

ब्राह्मण नैवेद्य ग्रहण कर ले, तदनन्तर उस नैवेद्यको निम्न मन्त्र पढ़ते हुए पूजकको दे—

कामदं सुखदं धर्म्यं धनदं पुत्रदं तथा।
सदास्तु ते प्रतीच्छामि मण्डकं भास्करप्रियम्॥

(ब्राह्मपर्व ८२। १९)

उपर्युक्त दोनों मन्त्र ग्रहण करने और समर्पित करनेके लिये हैं। नन्दवारका यह विधान कल्याणकारी है। जो इस विधिसे सूर्यदेवकी पूजा करता है, उसे सूर्यलोककी प्राप्ति होती है। उसकी संततिका कभी क्षय नहीं होता अर्थात् उसकी कुल-परम्परा पृथ्वीपर चलती रहती है तथा उसके वंशमें दारिद्र्य एवं रोग भी नहीं होते। सूर्यलोक प्राप्त करनेके पश्चात् पुनर्जन्म होनेपर वह पृथ्वीका राजा होता है। इस पूजन-विधानको पढ़ने अथवा श्रवण करनेसे भी कल्याण होता है एवं दिव्य अचल लक्ष्मीकी प्राप्ति होती है। (अध्याय ८२)

भद्रादित्य, सौम्यादित्य और कामदादित्यवार-व्रतोंकी विधिका निरूपण

ब्रह्माजी बोले—दिण्डिन्! भाद्रपद मासके शुक्ल पक्षकी षष्ठी तिथिको जो वार हो उसका नाम भद्र है। उस दिन जो मनुष्य नक्तव्रत और उपवास करता है, वह हंसयुक्त विमानमें बैठकर सूर्यलोकको जाता है। उस दिन श्वेत चन्दन, मालती-पुष्प, विजय-धूप तथा खीरके नैवेद्यसे मध्याह्नकालमें सूर्यनारायणका पूजन करके ब्राह्मणको भोजन कराकर यथाशक्ति दक्षिणा देनी चाहिये।

दिण्डिन्! यदि रोहिणी नक्षत्रसे युक्त आदित्यवार हो तो उसे सौम्यवार कहा जाता है। उस दिन किये जानेवाले स्नान, दान, जप, होम, पितृ-देवादि तर्पण तथा पूजन आदि कृत्य अक्षय होते हैं।

मार्गशीर्षके शुक्ल पक्षकी षष्ठी तिथिको जो वार हो, वह कामदवार कहलाता है। यह वार भगवान् सूर्यको अत्यन्त प्रिय है। इस दिन जो

यह स्तोत्र वर्तमान उपलब्ध भविष्यपुराणमें प्राप्त नहीं होता, इससे यह उसका खिल-भाग प्रतीत होता है। नारदपुराणमें उपलब्ध भविष्यपुराणकी सूची भी वर्तमानमें उपलब्ध भविष्यपुराणमें नहीं मिलती। कालक्रमसे पुराणोंका प्राचीन रूप न रह जानेसे आज वह सब एकत्र उपलब्ध नहीं हो पाता, परंतु प्रायः सभी बड़े स्तोत्र-संग्रहोंमें यह 'आदित्यहृदय-स्तोत्र' संगृहीत है। वाल्मीकीय रामायणमें अगस्त्यमुनिप्रोक्त 'आदित्यहृदय-स्तोत्र' भविष्यपुराणके 'आदित्यहृदय-स्तोत्र' से भिन्न है।

* महाश्वेता-मन्त्र 'गायत्री-मन्त्र' का ही अपर पर्याय प्रतीत होता है।

भक्ति और श्रद्धासे सूर्यनारायणकी पूजा करता है, वह सभी पातकोंसे विमुक्त होकर सूर्यलोकमें निवास करता है। इस व्रतको करनेसे विद्यार्थीको विद्या, पुत्रेच्छुको पुत्र, धनार्थीको धन और आरोग्यके अभिलाषीको आरोग्यकी प्राप्ति होती है। इसी प्रकार कामदवार-व्रतसे और अन्य सभी कामनाएँ पूर्ण हो जाती हैं, इसीलिये इसका नाम कामद है।

(अध्याय ८३—८५)

पुत्रद, जय, जयन्तसंज्ञक आदित्यवार-व्रतोंकी विधि

ब्रह्माजी बोले—दिण्डिन्! जिस आदित्यवारको हस्त नक्षत्र हो उसे पुत्रद (आदित्य-) वार कहा जाता है। उस दिन उपवास करना चाहिये और श्राद्ध करके मध्यम पिण्डका प्राशन करना चाहिये। धूप, माल्य, दिव्य गन्ध आदि नाना प्रकारके उपचारोंसे सूर्यनारायणका पूजन कर महाश्वेता-मन्त्रको जपते हुए साधकको सूर्यनारायणके समक्ष ही शयन करना चाहिये। प्रातःकालमें ही उठकर स्नान आदिसे निवृत्त हो सूर्यभगवान्‌को अर्घ्य देना चाहिये। रक्त-चन्दन तथा करवीरके पुष्पोंसे पूजा करनी चाहिये। तत्पश्चात् पाँच ब्राह्मणोंको बुलाकर उनमेंसे दो ब्राह्मणोंको मगसंज्ञक तथा तीन ब्राह्मणोंको भीमसंज्ञक मानकर विधिपूर्वक पार्वण-श्राद्ध करना चाहिये। श्राद्धके समाप्त होनेपर मध्यम पिण्डको भगवान् सूर्यके सामने रखकर निम्नलिखित मन्त्रसे भक्षण करना चाहिये—

स एष पिण्डो देवेश योऽभीष्टस्तव सर्वदा।
अश्नामि पश्यते तुभ्यं तेन मे संततिर्भवेत्॥

(ब्राह्मपर्व ८६। १०)

इस विधानसे पूजा करनेपर सूर्यनारायण निश्चित ही पुत्र प्रदान करते हैं। इस प्रकार उपवासपूर्वक व्रतको करनेसे धन-धान्य, सुवर्ण, सुख-आरोग्य तथा सूर्यलोक भी प्राप्त होता है, किंतु विशेषरूपसे पुत्र-प्राप्तिका ही फल है, इसीसे इस वारको पुत्रद कहते हैं।

ब्रह्माजीने कहा—दिण्डिन्! दक्षिणायनके दिन जो वार हो, वह जयवार कहा जाता है। इस दिन किया गया उपवास, नक्तव्रत, स्नान-दान तथा जप भगवान् सूर्यमें सौगुनी प्रीति बढ़ानेवाला होता है। अतः सूर्यमें सौगुनी प्रीति बढ़ानेवाले इस नक्त-व्रतादिको अवश्य करना चाहिये।

यदि उत्तरायणके दिन रविवार हो तो उसे जयन्तवार कहते हैं। इस दिन भगवान् सूर्य स्नान-दानादि कर्म तथा पूजन करनेवालोंको हजार गुना फल प्रदान करते हैं। इस दिन उपवास करके घृत, दूध तथा इक्षुरससे सूर्यनारायणको स्नान कराकर कुंकुमका विलेपन करना चाहिये और गुग्गुलका धूप देकर मोदकका नैवेद्य समर्पित करना चाहिये। इस प्रकार भगवान् सूर्यनारायणका पूजन करके तिलसे हवन करना चाहिये। तदनन्तर यथाशक्ति ब्राह्मणोंको मोदक, तिल तथा शष्कुली (पूरी)-का भोजन कराना चाहिये। (अध्याय ८६-८७)

विजय, आदित्याभिमुख तथा हृदयवार-व्रतोंकी विधि

ब्रह्माजी बोले—दिण्डिन्! शुक्ल पक्षमें रोहिणी नक्षत्रसे युक्त सप्तमी तिथिको विजयसंज्ञक आदित्यवार कहते हैं। वह सम्पूर्ण पापों और भयोंको नष्ट कर देता है। उस दिन सम्पन्न किये गये पुण्यकर्म कोटिगुना फल प्रदान करते हैं।

दिण्डिन्! माघ मासके कृष्ण पक्षकी सप्तमीको

जो दिन हो उसे आदित्याभिमुख कहते हैं। उस दिन प्रातःकाल ही स्नान कर गन्ध-पुष्पादि उपचारोंसे सूर्यनारायणकी पूजा करनी चाहिये। तदनन्तर रक्तचन्दनके काष्ठसे बने हुए स्तम्भका आश्रय लेकर सूर्यदेवकी ओर मुखकर महाश्वेता-मन्त्र जपते हुए सायंकालतक खड़ा रहना चाहिये। तदनन्तर ब्राह्मणको भोजन कराकर दक्षिणा देनी चाहिये। तत्पश्चात् मौन होकर स्वयं भी भोजन करना चाहिये। जो मनुष्य इस व्रतका विधिपूर्वक पालन करते हैं, उन्हें भगवान् सूर्यनारायणका अनुग्रह प्राप्त होता है।

दिण्डिन्! संक्रान्तिके दिन यदि रविवार हो तो उसका नाम हृदयवार होता है। वह आदित्यके हृदयको अत्यन्त प्रिय है। उस दिन नक्तव्रत करके मन्दिरमें सूर्यनारायणके अभिमुख एक सौ आठ बार आदित्यहृदयका पाठ करना चाहिये अथवा सायंकालतक भगवान् सूर्यका हृदयमें ध्यान करना चाहिये। सूर्यास्त होनेके पश्चात् घर आकर यथाशक्ति ब्राह्मणको भोजन कराये तथा मौनपूर्वक स्वयं भी खीरका भोजन करके सूर्यदेवका स्मरण करते हुए भूमिपर ही शयन करे। इस प्रकार जो इस दिन व्रत रहकर श्रद्धा-भक्तिसे सूर्यनारायणकी पूजा करता है, उसके समस्त अभीष्ट सिद्ध हो जाते हैं और वह भगवान् सूर्यके समान ही तेज-कान्ति तथा यशको प्राप्त करता है। (अध्याय ८८—९०)

रोगहा एवं महाश्वेतवार-व्रतकी विधि

ब्रह्माजी बोले—दिण्डिन्! यदि आदित्यवारको उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र पड़े तो उसे रोगहावार कहते हैं। यह सम्पूर्ण रोगों एवं भयोंको दूर करनेवाला है। इस दिन जो गन्ध, पुष्प आदि उपचारोंसे भगवान् सूर्यनारायणका पूजन करता है, वह सभी रोगोंसे मुक्त हो जाता है तथा सूर्यलोकको प्राप्त होता है। मन्दारके पत्रोंका दोना बनाकर उसीमें उसीके फूल रखकर रात्रिमें भगवान् सूर्यनारायणके सामने रख देना चाहिये तथा प्रातःकाल उठकर उन्हीं फूलोंसे उनका पूजन करना चाहिये। तदनन्तर खीरका भोजन करके व्रतकी समाप्ति करनी चाहिये।

दिण्डिन्! यदि सूर्यग्रहणके दिन रविवार हो तो उसे महाश्वेतवार कहते हैं, वह भगवान् सूर्यको बहुत प्रिय है। उस दिन उपवास करके पवित्रताके साथ गन्ध-पुष्पादि उपचारोंसे भक्तिपूर्वक सूर्यनारायणका पूजन करके महाश्वेता-मन्त्रका जप करे। तदनन्तर महाश्वेताकी पूजा करके सूर्यनारायणकी पूजा करनेका विधान है। महाश्वेताकी स्थापना करके गन्ध-पुष्प आदिसे उनका पूजन करे तथा उन्हींके सम्मुख एक वेदीपर सूर्यनारायणकी स्थापना कर उनकी पूजा आदि करे। तत्पश्चात् स्नान करके घृतसहित तिलोंका हवन करे। ग्रहणके समय महाश्वेता-मन्त्रका जप करता रहे और ग्रहणके समाप्त होनेके पश्चात् पुनः स्नान करके महाश्वेता तथा ग्रहाधिपति भगवान् सूर्यका पूजन करे। ब्राह्मणोंसे पुराण सुनकर उन्हें भोजन कराये तथा यथाशक्ति दक्षिणा दे। उसके बाद स्वयं मौन होकर भोजन करे। इस दिन किये हुए स्नान, दान, जप, होम आदि कर्म अनन्त फल देते हैं।

दिण्डिन्! सम्पूर्ण पापों और भयोंको दूर करनेवाले सूर्यनारायणके इन द्वादश वारोंका मैंने जो वर्णन किया है, इसे जो मनुष्य पढ़ता है अथवा सुनता है, वह भगवान् सूर्यका प्रिय हो जाता है और जो इन व्रतोंको नियमपूर्वक करता है, वह धर्म, अर्थ, काम और चन्द्रमाके समान

कान्ति, सूर्यके समान प्रभा, इन्द्रके समान पराक्रम तथा स्थायी लक्ष्मीको प्राप्त करता है, तदनन्तर अन्तमें वह शिवलोकको चला जाता है।

(अध्याय ९१-९२)

सूर्यदेवकी पूजामें विविध उपचार और फल आदि निवेदन करनेका माहात्म्य

ब्रह्माजी बोले—दिण्डिन्! जो प्राणी भगवान् सूर्यनारायणके निमित्त सभी धर्मकार्य करते हैं, उनके कुलमें रोगी और दरिद्री उत्पन्न नहीं होते। जो व्यक्ति भगवान् सूर्यके मन्दिरमें भक्तिपूर्वक गोबरसे लेपन करता है, वह तत्क्षण सभी पापोंसे मुक्त हो जाता है। श्वेत-रक्त अथवा पीली मिट्टीसे जो मन्दिरमें लेप करता है, वह मनोवाञ्छित फल प्राप्त करता है। जो व्यक्ति उपवासपूर्वक अनेक प्रकारके सुगन्धित फूलोंसे सूर्यनारायणका पूजन करता है, वह समस्त अभीष्ट फलोंको प्राप्त करता है। घृत या तिल-तैलसे मन्दिरमें दीपक प्रज्वलित करनेवाला सूर्यलोकको तथा सूर्यनारायणके प्रीत्यर्थ चौराहे, तीर्थ, देवालयादिमें दीपक प्रज्वलित करनेवाला ओजस्वी रूपको प्राप्त करता है। भक्तिभावसे समन्वित होकर जिस मनुष्यके द्वारा सूर्यके लिये दीपक जलवाया जाता है, वह अपनी अभीष्ट कामनाओंको प्राप्त कर देवलोकको प्राप्त करता है। जो चन्दन, अगरु, कुंकुम, कपूर तथा कस्तूरी आदि मिलाकर तैयार किये गये उबटनसे सूर्यनारायणके शरीरका लेपन करता है, वह करोड़ों वर्षतक स्वर्गमें विहार कर पुनः पृथ्वीपर सभी इच्छाओंसे संतृप्त रहता है और समस्त लोकोंका पूज्य बनकर चक्रवर्ती राजा होता है। चन्दन और जलसे मिश्रित पुष्पोंके द्वारा सूर्यको अर्घ्य प्रदान करनेपर पुत्र, पौत्र, पत्नीसहित स्वर्गलोकमें पूज्य होता है। सुगन्धित पदार्थ तथा पुष्पोंसे युक्त जलके द्वारा सूर्यको अर्घ्य देकर मनुष्य देवलोकमें बहुत समयतक रहकर पुनः पृथ्वीपर राजा होता है। स्वर्णसे युक्त जल अथवा लाल वर्णके जलसे अर्घ्य देनेपर करोड़ों वर्षतक स्वर्गलोकमें पूजित होता है। कमलपुष्पसे सूर्यकी पूजा करके मनुष्य स्वर्गको प्राप्त करता है। श्रद्धा-भक्तिपूर्वक सूर्यनारायणको गुग्गुल तथा घृतमिश्रित धूप देनेसे तत्काल ही सभी पापोंसे मुक्ति मिल जाती है।

जो मनुष्य पूर्वाह्णमें भक्ति और श्रद्धासे सूर्यदेवका पूजन करता है, उसे सैकड़ों कपिला गोदान करनेका फल मिलता है। मध्याह्नकालमें जो जितेन्द्रिय होकर उनकी पूजा करता है, उसे भूमिदान और सौ गोदानका फल प्राप्त होता है। सायंकालकी संध्यामें जो मनुष्य पवित्र होकर श्वेत वस्त्र तथा उष्णीष (पगड़ी) धारण करके भगवान् भास्करकी पूजा करता है, उसे हजार गौओंके दानका फल प्राप्त होता है।

जो मनुष्य अर्धरात्रिमें भक्तिपूर्वक भगवान् सूर्यकी पूजा करता है, उसे जातिस्मरता प्राप्त होती है और उसके कुलमें धार्मिक व्यक्ति उत्पन्न होते हैं। प्रदोष-वेलामें जो मनुष्य भगवान् सूर्यदेवकी पूजा करता है, वह स्वर्गलोकमें अक्षयकालतक आनन्दका उपभोग करता है। प्रभातकालमें भक्तिपूर्वक सूर्यकी पूजा करनेपर देवलोककी प्राप्ति होती है। इस प्रकार सभी वेलाओंमें अथवा जिस किसी भी समय जो मनुष्य भक्तिपूर्वक मन्दार-पुष्पोंसे भगवान् सूर्यकी पूजा करता है, वह तेजमें भगवान् सूर्यके समान होकर सूर्यलोकमें पूज्य बन जाता है। जो व्यक्ति दोनों अयन-संक्रान्तियोंमें भगवान् सूर्यकी भक्तिपूर्वक पूजा करता है, वह ब्रह्माके लोकको प्राप्त करता है और वहाँ देवताओंद्वारा पूजित होता है। ग्रहण आदि अवसरोंपर पूजन करनेवाला चिन्तित

नहीं होता। जो निद्रासे उठनेपर सूर्यदेवको प्रणाम करता है, उसे प्रसन्न होकर भगवान् अभिलषित गति प्रदान करते हैं।

उदयकालमें सूर्यदेवको मात्र एक दिन यदि घृतसे स्नान करा दिया जाय तो एक लाख गोदानका फल प्राप्त होता है। गायके दूधद्वारा स्नान करानेसे पुण्डरीक-यज्ञका फल मिलता है। इक्षुरससे स्नान करानेपर अश्वमेध-यज्ञके फलका लाभ होता है। भगवान् सूर्यके लिये पहली बार ब्यायी हुई सुपुष्ट गौ तथा शस्य प्रदान करनेवाली पृथ्वीका जो दान करता है, वह अचल लक्ष्मीको प्राप्त कर पुनः सूर्यलोकको चला जाता है और गौके शरीरमें जितने रोयें होते हैं, उतने ही करोड़ वर्षतक वह सूर्यलोकमें पूजित होता है। जो मनुष्य भगवान् सूर्यके निमित्त भेरी, शंख, वेणु आदि वाद्य दान करते हैं, वे सूर्यलोकको जाते हैं। जो मनुष्य भक्तिभावसे सूर्यनारायणकी पूजा करके उन्हें छत्र, ध्वजा, पताका, वितान, चामर तथा सुवर्णदण्ड आदि समर्पित करता है, वह दिव्य छोटी-छोटी किंकिणियोंसे युक्त सुन्दर विमानके द्वारा सूर्यलोकमें जाकर आनन्दित होता है और चिरकालतक वहाँ रहकर पुनः मनुष्य-जन्म ग्रहण कर सभी राजाओंके द्वारा अभिवन्दित राजा होता है।

जो मनुष्य विविध सुगन्धित पुष्पों तथा पत्रोंसे सूर्यकी अर्चना करता है और विविध स्तोत्रोंसे सूर्यका संस्तवन-गान आदि करता है, वह उन्हींके लोकको प्राप्त होता है। जो पाठक और चारणगण सदा प्रातःकाल सूर्यसम्बन्धी ऋचाओं एवं विविध स्तोत्रोंका उपगान करते हैं, वे सभी स्वर्गगामी होते हैं। जो मनुष्य अश्वोंसे युक्त, सुवर्ण, रजत या मणिजटित सुन्दर रथ अथवा दारुमय रथ सूर्यनारायणको समर्पित करता है, वह सूर्यके वर्णके समान किंकिणी-जालमालासे समन्वित विमानमें बैठकर सूर्यलोककी यात्रा करता है।

जो लोग वर्षभर या छः मास नित्य इनकी रथयात्रा करते हैं, वे उस परमगतिको प्राप्त करते हैं, जिसे ध्यानी, योगी तथा सूर्यभक्तिके अनुगामी श्रेष्ठ जन प्राप्त करते हैं। जो मनुष्य भक्तिभाव-समन्वित होकर भगवान् सूर्यके रथको खींचते हैं, वे बार-बार जन्म लेनेपर भी नीरोग तथा दरिद्रतासे रहित होते हैं। जो मनुष्य भास्करदेवकी रथयात्रा करते हैं, वे सूर्यलोकको प्राप्तकर यथाभिलषित सुखका आनन्द प्राप्त करते हैं, परंतु जो मोह अथवा क्रोधवश रथयात्रामें बाधा उत्पन्न करते हैं, उन्हें पाप-कर्म करनेवाले मंदेह नामक राक्षस ही समझना चाहिये। सूर्यभगवान्‌के लिये धन-धान्य-हिरण्य अथवा विविध प्रकारके वस्त्रोंका दान करनेवाले परमगतिको प्राप्त होते हैं। गौ, भैंस अथवा हाथी या सुन्दर घोड़ोंका दान करनेवाले लोग अक्षय अभिलाषाओंको पूर्ण करनेवाले अश्वमेध-यज्ञके फलको प्राप्त करते हैं और उन्हें उस दानसे हजार गुना पुण्य-लाभ होता है। जो सूर्यनारायणके लिये खेती करनेयोग्य सुन्दर उपजाऊ भूमि-दान देता है, वह अपनी पीढ़ीसे पहलेके दस कुल और पश्चात्‌के दस कुलको तार देता है तथा दिव्य विमानसे सूर्यलोकको चला जाता है। जो बुद्धिमान् मनुष्य भगवान् सूर्यके लिये भक्तिपूर्वक ग्राम-दान करता है, वह सूर्यके समान वर्णवाले विमानमें आरूढ़ होकर परमगतिको प्राप्त होता है। भक्तिपूर्वक जो लोग फल-पुष्प आदिसे परिपूर्ण उद्यानका दान सूर्यनारायणके लिये देते हैं, वे परमगतिको प्राप्त होते हैं। मनसा-वाचा-कर्मणा जो भी दुष्कृत होता है, वह सब भगवान् सूर्यकी कृपासे नष्ट हो जाता है। चाहे आर्त हो या रोगी हो अथवा दरिद्र या दुःखी हो, यदि वह भगवान् आदित्यकी शरणमें आ जाता है तो उसके सम्पूर्ण कष्ट दूर हो जाते

हैं। एक दिनकी सूर्य-पूजा करनेसे जो फल प्राप्त होता है, वह अनेक इष्टापूर्तोंकी अपेक्षा श्रेष्ठ है।

जो भगवान् सूर्यके मन्दिरके सामने भगवान् सूर्यकी कल्याणकारी लीला करता है, उसे सभी अभीष्ट कामनाओंको सिद्ध करनेवाले राजसूय-यज्ञका फल प्राप्त होता है। गणाधिप! जो मनुष्य सूर्यदेवके लिये महाभारत ग्रन्थका दान करता है, वह सभी पापोंसे विमुक्त होकर विष्णुलोकमें पूजित होता है। रामायणकी पुस्तक देकर मनुष्य वाजपेय-यज्ञके फलको प्राप्त कर सूर्यलोकको प्राप्त करता है। सूर्यभगवान्‌के लिये भविष्यपुराण अथवा साम्बपुराणकी पुस्तकका दान करनेपर मानव राजसूय तथा अश्वमेध-यज्ञ करनेका फल प्राप्त करता है तथा अपनी सभी मनःकामनाओंको प्राप्त कर सूर्यलोकको पा लेता है और वहाँ चिरकालतक रहकर ब्रह्मलोकमें जाता है। वहाँ सौ कल्पतक रहकर पुनः वह पृथ्वीपर राजा होता है। जो मनुष्य सूर्यमन्दिरमें कुआँ तथा तालाब बनवाता है, वह मनुष्य आनन्दमय दिव्य लोकको प्राप्त करता है। जो मनुष्य सूर्यमन्दिरमें शीतकालमें मनुष्योंके शीत-निवारणके योग्य कम्बल आदिका दान करता है, वह अश्वमेध-यज्ञका फल प्राप्त करता है। जो मनुष्य सूर्यमन्दिरमें नित्य पवित्र पुस्तक, इतिहास तथा पुराणका वाचन करता है, वह उस फलको प्राप्त करता है, जो नित्य हजारों अश्वमेध-यज्ञको करनेसे भी प्राप्त नहीं होता। अतः सूर्यके मन्दिरमें प्रयत्नपूर्वक पवित्र पुस्तक, इतिहास तथा पुराणका वाचन करना चाहिये। भगवान् भास्कर पुण्य आख्यान-कथासे सदा संतुष्ट होते हैं। (अध्याय ९३)

एक वैश्य तथा ब्राह्मणकी कथा, सूर्यमन्दिरमें पुराण-वाचन एवं भगवान् सूर्यको स्नानादि करानेका फल

ब्रह्माजी बोले—दिण्डिन्! मैं आपको पितामह और कुमार कार्तिकेयका एक आख्यान सुना रहा हूँ, जो पुण्यदायक, पापनाशक तथा कल्याणकारी है। एक बार सभी लोकोंके रचयिता पितामह सुखपूर्वक बैठे थे, उनके पास श्रद्धा-भक्ति-समन्वित हो कार्तिकेयने आकर प्रणाम किया और कहा—

विभो! आज मैं दिवाकर भगवान् सूर्यदेवका दर्शन करनेके लिये गया था। प्रदक्षिणा करके मैंने उनकी पूजा की तथा परमभक्ति और श्रद्धासे मस्तक झुकाकर उन्हें प्रणाम किया और वहीं बैठ गया। वहाँ मैंने एक महान् आश्चर्यकी बात देखी—स्वर्णजटित छोटी-छोटी घंटियोंसे युक्त श्रेष्ठ वैदूर्यादि मणियों एवं मुक्ताओंसे सुशोभित विचित्र विमानसे आ रहे एक पुरुषको देखकर भगवान् दिवाकर सहसा आसनसे उठ खड़े हुए। उन्होंने सामने आये हुए उस पुरुषको अपने दाहिने हाथसे पकड़कर अपने सामने बैठाया और उसके सिरको सूँघा तथा उसका पूजन किया, तदनन्तर समीपमें बैठे हुए उस पुरुषसे भगवान् सूर्यने कहा—

हे भद्र! आपका स्वागत है। आपका हम सबपर बड़ा प्रेम है। आपने बहुत आनन्द दिया। जबतक महाप्रलय नहीं होता, तबतक आप मेरे समीप रहें। उसके पश्चात् उस स्थानको जायँ, जहाँ ब्रह्मा स्वयं स्थित हैं। इसी बीच भगवान् सूर्यके सामने एक श्रेष्ठ विमानपर आसीन दूसरा पुरुष आया। उसका भी सूर्यभगवान्‌ने उसी प्रकार आदर किया और उसे भी विनम्र भावसे वहीं बैठाया। देवशार्दूल! भगवान् सूर्यके द्वारा की गयी

उन दोनोंकी पूजा देखकर मेरे मनमें बड़ा कौतूहल उत्पन्न हो गया, अतः मैंने भगवान् भास्करसे पूछा—'देव! पहले जो यह मनुष्य आपके पास आया है और जिसे आपने अधिक संतुष्ट किया है, इसने कौन-सा ऐसा पुण्यकर्म किया है, जो इसकी आपने स्वयं ही पूजा की है? इस विषयको लेकर मेरे हृदयमें विशेषरूपसे कौतूहल उत्पन्न हो गया है। उसी प्रकारसे आपने दूसरे मनुष्यकी भी पूजा की है। ये दोनों सब प्रकारसे पुण्यकर्म करनेवाले उत्तम जनोंमें भी श्रेष्ठ मनुष्य हैं। आप तो सदा ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव आदि देवताओंके द्वारा भी अर्जित, पूजित होते हैं, फिर आपके द्वारा ये दोनों किस कारण पूजित हुए? देवेश! मुझे आप इसका रहस्य बतायें।'

भगवान् सूर्यने कहा—महामते! आपने इनके कर्मके विषयमें बहुत अच्छी बात पूछी है, जिस कारणसे ये मेरे पास आये हैं, उसे आप श्रवण करें—पृथ्वीतलपर अयोध्या नामकी एक प्रसिद्ध नगरी है, जो मेरे अंशसे उत्पन्न राजाओंद्वारा अभिरक्षित है। उस अयोध्या नामक नगरीमें धनपाल नामका एक श्रेष्ठ वैश्य रहता था। उस पुरीमें उसने एक दिव्य सूर्यमन्दिर बनवाया और बहुत-से श्रेष्ठ ब्राह्मणोंको बुलाकर उनकी पूजा की। इतिहास-पुराणके वाचकोंकी विशेषरूपसे पूजा की और उनसे पुराण-श्रवण करानेकी प्रार्थना की तथा कहा—द्विजश्रेष्ठ! इस मन्दिरमें यह चारों वर्णोंका समूह पुराण-श्रवण करनेका इच्छुक है, अतः आप पुराण-श्रवण करायें, जिससे भगवान् सूर्य मेरे लिये सात जन्मतक वर देनेवाले हों। आप एक वर्षतक मेरी दी हुई वृत्तिको ग्रहण करें। उन्होंने वैश्य धनपालके आग्रहको स्वीकार कर लिया। परंतु छः मासमें ही वैश्य धनपाल कालधर्मको प्राप्त हो गया। हे कुमार! वही यह वैश्य है। मैंने इसीको लानेके लिये विमान भेजा था। पुण्य आख्यानको कहने या सुननेसे जो फल एवं तुष्टि प्राप्त होती है, यह उसीका फल है। गन्ध-पुष्पादि उपचारोंसे पूजन करनेपर मेरे हृदयमें वैसी प्रसन्नता उत्पन्न नहीं होती जैसी पुराण सुननेसे होती है। कुमार! गौ, सुवर्ण तथा स्वर्णजटित वस्त्रों, ग्रामों तथा नगरोंका दान देनेसे मुझे इतनी प्रसन्नता नहीं होती, जितनी प्रसन्नता इतिहास-पुराण सुनने-सुनानेसे होती है। मुझे अनेक खाद्य-पदार्थोंद्वारा किये गये श्राद्धोंसे वैसी प्रसन्नता नहीं होती, जैसी पुराण-वाचनसे होती है। सुरश्रेष्ठ! इससे अधिक और क्या कहूँ? इस रहस्ययुक्त पवित्र आख्यानके वाचनके बिना मुझे अन्य कुछ भी प्रिय नहीं है।

नरोत्तम! यह जो दूसरा ब्राह्मण यहाँ आया है, यह भी उसी श्रेष्ठ अयोध्या नगरीमें उत्तम कुलका ब्राह्मण था। एक बार यह परम श्रद्धा-भक्तिसे समन्वित होकर धर्मकी उत्तम कथाको सुननेके लिये गया था। वहाँपर उसने भक्तिपूर्वक उत्तम पवित्र आख्यानको सुनकर उन महात्मा वाचककी प्रदक्षिणा की। तत्पश्चात् यह ब्राह्मण उस परम तेजस्वी वाचकको दक्षिणामें एक माशा स्वर्ण दान देकर परम आनन्दित हुआ। यही इसका पुण्य है। जो यह मेरे द्वारा सम्मानित हुआ है यह उसी पुण्यकर्मका परिणाम है। श्रद्धा-भक्तिसमन्वित जो व्यक्ति वाचककी पूजा करता है, उसीसे मैं भी पूजित हो जाता हूँ।

जो मनुष्य अच्छे-से-अच्छे भोज्य पदार्थोंके द्वारा वाचकको परितृप्त करता है, उसीसे मेरी भी संतुष्टि हो जाती है। मेरी संतानें—यम, यमी, शनि, मनु तथा तपती मुझे उतने प्रिय नहीं हैं, जितना मुझे कथावाचक प्रिय हैं*। वाचकके संतुष्ट

* न यमो न यमी चापि न मन्दो न मनुस्तथा। तपती न तथान्विष्टा यथेष्टो वाचको मम॥ (ब्राह्मपर्व ९४। ४५)

होनेपर सभी देवता प्रसन्न हो जाते हैं, इसमें कोई संदेह नहीं। क्योंकि हे देवसेनापते! सबसे पहले संसारके द्वारा पूज्य जो मेरा मुख था, उसी मुखसे संसारका कल्याण करनेके निमित्त सभी इतिहास-पुराणादि ग्रन्थ प्रकट हुए। महामते! मुझे पुराण वेदोंसे भी अधिक प्रिय हैं। जो श्रद्धाभावसे नित्य इन्हें सुनते हैं और वाचकको वृत्ति प्रदान करते हैं, वे परमपद प्राप्त करते हैं। सुव्रत! धर्म-अर्थ-काम तथा मोक्ष—पुरुषार्थचतुष्टयकी उत्तम व्याख्याके लिये मैंने ये इतिहास-पुराण बनाये हैं। वेदोंका अर्थ अत्यन्त दुर्ज्ञेय है। अतएव महामते! इनको जाननेके लिये ही मैंने इतिहास-पुराणोंकी रचना की है। जो मनुष्य प्रतिदिन पुराण-श्रवणका उत्तम कार्य करवाता है, वह सूर्यदेवसे ज्ञान प्राप्तकर परमपदको प्राप्त करता है। वाचकको जो दक्षिणा देता है, वह सूर्यदेवके लोकको प्राप्त करता है। हे सुरश्रेष्ठ! इसमें आश्चर्य क्या है? जैसे देवताओंमें इन्द्र श्रेष्ठ हैं, शस्त्रोंमें वज्र श्रेष्ठ है और जैसे तेजस्वियोंमें अग्नि, नदियोंमें सागर श्रेष्ठ माना गया है, वैसे ही सभी ब्राह्मणोंमें इतिहास-पुराण-वाचक ब्राह्मण श्रेष्ठ है। जो मनुष्य भक्तिपूर्वक पुराण-वाचकका पूजन करता है, उसके उस पुण्यकर्मद्वारा सम्पूर्ण जगत् पूजित हो जाता है।

ब्रह्माजीने पुनः कहा—दिण्डिन्! देवदेवेश्वर भगवान् सूर्यके मन्दिरमें जो मनुष्य धर्मका श्रवण करता है या कराता है, उसके पुण्यसे वह परम गतिको प्राप्त करता है।

जो पुरुष भगवान् सूर्यकी तीन बार प्रदक्षिणा करके भूमिपर मस्तक झुकाकर सूर्यनारायणको प्रणाम करता है, वह उत्तम गतिको प्राप्त होता है। जो मनुष्य जूता पहनकर मन्दिरमें प्रवेश करता है, वह तामिस्र नामक भयंकर नरकमें जाता है। जो सूर्यदेवके स्नानार्थ घृत, दूध, मधु, इक्षुरस अथवा गङ्गादि पवित्र नदियोंका उत्तम जल देते हैं, वे सम्पूर्ण कामनाओंको प्राप्तकर सूर्यमण्डलको प्राप्त करते हैं। अभिषेकके समय जो उनका भक्तिपूर्वक दर्शन करते हैं, उन्हें अश्वमेध-यज्ञका फल प्राप्त होता है और अन्तमें वे शिवलोकको जाते हैं। सूर्यभगवान्‌को ऐसे स्थानपर स्नान कराना चाहिये, जहाँ स्नानका जल आदि किसीसे लाँघा न जा सके। जलका लङ्घन हो जानेपर अशुभ होता है।

(अध्याय ९४-९५)

जया-सप्तमी-व्रतका वर्णन

दिण्डीने कहा—ब्रह्मन्! आपने मुझसे जो सात सप्तमियोंका वर्णन किया है, उसमें जो पहली सप्तमी है, उसके विषयमें तो आपने विस्तारपूर्वक वर्णन किया, किंतु शेष छः सप्तमियोंके विषयमें कुछ नहीं कहा। अतः अन्य सभी सप्तमियोंका भी आप वर्णन करें, जिनमें उपवास करके मैं सूर्यलोकको प्राप्त कर सकूँ।

ब्रह्माजी बोले—दिण्डिन्! शुक्ल पक्षकी जिस सप्तमीको हस्त नक्षत्र हो, उसे 'जया' सप्तमी कहते हैं। उस दिन किया गया दान, हवन, जप, तर्पण तथा देव-पूजन एवं सूर्यदेवका पूजन सौगुना लाभप्रद होता है। यह सप्तमी भगवान् भास्करको अत्यन्त प्रिय है। यह पापनाशिनी, श्रेष्ठ यश देनेवाली, पुत्र प्राप्त करानेवाली, अभीष्ट इच्छाओंको पूर्ण करनेवाली और लक्ष्मीको प्राप्त करानेवाली है। प्राचीन कालमें इसी तिथिको भगवान् सूर्यने हस्त नक्षत्रपर संक्रमण किया था, इसलिये इसे शुक्ला सप्तमी भी कहते हैं। अपने दोनों हाथोंमें कमल धारण किये हुए भगवान् सूर्यकी स्वर्णमयी प्रतिमा बनाकर विधिपूर्वक

वर्षभर उनका पूजन करना चाहिये। इस व्रतमें तीन पारणाएँ करनी चाहिये। प्रथम पारणा चार मासपर करे। उसमें करवीरके पुष्प तथा रक्त चन्दन, गुग्गुल-धूप तथा गेहूँके आटेके लड्डूके नैवेद्य आदिसे पूजा करनी चाहिये। इस विधिसे देवाधिपति मार्तण्ड भगवान् सूर्यकी विधिपूर्वक पूजा करके ब्राह्मणोंकी पूजा करे। सप्तमी तिथिमें उपवास रखकर अष्टमीको पारणा करनी चाहिये। इस पारणामें पीली सरसोंमिश्रित जलसे स्नान करे, गोमयका प्राशन करे तथा मदारसे दन्तधावन करे। '**भानुर्मे प्रीयताम्**'—'भगवान् सूर्य मुझपर *प्रसन्न हों*'—*ऐसा उच्चारण करते हुए ये क्रियाएँ* सम्पन्न करे। यह पहली पारणा-विधि है।

दूसरी पारणामें मालतीके पुष्प, श्रीखण्ड-चन्दन, पायसका नैवेद्य तथा विजय-धूप देनी चाहिये। ब्राह्मणोंको भोजन कराकर स्वयं भी वैसा ही भोजन करना चाहिये। '**रविर्मे प्रीयताम्**'—'सूर्यदेव! मुझपर प्रसन्न हों'—ऐसा कहते हुए पञ्चगव्य प्राशनकर खदिरकी लकड़ीसे दन्तधावन करना चाहिये।

तीसरी पारणामें अगस्ति-पुष्पसे भगवान् भास्करका पूजन करना चाहिये। इस व्रतमें भगवान् सूर्यको श्रीखण्ड, कुसुम, सिह्लक-धूप देने चाहिये, क्योंकि ये भगवान्‌को अत्यन्त प्रिय हैं।

'**विकर्तनो मे प्रीयताम्**'—'भगवान् विकर्तन-सूर्य मुझपर प्रसन्न हों'—ऐसी प्रार्थना करते हुए कुशोदकका प्राशन करना चाहिये तथा बेरकी दातून करनी चाहिये। वर्षके अन्तमें भगवान् सूर्यकी गन्ध-पुष्प तथा नैवेद्यादि उपचारोंसे विधिवत् पूजा करनी चाहिये, अनन्तर उन्हींके समक्ष अवस्थित होकर *परम पवित्र पुराणका वाचन करवाना चाहिये।*

विभो! इस विधिसे जो पुरुष इस सप्तमी-तिथिका व्रत करता है, उसके स्नानादिक समस्त व्रतके कार्य सौगुना फल देनेवाले हो जाते हैं। इस सप्तमीके व्रतको करनेवाला व्यक्ति यश, धन, धान्य, सुवर्ण, पुत्र, आयु, बल तथा लक्ष्मीको प्राप्त कर सूर्यलोकको जाता है। (अध्याय ९६)

जयन्ती-सप्तमीका विधान और फल

ब्रह्माजी बोले—त्रिलोचन! माघ मासके शुक्ल पक्षकी सप्तमी तिथि जयन्ती-सप्तमी कही जाती है, यह पुण्यदायिनी, पापविनाशिनी तथा कल्याणकारिणी है। इस तिथिपर जिस विधिसे उपासना करनी चाहिये, उसे आप सुनें। पण्डितोंने इस व्रतमें चार पारणाओंका उल्लेख किया है। पञ्चमी तिथिमें एकभुक्त, षष्ठीमें नक्तव्रत और सप्तमीमें उपवास करके अष्टमीमें पारणा करनी चाहिये। माघ, फाल्गुन तथा चैत्र मासमें जब जयन्ती-सप्तमीका व्रत किया जाय तब भगवान् सूर्यको बकुलके सुन्दर पुष्प चढ़ाने चाहिये तथा कुंकुमका विलेपन करना चाहिये, मोदकोंका नैवेद्य और घृतका धूप देना चाहिये। पञ्चगव्य-प्राशन करके पवित्रीकरण करना चाहिये। ब्राह्मणोंको मोदक यथाशक्ति खिलाना चाहिये तथा शालि नामक चावलका भात भी देना चाहिये। इस प्रकार जो मनुष्य लोकपूज्य भगवान् भास्करकी पूजा करता है, वह इस व्रतकी सभी पारणाओंमें अश्वमेध एवं राजसूय-यज्ञका फल प्राप्त करता है।

द्वितीय पारणामें सूर्यभगवान्‌की पूजा करके राजसूय-यज्ञका फल प्राप्त होता है। वैशाख, ज्येष्ठ और आषाढ़ मासमें सूर्यदेवकी पूजा करनेके लिये शतदल कमल तथा श्वेत चन्दन और गुग्गुलके धूपका विधान कहा गया है। इसमें गुड़के बने हुए अपूपका नैवेद्य अर्पित करना चाहिये और गोमयका प्राशन करना चाहिये। ब्राह्मणोंको गुड़से

बने हुए अपूपोंका भोजन कराना अच्छा माना गया है। यह पारणा पापनाशिका है।

तृतीय पारणाकी विधि इस प्रकार है— श्रावण, भाद्रपद और आश्विन मासमें रक्त चन्दन, मालतीके पुष्प और विजय नामक धूपका पूजनमें प्रयोग करना चाहिये। घृतमें बनाये गये अपूपोंका नैवेद्य निवेदित करना चाहिये। ब्राह्मणोंको भोजन भी उसी घृतके अपूपोंसे करानेका विधान है। शरीरको परम पवित्र करनेवाले कुशोदकका पान करना चाहिये। यह तृतीय पारणा पापोंका नाश करनेवाली कही गयी है।

अब चौथी पारणा बता रहा हूँ, इसे सुनें— कार्तिक, मार्गशीर्ष तथा पौष मासमें सूर्यपूजनकी पारणा करनेसे अनन्त पुण्यफल प्राप्त होते हैं। इस पारणामें कनेरके लाल पुष्प, रक्त चन्दन देने चाहिये। अमृत[1] नामका धूप, पायसका श्रेष्ठ नैवेद्य निवेदित करना चाहिये। श्वेत गायके मट्ठेका प्राशन करनेका विधान है।

चारों पारणाओंमें क्रमशः '**चित्रभानुः प्रीयताम्**', '**भानुः प्रीयताम्**', '**आदित्यः प्रीयताम्**' तथा '**भास्करः प्रीयताम्**'—ऐसा उच्चारण करना चाहिये। इस विधिसे जो मनुष्य विभावसु भगवान् सूर्यनारायणकी पूजा करता है, वह परम पदको प्राप्त होता है। इस प्रकार सप्तमी-व्रत करनेपर व्रतकर्ताको सभी अभीष्ट कामनाओंकी प्राप्ति हो जाती है। पुत्रार्थी पुत्र तथा धनार्थी धन प्राप्त करता है और रोगी मनुष्य रोगोंसे मुक्त हो जाता है तथा अन्तमें वह नितान्त कल्याण प्राप्त करता है।

इस प्रकार जो मनुष्य इस सप्तमी-व्रतका आचरण करता है, वह सर्वत्र विजयी होता है तथा सभी पापोंसे मुक्त होकर वह विशुद्धात्मा सूर्यलोकको प्राप्त करता है। (अध्याय १७)

अपराजिता-सप्तमी एवं महाजया-सप्तमी-व्रतका वर्णन

ब्रह्माजी बोले—गणाधिप! भाद्रपद मासके शुक्लपक्षकी सप्तमी तिथि अपराजिता-सप्तमी नामसे विख्यात है। यह महापातकोंका नाश करती है। इस व्रतमें चतुर्थी तिथिको एकभुक्त और पञ्चमी तिथिमें नक्तव्रत करनेका विधान है। षष्ठी तिथिको उपवास करके सप्तमी तिथिमें पारणा करनेका विधान है। विद्वानोंने इसमें भी चार पारणाएँ बतायी हैं। सूर्यदेवकी पूजा करवीर-पुष्प, रक्त चन्दन, गुग्गुलसे बने हुए धूप, गुड़से बने अपूपसे करनी चाहिये। भाद्रपद आदि तीन मासोंमें श्वेत पुष्प, श्वेत चन्दन, घृतका धूप तथा पायसके नैवेद्यसे सूर्यदेवका पूजन करना चाहिये। मार्गशीर्ष आदि तीन महीनोंमें अगस्त्य-पुष्प, कुंकुमका विलेपन, सिह्लक-धूप, शालि-चावलके नैवेद्य आदिसे पूजा करनी चाहिये। फाल्गुन आदि तीन मासोंमें रक्त कमलके पुष्प, अगरु, चन्दन, अनन्त[2] नामक धूप, शर्करा या मिश्रीखण्डसे बने हुए अपूपोंके नैवेद्यसे सूर्यदेवकी पूजा करनी चाहिये। विद्वानोंने ज्येष्ठ आदिके महीनोंमें सूर्यदेवकी पूजा

१-अगरुं चन्दनं मुस्तं सिह्लकं त्र्यूषणं तथा। समभागैस्तु कर्तव्यमिदं चामृतमुच्यते॥ (ब्राह्मपर्व ९७। १९)

अगरु, चन्दन, मोथा, सिह्लक (एक गन्ध-द्रव्य) और त्रिकटु (सोंठ, पीपर, मिर्च)-को समभाग लेकर जो धूप बनाया जाता है, उसे अमृत-धूप कहते हैं।

२-श्रीखण्डं ग्रन्थिसहितमगुरुः सिह्लकं तथा। मुस्ता तथेन्द्रं भूतेश शर्करा गृह्यते त्र्यहम्॥
इत्येष धूपोऽनन्तस्तु कथितो देवसत्तम। (ब्राह्मपर्व ९८। ९-१०)

श्रीखण्ड, अगरु, सिह्लक, नागरमोथा, ग्रन्थिपर्णी, इन्द्रायण तथा शर्करा मिलाकर जो धूप बनाया जाता है, उसे अनन्त नामक धूप कहा गया है।

करनेके लिये इसी विधिको कहा है। चारों पारणाओंमें क्रमशः भगवान् सूर्यदेवके नाम इस प्रकार हैं—सुधांशु, अर्यमा, सविता और त्रिपुरान्तक। सभी पारणाओंमें क्रमशः **'सुधांशुः प्रीयताम्'** इत्यादि कहे। गोमूत्र, पञ्चगव्य, घृत, गरम दूध—ये व्रतके क्रमशः प्राशन-पदार्थ हैं।

जो मनुष्य इस विधिसे इस सप्तमी-व्रतको करता है, वह युद्धमें शत्रुओंसे पराजित नहीं होता। वह शत्रुको जीतकर धर्म, अर्थ तथा काम—इस त्रिवर्गके फलको भी निःसंदेह प्राप्त कर लेता है। त्रिवर्गको प्राप्त करके वह सूर्यलोकको प्राप्त होता है।

जो मनुष्य इस प्रकार सदा प्रयत्नपूर्वक सप्तमी-व्रतको करता है, वह शत्रुको पराजित करके सूर्यलोकको प्राप्त करता है और श्वेत अश्वोंसे युक्त एवं स्वर्णिम ध्वज-पताकासे समन्वित यानके द्वारा भगवान् वरुणदेवके समीपमें जाकर उनका प्रिय हो जाता है।

ब्रह्माजी बोले—शुक्ल पक्षकी सप्तमी तिथिमें जब सूर्य संक्रमण करते हैं, तब वह सप्तमी महाजया कहलाती है, जो भगवान् भास्करको अत्यन्त प्रिय है। इस अवसरपर किये गये स्नान, दान, जप, होम और पितृ-देव-पूजन—ये सब कार्य कोटि-गुना फल देते हैं—ऐसा भगवान् भास्करने स्वयं कहा है। (अध्याय ९८-९९)

नन्दा-सप्तमी तथा भद्रा-सप्तमी-व्रतका विधान

ब्रह्माजी बोले—हे वीर! मार्गशीर्ष मासमें शुक्ल पक्षकी जो सप्तमी होती है, वह नन्दा कहलाती है। वह सभीको आनन्दित करनेवाली तथा कल्याणकारिणी है। इस व्रतमें पञ्चमी तिथिको एकभुक्त और षष्ठी तिथिमें नक्तव्रत कर मनीषीलोग सप्तमी तिथिको उपवास बतलाते हैं। इस व्रतमें विद्वानोंने तीन पारणाओंके करनेका उपदेश किया है। इसके पूजनमें मालतीके पुष्प, सुगन्ध, चन्दन, कर्पूर और अगरुसे मिश्रित धूपका प्रयोग करना चाहिये। खाँड़के सहित दही-भातका नैवेद्य भगवान् भास्करको प्रिय है। उसी खाँड़मिश्रित दही-भातका भोजन ब्राह्मणोंको करवाना चाहिये। तत्पश्चात् स्वयं भी उसी भोजनको करना चाहिये। भगवान् भास्करको धूप देनेके लिये प्रथम पारणामें विधि इस प्रकार है—पलाशके पुष्प, पक्षक[१] धूप अथवा यथासामर्थ्य जो भी धूप हो सके, उसी धूपसे पूजा करनी चाहिये।

द्वितीय पारणामें प्रबोध[२] धूप, शर्कराखण्डसे मिश्रित पुएका नैवेद्य सूर्यनारायणको अर्पित करनेका विधान है। खाँड़मिश्रित भोजनसे ब्राह्मणोंको भोजन भी कराना चाहिये। निम्ब-पत्रका प्राशन करनेके पश्चात् स्वयं भी मौन होकर भोजन करना चाहिये।

तृतीय पारणामें भगवान् भास्करको प्रसन्न करनेके लिये नील या श्वेत कमल और गुग्गुलके धूप तथा पायसका नैवेद्य अर्पित करना चाहिये। प्राशनमें तथा विलेपनमें भी चन्दनके उपयोगकी विधि कही गयी है।

१-कर्पूरं चन्दनं कुष्ठमगरुः सिह्लकं तथा॥
सग्रन्थि वृषणं भीम कुंकुमं गृञ्जनं तथा। हरीतकी तथा भीम एष पक्षक उच्यते॥
(ब्राह्मपर्व १००।६-७)
कर्पूर, चन्दन, कुष्ठ (कुटकी), अगरु, सिह्लक, ग्रंन्थिपर्णी, कस्तूरी, कुंकुम, गृञ्जन तथा हरीतकीके मेलसे पक्षक धूप बनता है।

२-कृष्णागरुः सितं कंजं बालकं वृषणं तथा॥
चन्दनं तगरो मुस्ता प्रबोधशर्करान्विता। (ब्राह्मपर्व १००। ८-९)
कृष्णागरु, श्वेत कमल, सुगन्धबाला, कस्तूरी, चन्दन, तगरु, नागरमोथा और शर्करा मिलाकर प्रबोध धूप बनता है।

मनुष्योंको सदा पवित्र करनेवाले भगवान् सूर्यनारायणके नामोंको भी सुनें—विष्णु, भग तथा धाता—ये उनके नाम हैं। प्रत्येक पारणामें क्रमशः '**विष्णुः प्रीयताम्**' इत्यादि उच्चारण करना चाहिये। इस विधिसे जो मनुष्य दत्तचित्त होकर भगवान् भास्करकी पूजा करता है, वह इस लोकमें अपनी कामनाओंको पूर्ण करके अनन्तकालतक आनन्दित रहता है। तत्पश्चात् सूर्यलोकमें जाकर वह वहाँ भी आनन्दको प्राप्त करता है।

ब्रह्माजी बोले—शुक्ल पक्षमें सप्तमी तिथिको जब हस्त नक्षत्र हो तो वह भद्रा-सप्तमी कही जाती है। उस दिन भगवान् सूर्यदेवको पहले घीसे, अनन्तर दूधसे तत्पश्चात् इक्षुरससे स्नान कराकर चन्दनका लेप करना चाहिये। तत्पश्चात् उन्हें गुग्गुलका धूप दिखाये। चतुर्थी तिथिको एकभुक्त तथा पञ्चमी तिथिको नक्तव्रत करनेका विधान है। षष्ठी तिथिको अयाचित रहकर सप्तमी तिथिको उपवास रखना श्रेष्ठ कहा गया है। सप्तमी-व्रतका पालन करनेवाले मनुष्यको चाहिये कि वह उस व्रतके दिन पाखण्डी, सत्कर्मोंसे दूर करनेवाले, विडाल-वृत्तिका आचरण करनेवाले मनुष्योंसे दूर रहे। बुद्धिमान् व्यक्ति सप्तमी-व्रतका पालन करते हुए दिनमें शयन न करे। इस विधिसे जो मनुष्य भद्रा-सप्तमीका व्रत करता है, उसे ऋभु नामक देवता सदा समस्त कल्याणकी वस्तुएँ प्रदान करते हैं। जो मनुष्य इस तिथिको शालिचूर्णसे भद्र (वृषभ) बनाकर सूर्यदेवको समर्पित करता है, उसको भद्र पुत्र प्राप्त होता है और वह जीवनपर्यन्त आनन्दित रहता है।

जो मनुष्य भक्तिपूर्वक सप्तमी-कल्पको प्रारम्भसे सुनता है, वह अश्वमेध-यज्ञके फलको प्राप्त करनेके पश्चात् परमपद—मोक्षको प्राप्त होता है।

(अध्याय १००-१०१)

तिथियों और नक्षत्रोंके देवता तथा उनके पूजनका फल

सुमन्तु मुनि बोले—राजन्! यद्यपि भगवान् सूर्यको सभी तिथियाँ प्रिय हैं, किंतु सप्तमी तिथि विशेष प्रिय है।

शतानीकने पूछा—जब भगवान् सूर्यको सभी तिथियाँ प्रिय हैं तो सप्तमीमें ही यज्ञ, दान आदि विशेषरूपसे क्यों अनुष्ठित होते हैं?

सुमन्तु मुनिने कहा—राजन्! प्राचीन कालमें इस विषयमें भगवान् विष्णुने सुरज्येष्ठ ब्रह्माजीसे जो प्रश्न किये थे और ब्रह्माजीने जैसा बतलाया था, उसे मैं आपको बताता हूँ, आप श्रवण करें—

ब्रह्माजी बोले—विष्णो! विभाजनके समय प्रतिपद् आदि सभी तिथियाँ अग्नि आदि देवताओंको तथा सप्तमी भगवान् सूर्यको प्रदान की गयी। जिन्हें जो तिथि दी गयी, वह उसका ही स्वामी कहलाया। अतः अपने दिनपर ही अपने मन्त्रोंसे पूजे जानेपर वे देवता अभीष्ट प्रदान करते हैं।

सूर्यने अग्निको प्रतिपदा, ब्रह्माको द्वितीया, यक्षराज कुबेरको तृतीया और गणेशको चतुर्थी तिथि दी है। नागराजको पञ्चमी, कार्तिकेयको षष्ठी, अपने लिये सप्तमी और रुद्रको अष्टमी तिथि प्रदान की है। दुर्गादेवीको नवमी, अपने पुत्र यमराजको दशमी, विश्वेदेवगणोंको एकादशी तिथि दी गयी है। विष्णुको द्वादशी, कामदेवको त्रयोदशी, शङ्करको चतुर्दशी तथा चन्द्रमाको पूर्णिमाकी तिथि दी है। सूर्यके द्वारा पितरोंको पवित्र, पुण्यशालिनी अमावास्या तिथि दी गयी है। ये कही गयी पंद्रह तिथियाँ चन्द्रमाकी हैं। कृष्ण पक्षमें देवता इन सभी तिथियोंमें शनैः शनैः चन्द्रकलाओंका पान कर लेते हैं। वे शुक्ल पक्षमें पुनः सोलहवीं कलाके साथ उदित होती हैं। वह अकेली षोडशी कला

सदैव अक्षय रहती है। उसमें साक्षात् सूर्यका निवास रहता है। इस प्रकार तिथियोंका क्षय और वृद्धि स्वयं सूर्यनारायण ही करते हैं। अतः वे सबके स्वामी माने जाते हैं। ध्यानमात्रसे ही सूर्यदेव अक्षय गति प्रदान करते हैं। दूसरे देवता भी जिस प्रकार उपासकोंकी अभीष्ट कामना पूर्ण करते हैं, उसे मैं संक्षेपमें बताता हूँ, आप सुनें—

प्रतिपदा तिथिमें अग्निदेवकी पूजा करके अमृतरूपी घृतका हवन करे तो उस हविसे समस्त धान्य और अपरिमित धनकी प्राप्ति होती है। द्वितीयाको ब्रह्माकी पूजा करके ब्रह्मचारी ब्राह्मणको भोजन करानेसे मनुष्य सभी विद्याओंमें पारङ्गत हो जाता है। तृतीया तिथिमें धनके स्वामी कुबेरका पूजन करनेसे मनुष्य निश्चित ही विपुल धनवान् बन जाता है तथा क्रय-विक्रयादि व्यापारिक व्यवहारमें उसे अत्यधिक लाभ होता है। चतुर्थी तिथिमें भगवान् गणेशका पूजन करना चाहिये। इससे सभी विघ्नोंका नाश हो जाता है, इसमें संदेह नहीं। पञ्चमी तिथिमें नागोंकी पूजा करनेसे विषका भय नहीं रहता, स्त्री और पुत्र प्राप्त होते हैं और श्रेष्ठ लक्ष्मी भी प्राप्त होती है। षष्ठी तिथिमें कार्तिकेयकी पूजा करनेसे मनुष्य श्रेष्ठ मेधावी, रूपसम्पन्न, दीर्घायु और कीर्तिको बढ़ानेवाला हो जाता है। सप्तमी तिथिको चित्रभानु नामवाले भगवान् सूर्यनारायणका पूजन करना चाहिये, ये सबके स्वामी एवं रक्षक हैं। अष्टमी तिथिको वृषभसे सुशोभित भगवान् सदाशिवकी पूजा करनी चाहिये, वे प्रचुर ज्ञान तथा अत्यधिक कान्ति प्रदान करते हैं। भगवान् शङ्कर मृत्युहरण करनेवाले, ज्ञान देनेवाले और बन्धनमुक्त करनेवाले हैं। नवमी तिथिमें दुर्गाकी पूजा करके मनुष्य इच्छापूर्वक संसार-सागरको पार कर लेता है तथा संग्राम और लोकव्यवहारमें वह सदा विजय प्राप्त करता है। दशमी तिथिको यमकी पूजा करनी चाहिये, वे निश्चित ही सभी रोगोंको नष्ट करनेवाले और नरक तथा मृत्युसे मानवका उद्धार करनेवाले हैं। एकादशी तिथिको विश्वेदेवोंकी भली प्रकारसे पूजा करनी चाहिये। वे भक्तको संतान, धन-धान्य और पृथ्वी प्रदान करते हैं। द्वादशी तिथिको भगवान् विष्णुकी पूजा करके मनुष्य सदा विजयी होकर समस्त लोकमें वैसे ही पूज्य हो जाता है, जैसे किरणमाली भगवान् सूर्य पूज्य हैं। त्रयोदशीमें कामदेवकी पूजा करनेसे मनुष्य उत्तम रूपवान् हो जाता है और मनोवाञ्छित रूपवती भार्या प्राप्त करता है तथा उसकी सभी कामनाएँ पूर्ण हो जाती हैं। चतुर्दशी तिथिमें भगवान् देवदेवेश्वर सदाशिवकी पूजा करके मनुष्य समस्त ऐश्वर्योंसे समन्वित हो जाता है तथा बहुत-से पुत्रों एवं प्रभूत धनसे सम्पन्न हो जाता है। पौर्णमासी तिथिमें जो भक्तिमान् मनुष्य चन्द्रमाकी पूजा करता है, उसका सम्पूर्ण संसारपर अपना आधिपत्य हो जाता है और वह कभी नष्ट नहीं होता। दिण्डिन्! अपने दिनमें अर्थात् अमावास्यामें पितृगण पूजित होनेपर सदैव प्रसन्न होकर प्रजावृद्धि, धन-रक्षा, आयु तथा बल-शक्ति प्रदान करते हैं। उपवासके बिना भी ये पितृगण उक्त फलको देनेवाले होते हैं। अतः मानवको चाहिये कि पितरोंको भक्तिपूर्वक पूजाके द्वारा सदा प्रसन्न रखे। मूलमन्त्र, नाम-संकीर्तन और अंश मन्त्रोंसे कमलके मध्यमें स्थित तिथियोंके स्वामी देवताओंकी विविध उपचारोंसे भक्तिपूर्वक यथाविधि पूजा करनी चाहिये तथा जप-होमादि कार्य सम्पन्न करने चाहिये। इसके प्रभावसे मानव इस लोकमें और परलोकमें सदा सुखी रहता है। उन-उन देवोंके लोकोंको प्राप्त करता है और मनुष्य उस देवताके अनुरूप हो जाता है। उसके सारे अरिष्ट नष्ट हो जाते हैं तथा वह उत्तम रूपवान्,

धार्मिक, शत्रुओंका नाश करनेवाला राजा होता है।

इसी प्रकार सभी नक्षत्र-देवता जो नक्षत्रोंमें ही व्यवस्थित हैं, वे पूजित होनेपर समस्त अभीष्ट कामनाओंको प्रदान करते हैं, अब मैं उनके विषयमें बताता हूँ। अश्विनी नक्षत्रमें अश्विनीकुमारोंकी पूजा करनेसे मनुष्य दीर्घायु एवं व्याधिमुक्त होता है। भरणी नक्षत्रमें कृष्णवर्णके सुन्दर पुष्पों तथा शुभ्र कर्पूरादि गन्धसे पूजित यमदेव अपमृत्युसे मुक्त कर देते हैं। कृत्तिका नक्षत्रमें रक्त पुष्पोंसे बनी हुई माल्यादि और होमके द्वारा पूजा करनेसे अग्निदेव निश्चित ही यथेष्ट फल देते हैं। रोहिणी नक्षत्रमें प्रजापति—मुझ ब्रह्माकी पूजा करनेसे मैं उसकी अभिलाषा पूर्ण कर देता हूँ। मृगशिरा नक्षत्रमें पूजित होनेपर उसके स्वामी चन्द्रदेव उसे ज्ञान और आरोग्य प्रदान करते हैं। आर्द्रा नक्षत्रमें शिवके अर्चनसे विजय प्राप्त होती है। सुन्दर कमल आदि पुष्पोंसे पूजे गये भगवान् शिव सदा कल्याण करते हैं।

पुनर्वसु नक्षत्रमें अदितिकी पूजा करनी चाहिये। पूजासे संतृप्त होकर वे माताके सदृश रक्षा करती हैं। पुष्य नक्षत्रमें उसके स्वामी बृहस्पति अपनी पूजासे प्रसन्न होकर प्रचुर सद्बुद्धि प्रदान करते हैं। आश्लेषा नक्षत्रमें नागोंकी पूजा करनेसे नागदेव निर्भय कर देते हैं, काटते नहीं। मघा नक्षत्रमें हव्य-कव्यके द्वारा पूजे गये सभी पितृगण धन-धान्य, भृत्य, पुत्र तथा पशु प्रदान करते हैं। पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्रमें पूषाकी पूजा करनेपर विजय प्राप्त हो जाती है और उत्तराफाल्गुनी नक्षत्रमें भग नामक सूर्यदेवकी पुष्पादिसे पूजा करनेपर वे विजय, कन्याको अभीप्सित पति और पुरुषको अभीष्ट पत्नी प्रदान करते हैं तथा उन्हें रूप एवं द्रव्य-सम्पदासे सम्पन्न बना देते हैं। हस्त नक्षत्रमें भगवान् सूर्य गन्ध-पुष्पादिसे पूजित होनेपर सभी प्रकारकी धन-सम्पत्तियाँ प्रदान करते हैं। चित्रा नक्षत्रमें पूजे गये भगवान् त्वष्टा शत्रुरहित राज्य प्रदान करते हैं। स्वाती नक्षत्रमें वायुदेव पूजित होनेपर संतुष्ट हो परमशक्ति प्रदान करते हैं। विशाखा नक्षत्रमें लाल पुष्पोंसे इन्द्राग्निका पूजन करके मनुष्य इस लोकमें धन-धान्य प्राप्तकर सदा तेजस्वी रहता है।

अनुराधा नक्षत्रमें लाल पुष्पोंसे भगवान् मित्रदेवकी भक्तिपूर्वक विधिवत् पूजा करनेसे लक्ष्मीकी प्राप्ति होती है और वह इस लोकमें चिरकालतक जीवित रहता है। ज्येष्ठा नक्षत्रमें देवराज इन्द्रकी पूजा करनेसे मनुष्य पुष्टि प्राप्त करता है तथा गुणोंमें, धनमें एवं कर्ममें सबसे श्रेष्ठ हो जाता है। मूल नक्षत्रमें सभी देवताओं और पितरोंकी भक्तिपूर्वक पूजा करनेसे मानव स्वर्गमें अचलरूपसे निवास करता है और पूर्वोक्त फलोंको प्राप्त करता है। पूर्वाषाढ़ा नक्षत्रमें अप्-देवता (जल)-की पूजा और हवन करके मनुष्य शारीरिक तथा मानसिक संतापोंसे मुक्त हो जाता है। उत्तराषाढ़ा नक्षत्रमें विश्वेदेवों और भगवान् विश्वेश्वरकी पुष्पादिद्वारा पूजा करनेसे मनुष्य सभी कुछ प्राप्त कर लेता है।

श्रवण नक्षत्रमें श्वेत, पीत और नीलवर्णके पुष्पोंद्वारा भक्तिभावसे भगवान् विष्णुकी पूजा कर मनुष्य उत्तम लक्ष्मी और विजयको प्राप्त करता है। धनिष्ठा नक्षत्रमें गन्ध-पुष्पादिसे वसुओंके पूजनसे मनुष्य बहुत बड़े भयसे भी मुक्त हो जाता है। उसे कहीं कुछ भी भय नहीं रहता। शतभिषा नक्षत्रमें इन्द्रकी पूजा करनेसे मनुष्य व्याधियोंसे मुक्त हो जाता है और आतुर व्यक्ति पुष्टि, स्वास्थ्य और ऐश्वर्यको प्राप्त करता है। पूर्वाभाद्रपद नक्षत्रमें शुद्ध स्फटिक मणिके समान कान्तिमान् अजन्मा प्रभुकी पूजा करनेसे उत्तम भक्ति और विजय प्राप्त होती है। उत्तराभाद्रपद नक्षत्रमें अहिर्बुध्न्यकी पूजा करनेसे परम शान्तिकी प्राप्ति होती है। रेवती

नक्षत्रमें श्वेत पुष्पसे पूजे गये भगवान् पूषा सदैव मङ्गल प्रदान करते हैं और अचल धृति तथा विजय भी देते हैं।

अपनी सामर्थ्यके अनुसार भक्तिसे किये गये पूजनसे ये सभी सदा फल देनेवाले होते हैं। यात्रा करनेकी इच्छा हो अथवा किसी कार्यको प्रारम्भ करनेकी इच्छा हो तो नक्षत्र-देवताकी पूजा आदि करके ही वह सब कार्य करना उचित है। इस प्रकार करनेपर यात्रामें तथा क्रियामें सफलता होती है—ऐसा स्वयं भगवान् सूर्यने कहा है।

ब्रह्माजीने कहा—मधुसूदन! आप भक्तिपूर्वक सूर्यकी आराधना करें; क्योंकि भगवान् सूर्यकी नित्य पूजा, नमस्कार, सेवा-व्रत, उपवास, हवनादि तथा विविध प्रकारसे ब्राह्मणोंको तृप्त करनेसे मनुष्य पापरहित होकर सूर्यलोकको प्राप्त करता है।

(अध्याय १०२)

सूर्य-पूजाका माहात्म्य

ब्रह्माजी बोले—मधुसूदन! जो मनुष्य भक्तिपूर्वक सूर्यदेवका मन्दिर बनवाता है, वह अपनी सात पीढ़ियोंको दिव्य सूर्यलोक प्राप्त करा देता है। सूर्यदेवके मन्दिरमें जितने वर्षपर्यन्त भगवान् सूर्यकी पूजा होती है, उतने हजार वर्षोंतक वह सूर्यलोकमें आनन्द प्राप्त करता है। जिसके घरमें अर्घ्य, पुष्प, चन्दन, नैवेद्य आदिके द्वारा भगवान् सूर्यकी विधिपूर्वक आराधना होती है, वह चाहे सकाम हो या निष्काम, वह सूर्यकी साम्यता प्राप्त कर लेता है। भगवान् सूर्यमें अपने मनको लगाकर जो व्यक्ति अत्यन्त सुगन्धित मनोहारी पुष्प, विजय तथा अमृतादि नामक धूप, अत्यधिक सुगन्धित कर्पूरादिके विलेपनका लेप, दीपदान, नैवेद्य आदि उपहार भगवान् सूर्यनारायणको प्रतिदिन अर्पण करता है, वह अपनी अभीष्ट इच्छा प्राप्त कर लेता है। यज्ञाधिपति भगवान् भास्कर यज्ञोंसे भी प्रसन्न होते हैं, किंतु धनवान् तथा लोकसंचयी मनुष्य ही बहुत-से संसाधनों और नाना प्रकारके सम्भारोंसे युक्त एवं विस्तृत (अश्वमेध तथा राजसूयादि) यज्ञ सम्पन्न कर पाते हैं, इसलिये यदि मनुष्य भगवान् सूर्यकी भक्तिभावसे दूर्वाङ्कुरोंसे भी पूजा करते हैं तो सूर्यदेव उन्हें इन सभी यज्ञोंके करनेसे प्राप्त होनेवाले अति दुर्लभ फलको प्रदान कर देते हैं।

सूर्यदेवको अर्पित करनेयोग्य पुष्प, भोज्य-पदार्थ—नैवेद्य, धूप, गन्ध और शरीरमें लगानेवाला अनुलेप्य-पदार्थ, भूषण और लाल वस्त्र जो भी उपहार तथा भक्ष्य फल है, वह सब सूर्यदेवके अनुरूप होना चाहिये। उन आदिदेव यज्ञपुरुषकी आप यथाशक्ति आराधना करें। भगवान् सूर्यके मन्दिरमें जो चित्रभानु भगवान् दिवाकरको तीर्थके पवित्र जल, गन्ध, मधु, घृत और दूधसे स्नान कराता है, वह स्वर्गलोकके समान मधुर दूध-दहीसे सम्पन्न हो जाता है अथवा शाश्वत शान्तिको प्राप्त कर लेता है। अनेक विदेहवंशीय जनक नामसे प्रख्यात राजा और हैहयवंशी नृपतिगण भगवान् सूर्यकी आराधनासे अमरत्वको प्राप्त हो गये हैं। इसलिये आप भी विधिपूर्वक उपासनासे भगवान् भास्करको संतुष्ट करें, इससे प्रसन्न हुए भगवान् सूर्य शान्ति प्रदान करते हैं।

विष्णुने पूछा—ब्रह्मन्! भगवान् सूर्य उपवाससे कैसे संतुष्ट होते हैं? उपवास करनेवाले भक्तके द्वारा इनकी आराधना किस प्रकार की जाय? इसे आप बतायें।

ब्रह्माजीने कहा—जब भोगपरायण व्यक्ति भी धूप, पुष्प आदि उपचारोंसे भगवान् सूर्यकी तन्मयतापूर्वक आराधना कर कल्याण प्राप्त कर

लेता है तो फिर उपवास-परायण व्यक्ति यदि आराधना करता है तो उसके कल्याणके विषयमें कहना ही क्या है?

पापोंसे दूर रहना, सद्गुणोंका आचरण करना और सम्पूर्ण भोगोंसे विरत रहना उपवास कहलाता है। जो उपवास-परायण पुरुष भक्तिभावसे एक रात, दो रात अथवा तीन रात भगवान् सूर्यका ध्यान करता है, उनके नामका जप करता है और उनके उद्देश्यसे ही सम्पूर्ण कार्य करता है तथा उन्हींमें अपना मन लगाये हुए है, ऐसा अनासक्त पुरुष भगवान् सूर्यकी पूजा कर उस परम ब्रह्मको प्राप्त कर लेता है। जो मनुष्य किसी कामनावश अपने मनको भगवान् सूर्यमें लगाकर ध्यानपूर्वक उनकी उपासना करता है, वह वृषध्वज भगवान् सूर्यके प्रसन्न होनेपर उस उद्देश्यको प्राप्त कर लेता है।

विष्णुने पूछा—विभो! ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र तथा स्त्री आदि सभी सांसारिक पङ्कमें फँसे हुए हैं, उन्हें सुगति कैसे प्राप्त होगी?

ब्रह्माजीने कहा—मनुष्य निष्कपटभावसे तिमिरहर भगवान् भास्करकी आराधना करके सद्गति प्राप्त कर सकता है। जो व्यक्ति विषयोंमें आसक्त है तथा भगवान् सूर्यमें मन नहीं लगाता, ऐसा पाप-कर्म करनेवाला मनुष्य सद्गति कैसे प्राप्त कर सकेगा? संसारके दुःखसे पीड़ित व्यक्ति सद्गति प्राप्त करना चाहता है तो उस लोकपूज्य सर्वेश्वर भगवान् ग्रहाधिपति सूर्यकी पुष्प, सुगन्धित धूप, अगरु, चन्दन, वस्त्र, आभूषण तथा भक्ष्य-नैवेद्यादि उपचारोंसे उपवास-परायण होकर आराधना करे। यदि संसारसे विरक्त होकर सद्गति प्राप्त करनेकी अभिलाषा हो तो कालके स्वामी सूर्यदेवकी आराधना करे। यदि उनकी आराधनाके लिये पुष्प नहीं है तो शुभ वृक्षोंके कोमल पल्लवों एवं दूर्वाङ्कुरोंसे भी पूजा की जा सकती है। अपनी सामर्थ्यके अनुसार पुष्प-पत्र-जल तथा धूपसे भक्तिभावपूर्वक भगवान् भास्करकी पूजा कर वह अतुलनीय संतुष्टि प्राप्त कर सकता है। सूर्यदेवके लिये विधिवत् एक बार भी किया गया प्रणाम दस अश्वमेध-यज्ञके बराबर होता है। दस अश्वमेध-यज्ञको करनेवाला मनुष्य बार-बार जन्म लेता है, किंतु सूर्यदेवको प्रणाम करनेवाला पुनः संसारमें जन्म नहीं लेता*।

इस प्रकार भक्तिपूर्वक जिसके द्वारा विधि-विधानसे भगवान् सूर्यकी उपासना की जाती है, वह उत्तम गति प्राप्त करता है। उन्हींकी आराधना करके मैंने संसार-पूज्य इस ब्रह्मत्वको प्राप्त किया है। आपने भी पहले उन्हीं सूर्यदेवसे अपनी अभीष्ट इच्छाओंको प्राप्त किया। भगवान् शङ्कर भी उन्हींकी आराधनासे ब्रह्महत्यासे मुक्त हुए। भगवान् दिवाकरकी आराधनासे किन्हीं मनुष्योंने देवत्व, किन्हींने गन्धर्वत्व और किन्हींने विद्याधरत्व प्राप्त किया है। लेख नामक इन्द्रने एक सौ यज्ञोंद्वारा इन्हीं भगवान् सूर्यकी आराधना करके इन्द्रत्व प्राप्त किया, इसलिये भगवान् सूर्यके अतिरिक्त अन्य कोई देव पूजनीय नहीं है। ब्रह्मचारीको अन्य देवोंकी अपेक्षा अपने श्रेष्ठ गुरु भगवान् भास्करकी ही आराधना करनी चाहिये, क्योंकि वे यज्ञ-पुरुष विवस्वान् भगवान् सूर्य सर्वदा पूज्य हैं। स्त्रियोंके लिये पतिके अतिरिक्त विभावसु भगवान् सूर्यदेव ही पूज्य हैं। गृहस्थ-पतिके लिये भी गोपति अंशुमान् ही पूजनेयोग्य हैं। वैश्योंको भी तमोनाशक सूर्यदेवकी पूजा करनी चाहिये। संन्यासियोंके लिये भी सदैव विभावसु ही ध्यान करनेयोग्य हैं।

---

* एकोऽपि हेलेः सुकृतः प्रणामो दशाश्वमेधावभृथेन तुल्यः। दशाश्वमेधी पुनरेति जन्म हेलिप्रणामी न पुनर्भवाय॥
(ब्राह्मपर्व १०३। ४५)

इस प्रकार सभी वर्णों तथा सभी आश्रमोंके लिये चित्रभानु भगवान् सूर्यनारायण ही उपास्य हैं। उनकी आराधनासे सद्गति प्राप्त हो जाती है। (अध्याय १०३)

त्रिवर्ग-सप्तमीकी महिमा

ब्रह्माजी बोले—विष्णो! जिन-जिन कामनाओंको लेकर अथवा निष्काम होकर भगवान् सूर्यनारायणके उपवास-व्रतोंको करके व्यक्ति मनोवाञ्छित फल प्राप्त करता है, अब आप उन-उन उपवास-व्रतोंके विषयमें सुनें।

जो व्यक्ति फाल्गुन मासकी शुक्ला सप्तमी तिथिको भक्तिपूर्वक बार-बार हेलि नामक भगवान् सूर्यका जप एवं पूजन करता है, वह सूर्यलोकको प्राप्त होता है। देव-पूजनमें पवित्र होकर १०८ बार जप करना चाहिये। स्नान करते हुए, प्रस्थान-कालमें, उठते-बैठते अर्थात् सभी समय भगवान् सूर्यका नामोच्चारण करना चाहिये। उपवास करनेवाले व्यक्तिको पाखण्डी, पतित और अन्यायी लोगोंसे बातचीत नहीं करनी चाहिये। श्रद्धापूर्वक सूर्यदेवके प्रति मन एकाग्र करके उनकी पूजा करते हुए इस श्लोकका पाठ करना चाहिये—

हंस हंस कृपालुस्त्वमगतीनां गतिर्भव।
संसारार्णवमग्नानां त्राता भव दिवाकर॥

(ब्राह्मपर्व १०४।५)

'हे परमहंस-स्वरूप भगवान् सूर्य! आप दयालु हैं, गतिहीनोंको सद्गति प्रदान करनेवाले हैं, संसार-सागरमें निमग्न लोगोंके लिये आप रक्षक बनें।'

इस प्रकार एकाग्रचित्त होकर उपवास करते हुए भगवान् सूर्यनारायणका पूजन करना चाहिये। पूर्वाह्णकालमें स्नानकर सूर्यदेवका पूजन करे, तत्पश्चात् '**हंस हंस०**' इस श्लोकका जप करे और भगवान् सूर्यके चरणोंमें तीन बार जलधारा अर्पित करे।

इसी प्रकार चैत्र, वैशाख और ज्येष्ठ मासमें भी भगवान् सूर्यदेवका पूजन करते हुए मनुष्य मृत्युलोकमें ही श्रेष्ठ गतिको प्राप्त कर लेता है और अन्तमें सूर्यलोकको प्राप्त करता है। आषाढ़, श्रावण, भाद्रपद और आश्विन मासमें भी इसी विधिसे उपवास रखकर सूर्यभगवान्का 'मार्तण्ड' नामसे सम्यक् पूजन और जप करना चाहिये। गोमूत्रके प्राशनसे पवित्र मनुष्य धनवान् होकर कुबेरलोकको प्राप्त करता है। संसारके स्वामी अव्यय आत्मस्वरूप भगवान् सूर्यनारायणकी आराधना एवं अन्तकालमें भगवान् सूर्यका स्मरण करनेसे सूर्यलोककी प्राप्ति होती है। कार्तिक आदि चार महीनोंमें दूधका प्राशन करना चाहिये। इन महीनोंमें 'भास्कर' नामसे भगवान् सूर्यका पूजन तथा जप करना चाहिये। ऐसा करनेपर व्यक्ति भगवान् सूर्यके लोकको प्राप्त होता है। प्रत्येक मासमें ब्राह्मणोंको यथाभिलषित दान देना चाहिये। चातुर्मासकी समाप्तिपर पुराण-वाचन कराना चाहिये और कीर्तनका आयोजन करना चाहिये। विद्वानोंको चाहिये कि कथावाचककी पूजा करके श्राद्धकर्म करें, क्योंकि सिद्ध मालपूआ आदि पक्वान्नोंद्वारा कथावाचक या ब्राह्मणके सहयोगसे किया गया यथोचित श्राद्ध भगवान् सूर्यनारायणको अभीष्ट है। यह तिथि अभीष्ट धर्म, अर्थ तथा काम—इस त्रिवर्गको सदैव देनेवाली है। (अध्याय १०४)

कामदा एवं पापनाशिनी-सप्तमी-व्रत-वर्णन

ब्रह्माजी बोले—विष्णो! फाल्गुन मासमें शुक्ल पक्षकी सप्तमीको उपवास करके भगवान् सूर्यनारायणकी विधिवत् पूजा करनी चाहिये। तत्पश्चात् दूसरे दिन अष्टमीको प्रातः उठकर स्नानादिसे निवृत्त हो भक्तिपूर्वक सूर्यदेवका सम्यक् पूजन करके ब्राह्मणोंको दक्षिणा देनी चाहिये। श्रद्धापूर्वक भगवान् सूर्यके निमित्त आहुतियाँ प्रदान कर भगवान् भास्करको प्रणाम कर इस प्रकार प्रार्थना करनी चाहिये—

यमाराध्य पुरा देवी सावित्री कामनाय वै।
स मे ददातु देवेशः सर्वान् कामान् विभावसुः॥
यमाराध्यादितिः प्राप्ता सर्वान् कामान् यथेप्सितान्।
स ददात्वखिलान् कामान् प्रसन्नो मे दिवस्पतिः॥
भ्रष्टराज्यश्च देवेन्द्रो यमभ्यर्च्य दिवस्पतिः।
कामान् सम्प्राप्तवान् राज्यं स मे कामं प्रयच्छतु॥

(ब्राह्मपर्व १०५। ५—७)

'प्राचीन समयमें देवी सावित्रीने अपनी अभीष्ट-सिद्धिके लिये जिन आराध्यदेवकी आराधना की थी, वही मेरे आराध्य भगवान् सूर्य मेरी सभी कामनाओंको प्रदान करें। देवी अदितिने जिनकी आराधना करके अपने सभी अभीष्ट मनोरथोंको प्राप्त कर लिया था, वही दिवस्पति भगवान् भास्कर प्रसन्न होकर मेरी सभी अभिलाषाओंको पूर्ण करें। (दुर्वासा मुनिके शापके कारण) राजपदसे च्युत देवराज इन्द्रने जिनकी अर्चना करके अपनी सभी कामनाओंको प्राप्त कर लिया था, वही दिवस्पति मेरी कामना पूर्ण करें।'

हे गरुडध्वज! इस प्रकार भगवान् सूर्यकी प्रार्थना कर पूजा सम्पन्न करे। अनन्तर संयत होकर हविष्यान्नका भोजन करे। फाल्गुन, चैत्र, वैशाख और ज्येष्ठ—इन चार मासोंमें इस प्रकारसे व्रतकी पारणा करनेका विधान है। भक्तिपूर्वक करवीरके पुष्पोंसे चारों महीने सूर्यकी पूजा करनी चाहिये। कृष्ण अगरुकी धूप जलानी चाहिये और गो-शृङ्गका जल प्राशन करना चाहिये तथा खाँड़-मिश्रित पक्वान्नका नैवेद्य देकर ब्राह्मणोंको भोजन कराना चाहिये।

आषाढ़ आदि चातुर्मासमें पारणकी क्रिया इस प्रकार है—इन महीनोंमें चमेलीके पुष्प, गुग्गुलका धूप, कुएँका जल और पायसके नैवेद्यका विधान है। स्वयं भी उसी पायसके नैवेद्यको ग्रहण करना चाहिये।

कार्तिक आदि चातुर्मासमें गोमूत्रसे शरीर-शोधन करना चाहिये। दशाङ्ग*-धूप, रक्त कमल तथा कसारका नैवेद्य भगवान् सूर्यको निवेदित करना चाहिये। प्रत्येक महीनेमें ब्राह्मणोंको दक्षिणा देनी चाहिये। प्रत्येक पारणामें भक्तिपूर्वक सूर्यनारायणको प्रसन्न करनेका प्रयास करना चाहिये और यथाशक्ति संचित धनका दान करना चाहिये। वित्तशाठ्यता (कंजूसी) न करे। क्योंकि सद्भावसे पूजा करनेपर तथा दान आदिसे सात घोड़ोंसे युक्त रथपर आरूढ़ होनेवाले भगवान् सूर्य प्रसन्न होते हैं। पारणाके अन्तमें यथाशक्ति जल आदिसे स्नान कराकर पूजा करनेपर भगवान् सूर्य प्रसन्न हो निर्बाधरूपसे मनोवाञ्छित फल प्रदान करते हैं। यह सप्तमी पुण्यदायिनी, पापविनाशिनी तथा सभी फलोंको देनेवाली है। मनुष्यकी जैसी अभिलाषाएँ होती हैं, वैसे ही फल प्राप्त होते हैं। इस व्रतको करनेवाला व्यक्ति सूर्यके समान ही तेजस्वी बनकर स्वर्णमय विमानपर आरूढ़ हो सूर्यलोकको प्राप्त करता है

* कर्पूरं चन्दनं मुस्तामगरुं तगरं तथा। ऊषणं शर्करा कृष्णं सुगन्धं सिह्लकं तथा॥
दशाङ्गोऽयं स्मृतो धूपः प्रियो देवस्य सर्वदा॥ (ब्राह्मपर्व १०५। १५-१६)
कर्पूर, चन्दन, नागरमोथा, अगरु, तगर, ऊषण, शर्करा, दालचीनी, कस्तूरी तथा सुगन्ध—इन्हें समभागमें मिलाकर दशाङ्ग नामक धूप बनाया जाता है। यह धूप भगवान् सूर्यदेवको सर्वदा प्रिय है।

तथा वहाँ शाश्वती शान्तिको प्राप्त करता है। वहाँसे पुनः पृथ्वीपर जन्म लेकर उन गोपति सूर्यभगवान्‌की ही कृपासे प्रतापी राजा होता है।

इसी प्रकार उत्तरायणके सूर्यमें शुक्ल पक्षमें भग, अर्यमा, सूर्य आदिके नक्षत्रोंके पड़नेपर दान-मानसे भगवान् सूर्यकी पूजा कर उन्हें प्रसन्न करना चाहिये। इससे सम्पूर्ण पाप नष्ट हो जाते हैं। इसे पापनाशिनी सप्तमी कहा जाता है। (अध्याय १०५-१०६)

सूर्यपदद्वय-व्रत, सर्वाप्ति-सप्तमी एवं मार्तण्ड-सप्तमीकी विधि

ब्रह्माजी बोले—धर्मज्ञ! अब मैं जगद्धाता देवदेवेश्वर भगवान् सूर्यनारायणके पदद्वय-माहात्म्यका वर्णन करता हूँ, इसे आप सुनें।

अंशुमाली सूर्यदेवने संसारके कल्याणकी कामनासे अपने दोनों पादोंको एक पादपीठपर रखा है। उनके वामपादको उत्तरायण और दक्षिणपादको दक्षिणायनके रूपमें जानना चाहिये। सभी इन्द्र आदि देवगण इनके चरणोंकी वन्दना करते रहते हैं। हम और आप सूर्यदेवके दक्षिणपादकी अर्चना करते हैं। विष्णु तथा शङ्कर श्रद्धापूर्वक उनके वामपादकी पूजा करते हैं। जो मानव प्रत्येक सप्तमीको भगवान् सूर्यदेवकी विधिवत् आराधना करता है, उसपर वे सदा संतुष्ट रहते हैं।

भगवान् विष्णुने पूछा—गोलोकस्वामी सूर्य-नारायणकी आराधना किस प्रकार की जाती है? उसका आप वर्णन करें।

ब्रह्माजी बोले—उत्तरायण प्रारम्भ होनेके दिन स्नान करके संयमित मनसे घृत-दुग्ध आदि पदार्थोंके द्वारा भगवान् सूर्यको स्नान कराना चाहिये। सुन्दर वस्त्रोपहार, पुष्प-धूप तथा अनुलेपनादिसे उनकी विधिवत् पूजा कर ब्राह्मणोंको भोजन और दक्षिणादिसे संतुष्ट करना चाहिये। उसके बाद सूर्यभक्ति-परायण व्यक्तिको उनके पदद्वय-व्रतका विधान ग्रहण करना चाहिये। तदनन्तर स्नान करके 'चित्रभानु' दिवाकरकी वन्दना करनी चाहिये। खाते-चलते, सोते-जागते, प्रणाम करते, हवन और पूजन करते समय भगवान् चित्रभानुका ही जप करते हुए प्रतिदिन उनके नाम-कीर्तनका ही तबतक जप करना चाहिये, जबतक दक्षिणायनका समय न आ जाय। उनकी प्रार्थना इस प्रकार करनी चाहिये—

परमात्ममयं ब्रह्म चित्रभानुमयं परम्।
यमन्ते संस्मरिष्यामि स मे भानुः परा गतिः॥

(ब्राह्मपर्व १०७। १७)

'चित्रभानु परमात्ममय परम ब्रह्म हैं, जिनका अन्तकालमें मैं भलीभाँति स्मरण करूँगा, क्योंकि वे ही सूर्यनारायण मेरी परम गति हैं।'

इस प्रकार स्तुति करके षाण्मासिक भगवान् सूर्यके व्रतको तबतक करना चाहिये, जबतक दक्षिणायन पूर्णरूपसे न आ जाय। उसके पश्चात् यथाशक्ति ब्राह्मणोंको भोजन कराकर भगवान् मार्तण्डके सामने पुण्य-कथा और आख्यानका पाठ करना चाहिये। भक्तिपूर्वक यथाशक्ति वाचक और लेखकका पूजन भी करना चाहिये। इस प्रकार जो मनुष्य यह व्रत करता है, उसको इसी जन्ममें सभी पापोंसे मुक्ति मिल जाती है। यदि इस छः मासके बीचमें ही व्रतीकी मृत्यु हो जाती है तो उसे पूर्ण उपवासका फल प्राप्त होता है। इसके अतिरिक्त उसे भगवान् सूर्यनारायणके चरणद्वय-पूजनका फल भी मिलता है।

ब्रह्माजी पुनः बोले—माघ मासके कृष्ण पक्षकी सप्तमीको सर्वाप्ति-सप्तमी कहते हैं। इस व्रतसे सभी अभीप्सित कामनाएँ पूर्ण हो जाती हैं। इस व्रतमें पाखण्डी आदि दुराचारियोंसे वार्तालाप

न करे और एकाग्र-मनसे विनम्र होकर उन्हीं भगवान् सूर्यका पूजन करे।

माघ आदि छः मासोंमें प्रत्येक संक्रान्तिको पारणा मानी गयी है। तदनुसार माघ आदि छः मासोंमें क्रमशः 'मार्तण्ड', 'क', 'चित्रभानु', 'विभावसु', 'भग' और 'हंस'—ये छः नाम कहे गये हैं। पूरे छः मासोंमें घृत-दुग्धादि पञ्चगव्य पदार्थोंको स्नान और प्राशनके लिये प्रशस्त एवं पापनाशक माना गया है।

इस व्रतमें तेल और क्षार पदार्थ ग्रहण न करे, रात्रिमें जागरण करे। संसारमें सब कुछ देनेवाली यह तिथि सर्वार्थावाप्ति-सप्तमीके नामसे विख्यात है। हे अनघ! अब मैं कल्याण करनेवाली मार्तण्ड-सप्तमीका वर्णन कर रहा हूँ।

यह व्रत पौष मासके शुक्ल पक्षकी सप्तमीको किया जाता है। इसके सम्यक् अनुष्ठानसे अभीष्ट फलकी प्राप्ति होती है। इस दिन व्रत रहकर भगवान् सूर्यका 'मार्तण्ड' नामसे पूजन एवं निरन्तर जप करना चाहिये। ब्राह्मणकी भी विशेष श्रद्धा-भक्तिसे पूजा करनी चाहिये। इस प्रकार पवित्र मनसे सभी मासोंमें उपासना करके प्रत्येक मासमें अपनी शक्तिके अनुसार ब्राह्मणोंको गौ आदिका दान देना चाहिये। दूसरे वर्षमें उपवासपूर्वक यथाशक्ति सूर्यनारायणके निमित्त गौ आदिका दान देनेसे व्रती साक्षात् भगवान् मार्तण्डके लोकको प्राप्त करता है। इस मार्तण्ड नामक सप्तमीकी नक्षत्रगण उपासना करके ही द्युलोकमें प्रकाशित होते हुए आज भी स्थित दृष्ट होते हैं। (अध्याय १०७—१०९)

अनन्त-सप्तमी तथा अव्यङ्ग-सप्तमीका विधान

ब्रह्माजीने कहा—अच्युत! भाद्रपद मासमें शुक्ल पक्षकी सप्तमी तिथिको जितेन्द्रिय होकर सप्ताश्ववाहन भगवान् आदित्यको प्रणाम करके पुष्प-धूप आदि सामग्रियोंसे इनका पूजन करना चाहिये। पाखण्डी आदि दुराचारियोंसे आलाप न करे। ब्राह्मणको दक्षिणा देकर रात्रिमें मौन होकर भोजन करना चाहिये। इस विधानसे बैठते-चलते, प्रस्थान करते और गिरने-पड़नेकी स्थितिमें प्रत्येक समय आदित्य नामका स्मरण तथा उच्चारण करते हुए क्रमशः द्वादश मासतक व्रत और जगद्गुरु भगवान् सूर्यका पूजन करना चाहिये। व्रतकी पारणामें पुण्य-पुराणकी कथाका श्रवण करे। सूर्यदेवको प्रसन्न करे, इससे पुष्टिलाभ होता है। इस सप्तमीमें कथाश्रवणसे अनन्त फलोंकी प्राप्ति होती है।

श्रावण मासकी शुक्ला सप्तमीको अव्यङ्ग-सप्तमी कहा जाता है। इस दिन सप्ताश्ववाहन भगवान् सूर्यकी पुष्प-धूपादिसे पूजा करे। पाखण्डियोंसे वार्ता न करे, नियतात्मा होकर रहे। ब्राह्मणको दक्षिणा देकर मौन हो रात्रिमें भोजन करे। प्रतिवर्ष अव्यङ्ग बनाकर उन्हें निवेदित करे*। अव्यङ्ग-समर्पणके समय विविध प्रकारके बाजे बजवाने चाहिये। ब्राह्मणलोग वेदमन्त्रोंका उच्चारण करें। जिस प्रकार श्रावण मासमें अन्य देवताओंको पवित्रार्पण किया जाता है, उसी प्रकार सूर्यनारायणको भी प्रत्येक श्रावण मासमें अव्यङ्ग अर्पण करनेका विधान है।

इस प्रकार द्वादश मासपर्यन्त इस व्रतको करे। अन्तमें पारणा करनी चाहिये और ब्राह्मणोंको यथाशक्ति

* भविष्यपुराणमें अव्यङ्ग शब्द बार-बार आता है। यह सूतसे बनता है, जिसका भोजक ब्राह्मणके लिये कटिप्रदेशमें बाँधनेका विधान है। इसका वर्णन आगेके १४२ वें अध्यायमें आया है। इसे वहीं देखना चाहिये।

भोजन कराकर दक्षिणा देनी चाहिये। जो मनुष्य पवित्र होकर व्रत करके सूर्यनारायणकी आराधना करता है, वह भगवान् वनमाली सूर्यदेवके परम दिव्यलोकको प्राप्त होता है। (अध्याय ११०-१११)

सूर्यपूजामें भाव-शुद्धिकी आवश्यकता एवं त्रिप्राप्ति-सप्तमी-व्रत

ब्रह्माजी बोले—गरुडध्वज! भक्तिपूर्वक शुद्ध हृदयसे मात्र जलार्पणद्वारा भी सूर्यभगवान्‌की पूजा करनेपर दुर्लभ फलकी प्राप्ति हो जाती है। राग-द्वेषादिसे रहित हृदय, असत्य आदिसे अदूषित वाणी और हिंसावर्जित कर्म—ये भगवान् भास्करकी आराधनाके श्रेष्ठ तीन प्रकार हैं। रागादि दोषोंसे दूषित हृदयमें तिमिरविनाशक सूर्यनारायणकी रश्मियोंका स्पन्दन भी नहीं होता, फिर उनके निवासकी बात कौन कहे? यहाँतक कि वह तो भगवान् सूर्यके द्वारा संसारपङ्कमें निमग्न कर दिया जाता है।

जिस प्रकार चन्द्रमाकी कला अन्धकारको दूर करनेमें सर्वथा सफल नहीं होती, उसी प्रकार हिंसादिसे दूषित कर्मके द्वारा सूर्यनारायणकी पूजामें कैसे सफलता प्राप्त हो सकती है? चित्तकी अप्रसन्नताके कारण भी मनुष्य सूर्यदेवको प्राप्त नहीं कर सकता है। इसलिये सत्य-स्वभाव, सत्य-वाक्य और अहिंसक कर्मसे ही स्वभावतः भगवान् आदित्य प्रसन्न होते हैं। यदि मनुष्य कलुषित-हृदयसे भगवान् देवेशको सब कुछ दे दे, तो तब भी उन देवदेवेश्वर भगवान् दिवाकरकी आराधना नहीं होती। अतः आप अपने हृदयको रागादि द्वेषोंसे रहित बनाकर भगवान् भास्करके लिये अर्पित करें। ऐसा करनेपर दुष्प्राप्य भगवान् भास्करको आप अनायास ही प्राप्त कर लेंगे।

विष्णुने कहा—आपने बताया कि भास्कर हमारे लिये पूजनीय हैं, अतः उनकी सम्पूर्ण आराधना-विधि आप मुझे बतायें। ब्रह्मन्! श्रेष्ठ कुलमें जन्म, आरोग्य और दुर्लभ धनकी अभिवृद्धि—ये तीनों जिसके द्वारा प्राप्त होते हैं, उस त्रिप्राप्ति-व्रतको भी हमें बतायें।

ब्रह्माजी बोले—माघ मासमें कृष्ण पक्षकी सप्तमीके दिन हस्त नक्षत्रका योग रहनेपर व्रतीको चाहिये कि वह जगत्स्रष्टा सूर्यदेवकी सुगन्ध, धूप, नैवेद्य एवं उपहार आदि पूजन-सामग्रियोंके द्वारा पूजा करे। गृहस्थ पुरुष पुष्पोंके द्वारा दानादि-युक्त पूजा वर्षपर्यन्त सम्पन्न करे और वज्र (बाजरा), तिल, व्रीहि, यव, सुवर्ण, यव, अन्न, जल, ओला (ओलेका पानी), उपानह, छत्र और गुड़से बने पदार्थ, (क्रमसे प्रतिमास) मुनियों, ब्राह्मणोंको दान देना चाहिये। इस व्रतमें आत्मशुद्धिके लिये सूर्यनारायणकी पूजा करके प्रतिमास क्रमशः शाक, गोमूत्र, जल, घृत, दूर्वा, दधि, धान्य, तिल, यव, सूर्यकिरणोंसे तपा हुआ जल, कमलगट्टा और दूधका प्राशन करना चाहिये। इस विधिसे इस सप्तमी-व्रतको करनेवाला मनुष्य धन-धान्यसे परिपूर्ण, लक्ष्मीयुक्त तथा समस्त दुःखोंसे रहित होता है और श्रेष्ठ कुलमें जन्म लेकर जितेन्द्रिय, नीरोग, बुद्धिमान् और सुखी रहता है। अतः आप भी बिना प्रमाद किये ही इन प्रभासम्पन्न स्वामी भगवान् दिवाकरकी आराधना कर कामनाओंके सम्पूर्ण फलको प्राप्त करें। (अध्याय ११२)

सूर्यमन्दिर-निर्माणका फल तथा यमराजका अपने दूतोंको सूर्यभक्तोंसे दूर रहनेका आदेश, घृत तथा दूधसे अभिषेकका फल

ब्रह्माजीने कहा—हे वासुदेव! जो मनुष्य मिट्टी, लकड़ी अथवा पत्थरसे भगवान् सूर्यके मन्दिरका निर्माण करवाता है, वह प्रतिदिन किये गये यज्ञके फलको प्राप्त करता है। भगवान् सूर्यनारायणका मन्दिर बनवानेपर वह अपने कुलकी सौ आगे और सौ पीछेकी पीढ़ियोंको सूर्यलोक प्राप्त करा देता है। सूर्यदेवके मन्दिरका निर्माण-कार्य प्रारम्भ करते ही सात जन्मोंमें किया गया जो थोड़ा अथवा बहुत पाप है, वह नष्ट हो जाता है। मन्दिरमें सूर्यकी मूर्तिको स्थापित कर मनुष्य कृतकृत्य हो जाता है और उसे दोष-फलकी प्राप्ति नहीं होती तथा अपने आगे और पीछेके कुलोंका उद्धार कर देता है। इस विषयमें प्रजाओंको अनुशासित करनेवाले यमने पाशदण्डसे युक्त अपने किंकरोंसे पहले ही कहा है कि 'मेरे इस आदेशका यथोचित पालन करते हुए तुमलोग संसारमें विचरण करो, कोई भी प्राणी तुमलोगोंकी आज्ञाका उल्लङ्घन नहीं कर सकेगा। संसारके मूलभूत भगवान् सूर्यकी उपासना करनेवाले लोगोंको तुमलोग छोड़ देना, क्योंकि उनके लिये यहाँपर स्थान नहीं है। संसारमें जो सूर्यभक्त हैं और जिनका हृदय उन्हींमें लगा हुआ है, ऐसे लोग जो सूर्यकी सदा पूजा किया करते हैं, उन्हें दूरसे ही छोड़ देना। बैठते-सोते, चलते-उठते और गिरते-पड़ते जो मनुष्य भगवान् सूर्यदेवका नाम-संकीर्तन करता है, वह भी हमारे लिये बहुत दूरसे ही त्याज्य है। जो भगवान् भास्करके लिये नित्य-नैमित्तिक यज्ञ करते हैं, उन्हें तुमलोग दृष्टि उठाकर भी मत देखना। यदि तुमलोग ऐसा करोगे तो तुमलोगोंकी गति रुक जायगी। जो पुष्प-धूप-सुगन्ध और सुन्दर-सुन्दर वस्त्रोंके द्वारा उनकी पूजा करते हैं, उन्हें भी तुमलोग मत पकड़ना, क्योंकि वे मेरे पिताके मित्र या आश्रितजन हैं। सूर्यनारायणके मन्दिरमें उपलेपन तथा सफाई करनेवाले जो लोग हैं, उनके भी कुलकी तीन पीढ़ियोंको छोड़ देना। जिसने सूर्य-मन्दिरका निर्माण कराया है, उसके कुलमें उत्पन्न हुआ पुरुष भी तुमलोगोंके द्वारा बुरी दृष्टिसे देखने योग्य नहीं है। जिन भगवद्भक्तोंने मेरे पिताकी सुन्दर अर्चना की है, उन मनुष्योंको तथा उनके कुलको भी तुम सदा दूरसे ही त्याग देना।'

महात्मा धर्मराज यमके द्वारा ऐसा आदेश दिये जानेपर भी एक बार (भूलसे) यम-किंकर उनके आदेशका उल्लङ्घन करके राजा सत्राजित्के पास चले गये। परंतु उस सूर्यभक्त सत्राजित्के तेजसे वे सभी यमके सेवक मूर्च्छित होकर पृथ्वीपर वैसे ही गिर पड़े, जैसे मूर्च्छित पक्षी पर्वतपरसे भूमिपर गिर पड़ता है। इस प्रकार जो भक्त भगवान् सूर्यके मन्दिरका निर्माण करता-कराता है, वह समस्त यज्ञोंको सम्पन्न कर लेता है, क्योंकि भगवान् सूर्य स्वयं ही सम्पूर्ण यज्ञमय हैं।

ब्रह्माजी बोले—सूर्यकी प्रतिष्ठित प्रतिमाको जो घीसे स्नान कराता है, वह अपनी सभी कामनाओंको प्राप्त कर लेता है। कृष्णपक्षकी अष्टमीके दिन सूर्यभगवान्को जो घीसे स्नान कराता है, उसे सभी पापोंसे छुटकारा प्राप्त हो जाता है। सप्तमी अथवा षष्ठीके दिन सूर्यनारायणको गायके घीसे स्नान करानेसे सभी पातक दूर हो जाते हैं। संध्याकालमें घीसे स्नान करानेपर तो ज्ञात-अज्ञात सम्पूर्ण पाप दूर हो जाते हैं। सूर्यनारायण सर्वयज्ञरूप हैं और समस्त हव्य-पदार्थोंमें घी ही उत्तम पदार्थ है, इसलिये उन दोनोंका संगम होते ही सभी पाप

नष्ट हो जाते हैं। सूर्यको दूधसे स्नान करानेवाला मनुष्य सात जन्मोंतक सुखी, रोगरहित और रूपवान् होता है और अन्तमें दिव्यलोकमें निवास करता है। जैसे दूध स्वच्छ होता है और रोगादिसे मुक्ति देनेवाला है, वैसे ही दूधसे स्नान करानेपर अज्ञान हटकर निर्मल ज्ञान प्राप्त होता है। दूधके स्नानसे भगवान् सूर्यनारायण प्रसन्न होकर सभी ग्रहोंको अनुकूल करते हैं तथा सभी लोगोंको पुष्टि और प्रीति प्रदान करते हैं। घी और दूधसे तिमिर-विनाशक देवेश सूर्यदेवको स्नान करानेपर उनकी दृष्टिमात्र पड़ते ही मनुष्य सबका प्रिय हो जाता है। (अध्याय ११३-११४)

कौसल्या और गौतमीके संवादरूपमें भगवान् सूर्यका माहात्म्य-निरूपण तथा भगवान् सूर्यके प्रिय पत्र-पुष्पादिका वर्णन

ब्रह्माजी बोले—जनार्दन! देवलोकमें गौतमी और कौसल्याका सूर्यके विषयमें एक पुरातन संवाद प्रसिद्ध है। एक बार गौतमी ब्राह्मणीने स्वर्गमें अपने पतिके साथ अतिशय रमणीय कौसल्याको देखकर आश्चर्यचकित होकर पूछा—'कौसल्ये! स्वर्गमें निवास करनेवाले सैकड़ों देवता, अनेक देवाङ्गनाएँ हैं, इसी प्रकार सिद्धगण और उनकी पत्नियाँ आदि भी हैं, किंतु उनमें न ऐसी गन्ध है, न ऐसी कान्ति है, न ऐसा रूप है। धारण किये हुए वस्त्र तथा आभूषण भी ऐसे नहीं सुशोभित हो रहे हैं, जैसे कि आप दोनों स्त्री-पुरुषोंके हो रहे हैं। आप दोनोंने कौन-सा ऐसा तप, दान अथवा होमकर्म किया है, जिसका यह फल है। आप इसका वर्णन करें।'

कौसल्या बोली—गौतमी! हम दोनोंने यज्ञेश्वर भगवान् सूर्यकी श्रद्धापूर्वक आराधना की है। सुगन्धित तीर्थ-जलोंसे तथा घृतसे उन्हें स्नान कराया है। उन्हींकी कृपासे हमने स्वर्ग, निर्मल कान्ति, प्रसन्नता, सौम्यता और सुख प्राप्त किया है। हमलोगोंके पास जो भी आभूषण, वस्त्र, रत्न आदि प्रिय वस्तुएँ हैं, उन्हें भगवान् सूर्यको अर्पण करनेके बाद ही हम धारण करते हैं। स्वर्गप्राप्तिकी अभिलाषासे हम दोनोंने भगवान् सूर्यकी आराधना की थी और उस आराधनाके फलस्वरूप ही हमलोग स्वर्गका सुख भोग रहे हैं। जो निष्कामभावसे भलीभाँति सूर्यकी उपासना करता है, उसे भगवान् सूर्य मुक्ति प्रदान करते हैं। त्रिलोकके सृष्टिकर्ता सविताकी तृप्तिसे ही सब कुछ प्राप्त होता है।

ब्रह्माजी बोले—विष्णो! मार्तण्ड भगवान् सूर्यकी आराधनासे मैंने भी अभीष्ट कामनाओंको प्राप्त किया है, जो अनन्तकालतक रहनेवाली हैं। चन्दन, अगरु, कपूर, कुंकुम तथा उशीरसे जो भगवान् सूर्यको अनुलिप्त करता है, प्रसन्न होकर भगवान् सूर्य उसे लक्ष्मी प्रदान करते हैं। कालेयक (काला चन्दन), तुरुष्क (एक गन्ध-द्रव्य), रक्त चन्दन, गन्ध, विजयधूप तथा और भी जो अपनेको इष्ट पदार्थ हों, उन्हें भगवान् सूर्यको निवेदित करना चाहिये। मालती, मल्लिका, जूही, अतिमुक्तक, पाटला, करवीर, जपा, कुंकुम, तगर, कर्णिका, चम्पक, केतक (केवड़ा), कुन्द, अशोक, तिलक, लोध्र, कमल, अगस्ति, पलाश आदिके पुष्प भगवान् सूर्यदेवको विशेष प्रिय हैं। बिल्वपत्र, शमीपत्र, भृङ्गराजपत्र, तमालपत्र आदि भगवान् सूर्यको प्रिय हैं। अतः उन्हें अर्पण करना चाहिये। कृष्णा तुलसी, केतकीके पुष्प और पत्र तथा रक्त चन्दनके अर्पण करनेसे भगवान् सूर्य

सद्यः प्रसन्न होते हैं। नील कमल, श्वेत कमल और अनेक सुगन्धित पुष्प भगवान् सूर्यको चढ़ाने चाहिये, किंतु कुटज, शाल्मलि और गन्धरहित पुष्प सूर्यको नहीं चढ़ाने चाहिये, इन्हें चढ़ानेसे दारिद्र्य, भय और रोगकी प्राप्ति होती है। जिनका निषेध न हो वे ही पुष्प भगवान्‌को चढ़ाने चाहिये। उत्तम धूप, मुरा, माँसी, कपूर, अगरु, चन्दन तथा दूसरे सुन्दर पदार्थोंसे भगवान् वनमालीकी अर्चना करनी चाहिये। विविध रेशमी तथा कपासद्वारा निर्मित उत्तरीय आदि वस्त्र तथा जो अपनेको भी प्रिय है ऐसा वस्त्र सूर्यभगवान्‌को चढ़ाना चाहिये। फल तथा नैवेद्यादि भी जो अपनेको प्रिय हों उन्हें देना चाहिये। सुवर्ण, चाँदी, मणि और मुक्ता आदि जो अपनेको प्रिय हों, उन्हें भी भगवान् सूर्यको निवेदित करना चाहिये। अपनेको भास्करके रूपमें मानकर सारी यज्ञ-क्रियाएँ अव्यक्तरूप भगवान् सूर्यको निवेदित करनी चाहिये[1]। (अध्याय ११५)

सूर्य-भक्त सत्राजित्‌की कथा तथा त्रिविक्रम-व्रतकी विधि

ब्रह्माजी बोले—विष्णो! प्राचीन कालमें राजा ययातिके कुलमें सत्राजित् नामक एक प्रतापी चक्रवर्ती राजा हुए थे। वे अत्यन्त प्रभावशाली, तेजस्वी, कान्तिमान्, क्षमावान्, गुणवान् तथा बलशाली राजा थे और धीरता, गम्भीरता एवं यशसे सम्पन्न थे। उनके विषयमें पुराणवेत्ता लोग एक गाथा गाते हैं—महाबाहु सत्राजित्‌के इस पृथ्वीपर राज्य करते हुए जहाँसे सूर्य उदित होते और जहाँ अस्त होते हैं, जितनेमें भ्रमण करते हैं, वह सम्पूर्ण क्षेत्र सत्राजित्-क्षेत्र कहलाता है[2]। राजा सत्राजित् सम्पूर्ण रत्नोंसे परिपूर्ण सप्तद्वीपवती पृथ्वीपर धर्मपूर्वक राज्य करते थे। वे सूर्यदेवके परम भक्त थे। उनके ऐश्वर्यको देखकर सभी लोगोंको बड़ा आश्चर्य होता था। उनके राज्यमें सभी व्यक्ति धर्मानुयायी थे। राजा सत्राजित्‌के चार मन्त्री थे, वे सब अप्रतिहत सामर्थ्यवाले और राजाके स्वाभाविक भक्त थे। भगवान् सूर्यके प्रति उनकी अत्यन्त श्रद्धा थी और उनकी सामर्थ्यको देखकर न केवल उनकी प्रजाको आश्चर्य होता था, बल्कि स्वयं राजा भी अपने ऐश्वर्यपर आश्चर्यचकित थे। एक बार उनके मनमें आया कि अगले जन्मोंमें भी मेरा ऐसा ही ऐश्वर्य कैसे बना रहे। यह सोचकर उन्होंने शास्त्र और धर्मके तत्त्वको जाननेवाले ब्राह्मणोंको बुलाकर उनकी यथोचित भक्तिपूर्वक पूजा कर उन्हें आसनपर बिठलाया और उनसे कहा—'भगवन्! यदि आपलोगोंकी मुझपर कृपा है तो मेरी जिज्ञासाको शान्त करें।'

ब्राह्मणोंने कहा—'महाराज! आप अपना संदेह हमलोगोंके सम्मुख प्रस्तुत करें। आपने हमारा पालन-पोषण किया है और सभी प्रकारसे भोजन आदिद्वारा संतुष्ट रखा है। विद्वान् ब्राह्मणका तो कर्तव्य ही है कि वह धर्मके संदेहको दूर करे, अधर्मसे निवृत्त करे और कल्याणकारी उपदेशको भलीभाँति समझाये[3]।' आप अपनी इच्छाके अनुसार जो पूछना चाहें पूछें।' तभी उनकी महारानी विमलवतीने भी राजासे निवेदन किया कि 'महाराज!

१-आत्मानं भास्करं मत्वा यज्ञं तस्मै निवेदयेत्। तत्तदव्यक्तरूपाय भास्कराय निवेदयेत्॥ (ब्राह्मपर्व ११५। ३७)

२-सत्राजिते महाबाहो कृष्ण धात्रीं समाश्रिते॥
यावत्सूर्य उदेति स्म यावच्च प्रतितिष्ठति। सत्राजितं तु तत्सर्वं क्षेत्रमित्यभिधीयते॥ (ब्राह्मपर्व ११६। ९-१०)

३-संतुष्टो ब्राह्मणोऽश्नीयाच्छिन्द्याद्वा धर्मसंशयम्। हितं चोपदिशेद्धर्म्यं अहिताद्वा निवर्तयेत्॥ (ब्राह्मपर्व ११६। २५)

मेरा भी एक संदेह है, आप महात्माओंसे पूछकर निवृत्त करा लें। मैं तो अन्तःपुरमें ही रहती हूँ। अतः मेरी प्रार्थना है कि आप प्रथम मेरा ही संदेह निवृत्त करा दें, क्योंकि आपके संदेहकी निवृत्तिके अनेक साधन हैं।'

राजा सत्राजित्ने कहा—'प्रिये! क्या पूछना चाहती हो, पहले मैं तुम्हारा ही संदेह पूछूँगा।'

विमलवतीने कहा—'महाराज! मैंने अनेक राजाओंके चरित्र और ऐश्वर्यको सुना है, किंतु आपके समान ऐश्वर्य अन्य लोगोंको सुलभ नहीं है, यह किस कर्मका फल है? मैंने कौन-सा उत्तम कर्म किया था, जिसके फलस्वरूप मुझे आपकी रानी होनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ? पूर्वजन्ममें हम दोनोंने कौन-सा पुण्यकर्म किया है? इस विषयमें आप मुनियोंसे पूछें।'

सत्राजित् बोले—'देवि! तुमने तो मेरे मनकी बात जान ली है। मुनियोंकी बातें सत्य हैं, पत्नी पुरुषकी अर्धाङ्गिनी होती है। ऐसी कोई बात नहीं है जो इन महामुनियोंसे छिपी हो। इन महात्माओंसे मैं भी यही पूछना चाहता था। अनन्तर महाराजने महात्माओंसे पूछा—भगवन्! मैं पूर्वजन्ममें कौन था, मैंने कौन-से पुण्य कर्म किये थे? इस सर्वाङ्गसुन्दरी मेरी पत्नीने कौन-से उत्तम कर्म सम्पन्न किये थे, जिससे हमें ऐसी दुर्लभ लक्ष्मी प्राप्त हुई है। हमलोगोंमें परस्पर अतिशय प्रीति है। सभी राजा मेरे अधीन हैं, मेरे पास असीम द्रव्य है और मैं अत्यन्त बलशाली हूँ। मेरा शरीर भी नीरोग है। मेरी पत्नीके समान संसारमें कोई स्त्री नहीं है। सभी मेरे असीम तेजको सहन करनेमें असमर्थ हैं। महामुने! आपलोग त्रिकालज्ञ हैं। आप मेरी जिज्ञासाको शान्त करें।' राजाके इस प्रकार पूछनेपर उन ब्राह्मणोंने सूर्यदेवके परम भक्त परावसुसे प्रार्थना की कि आप ही इनके संदेहको निवृत्त करें। धर्मज्ञ ब्राह्मणोंकी सम्मतिसे महामति परावसुने योग-समाधिके द्वारा राजा तथा रानीके पूर्वजन्मके सभी कर्मोंकी जानकारी प्राप्त कर राजासे कहना आरम्भ किया—

परावसु बोले—महाराज! आप पूर्वजन्ममें बड़े निर्दयी, हिंसक तथा कठोर हृदयके शूद्र थे, कुष्ठ-रोगसे पीड़ित थे। सुन्दर नेत्रोंवाली ये महारानी उस समय भी आपकी ही भार्या थीं। ये ऐसी पतिव्रता थीं कि आपके द्वारा पीड़ित होनेपर भी आपकी सेवामें निरन्तर संलग्न रहती थीं, परंतु आपकी अतिशय क्रूरताके कारण आपके बन्धु-बान्धव आपसे अलग हो गये और आपने भी अपने पूर्वजोंद्वारा संचित धनको नष्ट कर डाला। अनन्तर आपने कृषि-कार्य प्रारम्भ किया, किंतु दैवेच्छासे वह भी व्यर्थ हो गया। आप अत्यन्त दीन-हीन होकर दूसरोंकी सेवाद्वारा जीवन-यापन करने लगे। आपने अपनी स्त्रीको छोड़नेका बहुत प्रयास किया, किंतु उसने आपका साथ नहीं छोड़ा। इसके बाद आप दोनों कान्यकुब्ज देशमें चले गये और भगवान् सूर्यके मन्दिरमें सेवा करने लगे। वहाँ प्रतिदिन मन्दिरका मार्जन, लेपन, प्रोक्षण (जल छिड़कना) आदि कार्य बड़े भक्तिभावसे करते रहे। मन्दिरमें पुराणकी कथा होती थी। आप दोनोंने उसका भक्तिपूर्वक श्रवण किया। कथा-श्रवण करनेके बाद आपकी पत्नीने पितासे प्राप्त अँगूठीको कथामें चढ़ा दिया। आपके मनमें रात-दिन यही चिन्ता रहती थी कि यह मन्दिर कैसे स्वच्छ रहे। आप दोनों बहुत दिनोंतक वहाँ रहे। भगवान्के सेवारूपी योगकर्ममें आपका मन अहर्निश लगा रहता था।

इस प्रकार आप दोनों निष्कामभावसे भगवान् सूर्यकी सेवा करते और जो कुछ मिलता, उसीसे निर्वाह करते थे। गोपति भगवान् सूर्यका आप नित्य चिन्तन करते थे, अतः आपके सभी पाप समाप्त हो गये।

किसी समय अपनी विशाल सेनाके साथ कुवलाश्व नामका एक राजा वहाँ आया। उसकी अपार सम्पत्ति और हजारों श्रेष्ठ रानियोंको देखकर आप दोनोंकी भी गजा-रानी बननेकी इच्छा हुई। कुछ ही समयमें आपका देहान्त हो गया। सूर्यदेवकी श्रद्धा-भक्तिपूर्वक की गयी सेवा तथा पुराण-श्रवणके प्रभावसे आप राजा हुए और आपकी स्त्री रानी हुईं एवं आप दोनोंको जो असीम तेज प्राप्त हुआ है, उसका भी कारण सुनिये—

जब मन्दिरमें दीपक तेल तथा बत्तीके अभावमें बुझने लगता था, तब आप अपने भोजनके लिये रखे तेलसे उसे पूरित करते थे और आपकी रानी अपनी साड़ी फाड़कर उससे बत्ती बनाकर जलाती थी। राजन्! यदि अन्य जन्ममें भी आपको ऐश्वर्यकी इच्छा है तो भगवान् सूर्यकी श्रद्धापूर्वक आराधना करें। गन्ध, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य आदि जो आपको प्रिय हों, वही भगवान् सूर्यको अर्पण करें। उनके मन्दिरमें मार्जन, उपलेपन आदि कार्य करें, जिससे मन्दिर स्वच्छ और निर्मल रहे। उत्तम दिनोंमें उपवास कर रात्रि-जागरण और नृत्य-गीत-वाद्यादिद्वारा महोत्सव करायें। पुराण-इतिहास आदिकी कथा श्रद्धापूर्वक सुनें तथा भगवान् सूर्यकी प्रसन्नताके लिये वेद-पाठ करायें। सदा निष्काम-भावसे तन्मय होकर उनकी सेवामें लगे रहें। संतुष्ट होकर भगवान् सूर्य अभीष्ट फल देते हैं। वे पुष्प, नैवेद्य, रत्न, सुवर्ण आदिसे उतना प्रसन्न नहीं होते, जितना वे भक्तिभावसे प्रसन्न होते हैं। यदि भक्तिभावपूर्वक सूर्यकी आराधना और विविध उपचारोंसे पूजन करेंगे तो इन्द्रसे भी अधिक वैभवकी प्राप्ति कर लेंगे।

राजा सत्राजित्ने कहा—भगवन्! इन्द्रत्वकी प्राप्ति या अमरत्वकी प्राप्तिसे जो आनन्द होता है, वह आनन्द आपकी इस वाणीको सुनकर मुझे प्राप्त हुआ। अज्ञानरूपी अन्धकारके लिये आपकी यह वाणी प्रदीप्त दीपकके समान है। सम्पत्तिके विनाशकी सम्भावनासे हम बहुत व्याकुल थे। आपने सम्पत्ति-प्राप्तिके लिये मूल तत्त्वका आज उपदेश दिया है। इससे यह सिद्ध हो गया कि मुझे यह सारी सम्पत्ति पूर्वजन्मके सुकृतकर्मके ही फलस्वरूप प्राप्त हुई है। भक्तिमान् दरिद्र भी भगवान् सूर्यको प्रसन्न कर सकता है, किंतु एक ऐश्वर्यशाली धनवान् भक्तिहीन होनेपर उनका अनुग्रह नहीं प्राप्त कर सकता। भगवन्! आप मुझे सूर्यभगवान्की आराधनाके उस मार्गको सूचित करें, जिससे शीघ्र ही उनका अनुग्रह प्राप्त हो सके।

परावसु बोले—राजन्! कार्तिक मासमें प्रतिदिन भगवान् सूर्यका पूजन कर ब्राह्मणको भोजन कराना चाहिये और स्वयं भी एक ही बार भोजन करना चाहिये। इस आराधनासे बाल्यावस्थामें किये गये ज्ञात-अज्ञात सभी पापोंसे छुटकारा मिल जाता है। मार्गशीर्षमें पूर्वोक्त रीतिसे व्रत करनेवाले स्त्री-पुरुषकी, ब्राह्मणको मरकत मणिका दान करनेसे प्रौढावस्थामें किये गये पापोंसे मुक्ति हो जाती है। पौष मासमें पूर्वोक्त विधिके अनुसार एकभुक्त हो श्रद्धापूर्वक सूर्यकी आराधना करनेसे वृद्धावस्थामें किये गये सभी पाप नष्ट हो जाते हैं।

इस त्रैमासिक व्रतको श्रद्धापूर्वक विधि-विधानसे करनेवाले स्त्री या पुरुष सूर्यभगवान्के कृपापात्र हो जाते हैं और लघु पापोंसे मुक्त हो जाते हैं। दूसरे वर्ष इसी प्रकार त्रैमासिक व्रत करनेपर सभी उपपातक निवृत्त हो जाते हैं। तीसरे वर्ष भी इस व्रतको करनेपर महापातक नष्ट हो जाते हैं और मनोवाञ्छित फलकी प्राप्ति होती है। यह व्रत तीन मासमें सम्पन्न होता है और इसे तीन वर्षतक करना चाहिये। सभी अवस्थाओंमें आधिभौतिक, आधिदैविक तथा आध्यात्मिक—त्रिविध पातक

इसके द्वारा नष्ट हो जाते हैं। इस सर्वपापहर्ता व्रतको त्रिविक्रम-व्रत कहा जाता है।

राजा सत्राजित्ने कहा—भगवन्! व्रतका विधान तो मैंने सुना, परंतु भोजन कैसे ब्राह्मणको कराना चाहिये, यह भी आप कृपाकर बतायें।

परावसु बोले—पौराणिक ब्राह्मणको भोजन कराना चाहिये। इस प्रसंगमें अरुणको सूर्यदेवने जो निर्देश दिया था, वह मैं आपको बताता हूँ—

किसी समय उदयाचलपर अरुणने भगवान् सूर्यसे पूछा—'महाराज! कौन-कौन पुष्प, नैवेद्य, वस्त्र आदि आपको प्रिय हैं और कैसे ब्राह्मणको भोजन करानेसे आप संतुष्ट होते हैं?' इसे आप कृपाकर बतायें।

भगवान् सूर्यने कहा—अरुण! करवीरके पुष्प, रक्त चन्दन, गुग्गुलका धूप, घीका दीपक और मोदक आदि नैवेद्य मुझे प्रिय हैं। मेरे भक्त और पौराणिक ब्राह्मणको दान देकर उसके प्रति श्रद्धा समर्पित करनेसे मुझे जितनी प्रसन्नता होती है, उतनी प्रसन्नता गीत, वाद्य और पूजन आदिसे नहीं होती। मैं पुराण आदिके वाचन-श्रवणसे अतिशय प्रसन्न होता हूँ। इतिहास-पुराणके वाचक तथा मेरी पूजा करनेवाला भोजक—ये दोनों मुझे विशेष प्रिय हैं। इसलिये पौराणिकका पूजन करे और इतिहास आदिको सुने। (अध्याय ११६)

भोजकोंकी उत्पत्ति तथा उनके लक्षणोंका वर्णन

अरुणने पूछा—भगवन्! यह भोजक कौन है? किसका पुत्र है? इसने ऐसा कौन-सा उत्तम कर्म किया है, जिस कारण ब्राह्मण आदि वर्णोंको छोड़कर आपका इसपर इतना अनुग्रह हुआ? आप कृपाकर सब मुझे बतायें।

आदित्य बोले—महामति वैनतेय! तुमने बहुत सुन्दर बात पूछी है। इसके उत्तरमें मैं जो कहता हूँ, उसे तुम सावधान होकर सुनो। अपनी पूजाके निमित्त ही मैंने अपने तेजसे भोजकोंकी उत्पत्ति की है। ये वर्णतः ब्राह्मण हैं और मेरी पूजाके लिये अनुष्ठानमें तत्पर रहते हैं। ये भोजक मुझे अति प्रिय हैं।

प्राचीन कालमें शाकद्वीपके स्वामी राजा प्रियव्रतके पुत्रने विमानके समान एक भव्य सूर्य-मन्दिर बनवाया और उसमें स्थापित करनेके लिये सभी शुभ लक्षणोंसे सम्पन्न सोनेकी एक दिव्य सूर्यकी प्रतिमा भी बनवायी। अब राजाको यह चिन्ता होने लगी कि मन्दिर तथा प्रतिमाकी प्रतिष्ठा कौन कराये? उन्हें कोई योग्य व्यक्ति नहीं दिखायी दिया। अतः वह राजा मेरी शरणमें आया। अपने भक्तको चिन्ताग्रस्त देखकर मैंने उसे प्रत्यक्ष दर्शन दिया और पूछा—'वत्स!' तुम क्या विचार कर रहे हो, तुम क्यों चिन्तित हो, शीघ्र ही अपनी चिन्ताका कारण बताओ। तुम दुःखी मत होओ, मैं तुम्हारे अत्यन्त दुष्कर कर्मोंको भी सम्पन्न कर दूँगा।' इसपर राजाने प्रसन्न होकर कहा—'प्रभो! मैंने बड़ी भक्ति एवं श्रद्धासे इस द्वीपमें आपका एक विशाल मन्दिर बनवाया है तथा एक दिव्य सूर्य-प्रतिमा भी बनवायी है, मुझे यह चिन्ता सता रही है कि प्रतिष्ठा-कार्य कैसे सम्पन्न हो?' राजाके इन वचनोंको सुनकर मैंने कहा—'राजन्! मैं अपने तेजसे अपनी पूजा करनेके लिये मगसंज्ञक ब्राह्मणोंकी सृष्टि करता हूँ। मेरे ऐसा कहते ही चन्द्रमाके समान श्वेतवर्णवाले आठ बलशाली पुरुष मेरे शरीरसे उत्पन्न हो गये। वे सभी काषाय वस्त्र पहिने हुए थे, हाथोंमें पिटारी और कमलके पुष्प लिये हुए थे तथा साङ्गोपाङ्ग चारों वेदों और उपनिषदोंका पाठ कर रहे थे। इनमेंसे दो पुरुष

ललाटसे, दो वक्षःस्थलसे, दो चरणोंसे तथा दो पादोंसे उत्पन्न हुए।' उन महात्माओंने मुझे पिता मानते हुए हाथ जोड़कर मुझसे कहा—'हे पिता! हे लोकनाथ! हम आपके पुत्र हैं। आपने किसलिये हमें उत्पन्न किया है? हमें आज्ञा दीजिये। हम सब आपके आदेशका पालन करेंगे।' पुत्रोंका ऐसा वचन सुनकर मैंने कहा—'तुम सब इस राजाकी बात सुनो और ये जैसा कहें वैसा ही करो।' पुत्रोंसे ऐसा कहनेके बाद मैंने राजासे कहा—'राजन्! ये मेरे पुत्र हैं, ब्राह्मणोंमें श्रेष्ठ हैं तथा सर्वदा पूज्य हैं। मेरी प्रतिष्ठा करानेके लिये ये सर्वथा योग्य हैं। इनसे प्रतिष्ठा करवा लो। मन्दिरकी प्रतिष्ठा कराकर मन्दिर इन्हें समर्पित कर दो। ये सदा मेरा पूजन किया करेंगे, परंतु देकर फिर इनसे हरण मत करना। मेरे निमित्त जो कुछ धन-धान्य, गृह, क्षेत्र, बाग, ग्राम नगर आदि मन्दिरमें अर्पण करो, उन सबके स्वामी ये भोजक ही होंगे। जैसे पिताके द्रव्यका अधिकारी उसका पुत्र होता है, वैसे ही मेरे धनके अधिकारी ये भोजक ही हैं।' मेरी आज्ञा पाकर उस राजाने प्रसन्न हो वैसा ही किया और भोजकोंद्वारा प्रतिष्ठा कराकर वह मन्दिर उन्हींको अर्पित कर दिया।

अरुण! इस प्रकार अपनी पूजाके लिये मैंने अपने शरीरके तेजसे भोजकोंको उत्पन्न किया। ये मेरे आत्मस्वरूप हैं। मेरी प्रीतिके लिये जो कुछ भी देना हो वह भोजकको देना चाहिये। परंतु भोजकको दिया हुआ धन कभी वापस नहीं लेना चाहिये। भोजक हमारे सम्पूर्ण धनका स्वामी है।

भोजकमें ये लक्षण होने चाहिये—वह पहले वेदाध्ययन कर फिर गृहस्थजीवनमें प्रवेश करे। नित्य त्रिकाल स्नान करे, दिन-रात्रिमें पञ्चकृत्यों* द्वारा मेरा पूजन करे। वेद, ब्राह्मण और देवताओंकी कभी निन्दा न करे। नित्य हमारे सम्मुख शङ्ख-ध्वनि करे। छः महीने पुराण सुननेसे जैसी प्रसन्नता मुझे होती है, वैसी प्रीति केवल एक बार शङ्ख-ध्वनि श्रवण करनेसे हो जाती है। इसलिये भोजकको पूजनमें नित्य शङ्ख बजाना चाहिये। वे अभोज्य पदार्थ भक्षण नहीं करते हैं, इसलिये भोजक कहलाते हैं और नित्य हमको भोजन कराते हैं, इसलिये भी भोजक कहलाते हैं। वे सदा मगका ध्यान करते रहते हैं, इसलिये मगध कहे जाते हैं। भोजक परम शुद्धिकर अव्यङ्ग धारण किये बिना सदा अपवित्र रहता है। जो अव्यङ्ग धारण किये बिना मेरी पूजा करता है, उसको संतान नहीं होती और मेरी प्रसन्नता भी उसे प्राप्त नहीं होती। भोजकको सिर मुड़ाकर रहना चाहिये, किंतु शिखा अवश्य रखनी चाहिये। रविवारके दिन तथा षष्ठीको नक्तव्रत कर सप्तमीको उपवास करना चाहिये और संक्रान्तिका व्रत भी करना चाहिये। मेरे समीप त्रिकाल गायत्रीका जप करे। भक्ति-श्रद्धापूर्वक मौन होकर मेरा पूजन करे। क्रोध न करे। सदा हमारा नैवेद्य भक्षण करे। वह नैवेद्य भोजकको शुद्ध करनेके लिये पवित्र हविष्यान्नके समान है। मुझे चढ़ा हुआ गन्ध, पुष्प, वस्त्राभूषण आदि बेचे नहीं। स्नान कराये गये जल और निर्माल्य (विसर्जनके बाद देवार्पित वस्तु) तथा अग्निका उल्लङ्घन न करे। सदा पवित्र रहे, एक बार भोजन करे और क्रोध, अमङ्गल-वचन तथा अशुभ कर्मोंको त्याग दे।

अरुण! इस प्रकारके लक्षणोंवाला भोजक मुझे बहुत प्रिय है। भोजकका सदा सत्कार करना चाहिये। तुम्हारे ही समान भोजक भी मुझे बहुत प्रिय हैं।

महात्मा परावसु बोले—राजन्! इस प्रकार

* इज्या, अभिगमन, उपादान, स्वाध्याय और योग—ये पाँच उपासनाके भेद हैं, जिनमें प्रतिमा-पूजन, संध्या-तर्पण, हवन-पूजन, ध्यान, जप एवं सूर्यके चरित्रोंका पाठ सम्मिलित है।

अरुणको उपदेश देकर सूर्यनारायण आकाशमें भ्रमण करने लगे और अरुण भी यह सुनकर बहुत प्रसन्न हुआ।

ब्रह्माजी बोले—महामुनि परावसुके मुखसे यह कथा सुनकर राजा सत्राजित् और उसकी रानी विमलवती बहुत प्रसन्न हुए। उन्होंने पृथ्वीपर जहाँ-जहाँ भगवान् सूर्यके मन्दिर थे, उन सबमें मार्जन और उपलेपन कराया। सब मन्दिरोंमें कथा कहनेके लिये पौराणिकोंको नियुक्त किया और बहुत-सी दक्षिणा देकर उन्हें संतुष्ट किया। वे विविध उपचारोंसे भक्तिपूर्वक नित्य सूर्यदेवकी पूजा-उपासना करने लगे और अन्तमें उन दोनोंने उनकी प्रीति प्राप्त कर उत्तम गति प्राप्त की।

(अध्याय ११७)

भद्र ब्राह्मणकी कथा एवं कार्तिक मासमें सूर्य-मन्दिरमें दीपदानका फल

ब्रह्माजी बोले—विष्णो! जो कार्तिक मासमें सूर्यदेवके मन्दिरमें दीप प्रज्वलित करता है, उसे सम्पूर्ण यज्ञोंका फल प्राप्त होता है एवं वह तेजमें सूर्यके समान तेजस्वी होता है। अब मैं आपको भद्र ब्राह्मणकी कथा सुनाता हूँ, जो समस्त पापोंका नाश करनेवाली है, उसे आप सुनें—

प्राचीन कालमें माहिष्मती नामकी एक सुन्दर नगरीमें नागशर्मा नामका एक ब्राह्मण रहता था। भगवान् सूर्यकी प्रसन्नतासे उसके सौ पुत्र हुए। सबसे छोटे पुत्रका नाम था भद्र। वह सभी भाइयोंमें अत्यन्त विचक्षण विद्वान् था। वह भगवान् सूर्यके मन्दिरमें नित्य दीपक जलाया करता था। एक दिन उसके भाइयोंने उससे बड़े आदरसे पूछा—'भद्र! हमलोग देखते हैं कि तुम भगवान् सूर्यको न तो कभी पुष्प, धूप, नैवेद्य आदि अर्पण करते हो और न कभी ब्राह्मण-भोजन कराते हो, केवल दिन-रात मन्दिरमें जाकर दीप जलाते रहते हो, इसमें क्या कारण है? तुम हमें बताओ।' अपने भाइयोंकी बात सुनकर भद्र बोला—भ्रातृगण! इस विषयमें आपलोग एक आख्यान सुनें—

प्राचीन कालमें राजा इक्ष्वाकुके पुरोहित महर्षि वसिष्ठ थे। उन्होंने राजा इक्ष्वाकुसे सरयू-तटपर सूर्यभगवान्‌का एक मन्दिर बनवाया। वे वहाँ नित्य गन्ध-पुष्पादि उपचारोंसे भक्तिपूर्वक भगवान् सूर्यकी पूजा करते और दीपक प्रज्वलित करते थे। विशेषकर कार्तिक मासमें भक्तिपूर्वक दीपोत्सव किया करते थे। तब मैं भी अनेक कुष्ठ आदि रोगोंसे पीड़ित हो उसी मन्दिरके समीप पड़ा रहता और जो कुछ मिल जाता, उसीसे अपना पेट भरता। वहाँके निवासी मुझे रोगी और दीन-हीन जानकर मुझे भोजन दे देते थे। एक दिन मुझमें यह कुत्सित विचार आया कि मैं रात्रिके अन्धकारमें इस मन्दिरमें स्थित सूर्यनारायणके बहुमूल्य आभूषणोंको चुरा लूँ। ऐसा निश्चयकर मैं उन भोजकोंकी निद्राकी प्रतीक्षा करने लगा। जब वे भोजक सो गये, तब मैं धीरे-धीरे मन्दिरमें गया और वहाँ देखा कि दीपक बुझ चुका है। तब मैंने अग्नि जलाकर दीपक प्रज्वलित किया और उसमें घृत डालकर प्रतिमासे आभूषण उतारने लगा, उसी समय वे देवपुत्र भोजक जग गये और मुझे हाथमें दीपक लिया देखकर पकड़ लिया। मैं भयभीत हो विलापकर उनके चरणोंपर गिर पड़ा। दयावश उन्होंने मुझे छोड़ दिया, किंतु वहाँ घूमते हुए राजपुरुषोंने मुझे फिर बाँध लिया और वे मुझसे पूछने लगे—'अरे दुष्ट! तुम दीपक हाथमें लेकर मन्दिरमें क्या कर रहे थे? जल्दी बताओ', मैं अत्यन्त भयभीत हो गया। उन राजपुरुषोंके भयसे तथा रोगसे आक्रान्त होनेके

कारण मन्दिरमें ही मेरे प्राण निकल गये। उसी समय सूर्यभगवान्‌के गण मुझे विमानमें बैठाकर सूर्यलोक ले गये और मैंने एक कल्पतक वहाँ सुख भोगा तथा फिर उत्तम कुलमें जन्म लेकर आप सबका भाई बना। बन्धुओ! यह कार्तिक मासमें भगवान् सूर्यके मन्दिरमें दीपक जलानेका फल है। यद्यपि मैंने दुष्टबुद्धिसे आभूषण चुरानेकी दृष्टिसे मन्दिरमें दीपक जलाया था तथापि उसीके फलस्वरूप इस उत्तम ब्राह्मणकुलमें मेरा जन्म हुआ तथा वेद-शास्त्रोंका मैंने अध्ययन किया और मुझे पूर्वजन्मोंकी स्मृति हुई। इस प्रकार उत्तम फल मुझे प्राप्त हुआ। दुष्टबुद्धिसे भी घीद्वारा दीपक जलानेका ऐसा श्रेष्ठ फल देखकर मैं अब नित्य भगवान् सूर्यके मन्दिरमें दीपक प्रज्वलित करता रहता हूँ। भाइयो! मैंने कार्तिक माससमें यह दीपदानका संक्षेपमें माहात्म्य आपलोगोंको सुनाया।

इतनी कथा सुनाकर ब्रह्माजी बोले—विष्णो! दीपक जलानेका फल भद्रने अपने भाइयोंको बताया। जो पुरुष सूर्यके नामोंका जप करता हुआ मन्दिरमें कार्तिकके महीनेमें दीपदान करता है, वह आरोग्य, धन-सम्पत्ति, बुद्धि, उत्तम संतान और जातिस्मरत्वको प्राप्त करता है। षष्ठी और सप्तमी तिथिको जो प्रयत्नपूर्वक सूर्य-मन्दिरमें दीपदान करता है, वह उत्तम विमानमें बैठकर सूर्यलोकको जाता है। इसलिये भगवान् सूर्यके मन्दिरमें भक्तिपूर्वक दीप प्रज्वलित करना चाहिये। प्रज्वलित दीपको न तो बुझाये और न उसका हरण करे। दीपक हरण करनेवाला पुरुष अन्धमूषक होता है। इस कारण कल्याणकी इच्छावाला पुरुष दीप प्रज्वलित करे, हरे नहीं। (अध्याय ११८)

यमदूत और नारकीय जीवोंके संवादके प्रसंगमें सूर्य-मन्दिरमें दीपदान करने एवं दीप चुरानेके पुण्य-पापोंका परिणाम

ब्रह्माजी बोले—विष्णो! एक समय घोर नरकमें पड़े हुए भूखे, आर्त-दुःखी और विलाप करते हुए जीवोंसे यमदूतने कहा—मूढजनो! अब अधिक विलाप करनेसे क्या लाभ होगा, प्रमादवश तुम सबने अपनी आत्माकी उपेक्षा कर रखी है। पहले तुम सबने यह विचार नहीं किया कि इन कर्मोंका फल आगे भोगना पड़ेगा। यह शरीर थोड़े ही दिनोंतक रहनेवाला है, विषय भी नाशवान् हैं, यह कौन नहीं जानता। हजारों जन्मोंके बाद एक बार मनुष्य-जन्म मिलता है, उसमें क्यों मूढजन भोगोंकी ओर दौड़ते हैं। वे पुत्र, स्त्री, गृह, क्षेत्र आदिके लिये प्रयत्नशील रहते हैं और उनमें आसक्त होकर अनेक दुष्कर्म करते हैं, वे मूढजन अपना हित नहीं जानते, वे यह भी नहीं जानते कि सूर्य, चन्द्र, काल तथा आत्मा—ये सभी मनुष्यके शुभ और अशुभ कर्मोंको देखते रहते हैं अर्थात् साक्षीभूत हैं। न केवल एक जन्म अपितु सैकड़ों जन्मोंमें पुत्र, स्त्री आदिके लिये जो-जो भी कर्म किया जाता है, उसे अच्छी तरहसे ये जानते रहते हैं। मोहकी यह महिमा तो देखो कि नरकमें भी ममता बनी रहती है। इस प्रकार परिणाममें भयंकर विषयोंके द्वारा आकृष्टचित्तवाले मनुष्योंकी बुद्धि परमार्थ-तत्त्वकी ओर नहीं होती। जिह्वाद्वारा भगवान् सूर्यका नाम लेनेमें कौन-सा श्रम है? मन्दिरमें दीप जलानेमें भी अधिक परिश्रम नहीं पड़ता, परंतु यदि मनुष्यसे इतना भी नहीं हो सकता तो अब रोदन और विलाप करनेसे क्या लाभ है?* जैसा कर्म किया वैसा फल पाया। इसलिये पापकर्ममें कभी भी

* अहो मोहस्य माहात्म्यं ममत्वं नरकेष्वपि। क्रन्दते मातरं तातं पीड्यमानोऽपि यत्स्वयम्॥

बुद्धि नहीं लगानी चाहिये। यदि कोई अज्ञानसे पापकर्म हो जाय तो सूर्यभगवान्‌की आराधना करे, जिससे सब पाप नष्ट हो जाते हैं।

ब्रह्माजी बोले—यमदूतके ऐसे वचनोंको सुनकर तथा भूखसे व्याकुल, प्याससे सूखे कण्ठवाले, दुःखसे पीड़ित वे नारकीय जीव उससे कहने लगे—'साधो! हमने ऐसा कौन-सा कर्म किया, जिससे हमें इस दारुण नरकमें वास करना पड़ा।'

यमदूतने कहा—पूर्वजन्ममें यौवनके उन्मादसे उन्मादित तुम अविवेकियोंने घृतके लोभमें भगवान् सूर्यके मन्दिरसे दीप चुराया था। उसी कारण इस घोर नरकमें तुम सब दुःख भोग रहे हो।

ब्रह्माजी बोले—अच्युत! मैंने सूर्यके मन्दिरमें दीपदान करनेके पुण्य तथा दीप-हरण करनेके दुष्परिणामोंका वर्णन किया। दीपदान करनेका तो सर्वत्र ही उत्तम फल है, परंतु सूर्यनारायणके मन्दिरमें विशेष फल है। जगत्‌में जो-जो अन्धा, मूक, बधिर, विवेकहीन, निन्द्य व्यक्ति दिखायी पड़ते हैं, उन सबने साधुजनोंद्वारा प्रज्वलित किये हुए दीपोंको सूर्यनारायणके मन्दिरसे हरण किया है।

(अध्याय ११९)

वैवस्वतके लक्षण और सूर्यनारायणकी महिमा

विष्णुभगवान्‌ने ब्रह्माजीसे पूछा—ब्रह्मन्! संसारमें मनुष्य विष, रोग, ग्रह और अनेक प्रकारके उपद्रवोंसे पीड़ित रहते हैं, यह किन कर्मोंका फल है, कृपाकर आप कोई ऐसा उपाय बतायें, जिससे जीवोंको रोग आदिकी बाधा न हो।

ब्रह्माजीने कहा—जिन्होंने पूर्वजन्ममें व्रत-उपवास आदिके द्वारा भगवान् सूर्यको प्रसन्न नहीं किया, वे मनुष्य विष, ज्वर, ग्रह, रोग आदिके भागी होते हैं और जो सूर्यनारायणकी आराधना करते हैं, उन्हें आधि-व्याधियाँ नहीं सतातीं। पूर्वजन्ममें भगवान् सूर्यकी आराधनासे इस जन्ममें आरोग्य, परम बुद्धि और जो-जो भी मनमें इच्छा करता है, निःसंदेह उसे प्राप्त कर लेता है। आधि-व्याधियोंसे पीड़ित नहीं होता है और न विष एवं दुष्ट ग्रहोंके बन्धनमें ही फँसता है तथा कृत्या आदिका भी भय उसे नहीं रहता। सूर्यनारायणके भक्तके लिये दुष्ट भी अनुकूल हो जाते हैं और सब ग्रह सौम्य दृष्टि रखते हैं। जिसपर सूर्यदेव संतुष्ट हो जाते हैं, वह देवताओंका भी पूज्य हो जाता है। परंतु भगवान् सूर्यका अनुग्रह उसी पुरुषपर होता है, जो सब जीवोंको अपने समान ही समझता है और भक्तिपूर्वक उनकी आराधना करता है। प्रजाओंके स्वामी भगवान् सूर्यके प्रसन्न हो जानेपर मनुष्य पूर्णमनोरथ हो जाता है*।

एवमाकृष्टचित्तानां विषयैः स्वादुतर्पणैः। नृणां न जायते बुद्धिः परमार्थविलोकिनी॥
तथा च विषयासङ्गे करोत्यविरतं मनः। को हि भारो रवेर्नाम्नि जिह्वायाः परिकीर्तने॥
वर्तितैलेऽल्पमूल्ये च यद्वर्तिर्लभ्यते सुधा। अतो वै कतरो लाभः कातश्चिन्ता भवेत् तदा॥ (ब्राह्मपर्व ११९। १०—१३)

* व्रतोपवासैर्यैर्भानुर्नान्यजन्मनि तोषितः। ते नरा देवशार्दूल ग्रहरोगादिभागिनः॥
यैर्न तत्प्रवणं चित्तं सर्वदैव नरैः कृतम्। विषग्रहज्वराणां ते मनुष्याः कृष्ण भागिनः॥
आरोग्यं परमां वृद्धिं मनसा यद्यदिच्छति। तत्तदाप्नोत्यसंदिग्धं परत्रादित्यतोषणात्॥
नाधीन् प्राप्नोति न व्याधीन् न विषग्रहबन्धनम्। कृत्यास्पर्शभयं वापि तोषिते तिमिरापहे॥
सर्वे दुष्टाः समास्तस्य सौम्यास्तस्य सदा ग्रहाः। देवानामपि पूज्योऽसौ तुष्टो यस्य दिवाकरः॥
यः समः सर्वभूतेषु यथात्मनि तथा हिते। उपवासादिना येन तोष्यते तिमिरापहः॥
तोषितेऽस्मिन् प्रजानाथे नराः पूर्णमनोरथाः। अरोगाः सुखिनो नित्यं बहुधर्मसुखान्विताः॥

भगवान् विष्णुने पूछा—ब्रह्मन्! जिन्होंने पहले भगवान् सूर्यकी आराधना नहीं की और रोग-व्याधिसे दुःखी हो गये हैं, वे उन कष्ट एवं पापोंसे कैसे मुक्त हों, कृपाकर बतायें। हम भी भक्तिपूर्वक भगवान् सूर्यकी आराधना करना चाहते हैं।

ब्रह्माजी बोले—भगवन्! यदि आप भगवान् सूर्यकी आराधना करना चाहते हैं तो आप पहले वैवस्वत (सूर्यभक्त) बनें, क्योंकि बिना विधिपूर्वक सौरी दीक्षाके उनकी उपासना पूरी नहीं हो सकती। जब मनुष्योंके पाप क्षीण होने लगते हैं तब भगवान् सूर्य और ब्राह्मणोंमें उनकी नैष्ठिकी श्रद्धा-भक्ति होती है। इस संसार-चक्रमें भ्रमण करते हुए प्राणियोंके लिये भगवान् सूर्यको प्रसन्न करना एकमात्र कल्याणका निष्कण्टक मार्ग है।

विष्णुभगवान्ने पूछा—ब्रह्मन्! वैवस्वतोंका क्या लक्षण है और उन्हें क्या करना चाहिये? यह आप बतायें।

ब्रह्माजी बोले—वैवस्वत वही है जो भगवान् सूर्यका परम भक्त हो तथा मन, वाणी एवं कर्मसे कभी जीवहिंसा न करे। ब्राह्मण, देवता और भोजकको नित्य प्रणाम करे, दूसरेके धनका हरण न करे, सभी देवताओं एवं संसारको भगवान् सूर्यका ही स्वरूप समझे और उनसे अपनेको अभिन्न समझे। देवता, मनुष्य, पशु-पक्षी, पिपीलिका, वृक्ष, पाषाण, काष्ठ, भूमि, जल, आकाश तथा दिशा—सर्वत्र भगवान् सूर्यको व्याप्त समझे, साथ ही स्वयंको भी सूर्यसे भिन्न न समझे। जो किसी भी प्राणीमें दुष्टभाव नहीं रखता, वही वैवस्वत सूर्योपासक है। जो पुरुष आसक्तिरहित होकर निष्कामभावसे भक्तिपूर्वक भगवान् सूर्यके निमित्त क्रियाएँ करता है, वह वैवस्वत कहलाता है। जिसका न तो कोई शत्रु हो और न कोई मित्र हो तथा न उसमें भेद-बुद्धि हो, सबको बराबर देखता हो, ऐसा पुरुष वैवस्वत कहलाता है। जिस उत्तम गतिको वैवस्वत पुरुष प्राप्त करता है, वह योगी और बड़े-बड़े तपस्वियोंके लिये भी दुर्लभ है। जो सभी प्रकारसे भगवान् सूर्यका दृढ़ भक्त है, वह धन्य है। भक्तिपूर्वक आराधना करनेसे ही सूर्यभगवान्का अनुग्रह प्राप्त होता है।

ब्रह्माजी पुनः बोले—मैं भी उनके दक्षिण किरणसे उत्पन्न हुआ हूँ और उन्हींके वाम किरणसे भगवान् शिव तथा वक्षःस्थलसे शङ्ख-चक्र-गदाधारी आप उत्पन्न हैं। उन्हींकी इच्छासे आप सृष्टिका पालन तथा शङ्कर संहार करते हैं। इसी प्रकार रुद्र, इन्द्र, चन्द्र, वरुण, वायु, अग्नि आदि सब देवता सूर्यदेवसे ही प्रादुर्भूत हुए हैं और उनकी आज्ञाके अनुसार अपने-अपने कर्मोंमें प्रवृत्त हो रहे हैं। इसलिये भगवन्! आप भी सूर्यभगवान्की आराधना करें, इससे सभी मनोरथ पूर्ण होंगे।

पितामह ब्रह्माजी एवं विष्णुभगवान्के इस संवादको जो भक्तिपूर्वक श्रवण करता है, वह मनोवाञ्छित फलोंको प्राप्त कर अन्तमें सुवर्णके विमानमें बैठकर सूर्यलोकको जाता है।

(अध्याय १२०)

न तेषां शत्रवो नैव शरीराद्यभिचारकम् । ग्रहरोगादिकं चापि पापकार्युपजायते॥
अव्याहतानि देवस्य धनजालानि तं नरम् । रक्षन्ति सकलापत्सु येन श्वेताधिपोऽर्चितः॥ (ब्राह्मपर्व १२०। ४—१२)

भगवान् सूर्यनारायणके सौम्य रूपकी कथा, उनकी स्तुति और परिवार तथा देवताओंका वर्णन

राजा शतानीकने कहा—मुने! भगवान् सूर्यकी कथा सुनते-सुनते मुझे तृप्ति नहीं होती, अतः आप पुनः उन्हींके गुणों और चरित्रोंका वर्णन करें।

सुमन्तु मुनि बोले—राजन्! पूर्वकालमें ब्रह्माजीने भगवान् सूर्यकी जो पवित्र कथा ऋषियोंको सुनायी थी, उसे मैं आपको सुनाता हूँ। वह कथा पापोंको नष्ट करनेवाली है—

एक समय भगवान् सूर्यके प्रचण्ड तेजसे संतप्त हो ऋषियोंने ब्रह्माजीसे पूछा—'ब्रह्मन्! आकाशमें स्थित यह अग्निके तुल्य दाह करनेवाला तेजःपुञ्ज कौन है?'

ब्रह्माजी बोले—मुनीश्वरो! प्रलयके समय जब सारा स्थावर-जङ्गम जगत् नष्ट हो गया, उस समय सर्वत्र अन्धकार-ही-अन्धकार व्याप्त था। उस समय सर्वप्रथम बुद्धि उत्पन्न हुई, बुद्धिसे अहंकार तथा अहंकारसे आकाशादि पञ्चमहाभूतोंकी उत्पत्ति हुई और उनसे एक अण्ड उत्पन्न हुआ, जिसमें सात लोक और सात समुद्रोंसहित पृथ्वी स्थित है। उसी अण्डमें स्वयं ब्रह्मा तथा विष्णु और शिव भी स्थित थे। अन्धकारसे सभी व्याकुल थे। अनन्तर सब परमेश्वरका ध्यान करने लगे। ध्यान करनेसे अन्धकारको हरण करनेवाला एक तेजःपुञ्ज प्रकट हुआ। उसे देखकर हम सभी उसकी इस प्रकार दिव्य स्तुति करने लगे—

आदिदेवोऽसि देवानामीश्वराणां त्वमीश्वरः।
आदिकर्तासि भूतानां देवदेव सनातन॥
जीवनं सर्वसत्त्वानां देवगन्धर्वरक्षसाम्।
मुनिकिन्नरसिद्धानां तथैवोरगपक्षिणाम्॥
त्वं ब्रह्मा त्वं महादेवस्त्वं विष्णुस्त्वं प्रजापतिः।
वायुरिन्द्रश्च सोमश्च विवस्वान् वरुणस्तथा॥
त्वं कालः सृष्टिकर्ता च हर्ता त्राता प्रभुस्तथा।
सरितः सागराः शैला विद्युदिन्द्रधनूंषि च।
प्रलयः प्रभवश्चैव व्यक्ताव्यक्तः सनातनः॥
ईश्वरात्परतो विद्या विद्यायाः परतः शिवः।
शिवात्परतरो देवस्त्वमेव परमेश्वर॥
सर्वतः पाणिपादस्त्वं सर्वतोऽक्षिशिरोमुखः।
सहस्रांशुस्त्वं तु देव सहस्रकिरणस्तथा॥
भूरादिभूर्भुवःस्वश्च महर्जनस्तपस्तथा।
प्रदीप्तं दीप्तिमन्नित्यं सर्वलोकप्रकाशकम्।
दुर्निरीक्ष्यं सुरेन्द्राणां यद्रूपं तस्य ते नमः॥
सुरसिद्धगणैर्जुष्टं भृग्वत्रिपुलहादिभिः।
शुभं परममव्यग्रं यद्रूपं तस्य ते नमः॥
पञ्चातीतस्थितं तद्वै दशैकादश एव च।
अर्धमासमतिक्रम्य स्थितं तत्सूर्यमण्डले।
तस्मै रूपाय ते देव प्रणताः सर्वदेवताः॥
विश्वकृद्विश्वभूतं च विश्वानरसुरार्चितम्।
विश्वस्थितमचिन्त्यं च यद्रूपं तस्य ते नमः॥
परं यज्ञात्परं देवात्परं लोकात्परं दिवः।
दुरतिक्रमेति यः ख्यातस्तस्मादपि परम्परात्।
परमात्मेति विख्यातं यद्रूपं तस्य ते नमः॥
अविज्ञेयमचिन्त्यं च अध्यात्मगतमव्ययम्।
अनादिनिधनं देवं यद्रूपं तस्य ते नमः॥
नमो नमः कारणकारणाय नमो नमः पापविनाशनाय।
नमो नमो वन्दितवन्दनाय नमो नमो रोगविनाशनाय॥
नमो नमः सर्ववरप्रदाय नमो नमः सर्वबलप्रदाय।
नमो नमो ज्ञाननिधे सदैव नमो नमः पञ्चदशात्मकाय*॥

(ब्राह्मपर्व १२३। ११—२४)

इस प्रकार हमारी स्तुतिसे प्रसन्न हो वे तैजस-

* स्तुतिका भाव इस प्रकार है—

हे सनातन देवदेव! आप ही समस्त चराचर प्राणियोंके आदि स्रष्टा एवं ईश्वरोंके ईश्वर तथा आदिदेव हैं। देवता, गन्धर्व, राक्षस, मुनि,

रूप कल्याणकारी देव मधुर वाणीमें बोले—'देवगण! आप क्या चाहते हैं?' तब हमने कहा—'प्रभो! आपके इस प्रचण्ड तप्त रूपको देखनेमें कोई भी समर्थ नहीं है। अतः संसारके कल्याणके लिये आप सौम्य रूप धारण करें।' देवताओंकी ऐसी प्रार्थना सुनकर उन्होंने 'एवमस्तु' कहकर सभीको सुख देनेवाला उत्तम रूप धारण कर लिया।

सुमन्तु मुनिने कहा—राजन्! सांख्ययोगका आश्रय ग्रहण करनेवाले योगी आदि तथा मोक्षकी अभिलाषा रखनेवाले पुरुष इनका ही ध्यान करते हैं। इनके ध्यानसे बड़े-बड़े पाप नष्ट हो जाते हैं। अग्निहोत्र, वेदपाठ और प्रचुर दक्षिणासे युक्त यज्ञ भी भगवान् सूर्यकी भक्तिके सोलहवीं कलाके तुल्य भी फलदायक नहीं हैं। ये तीर्थोंके भी तीर्थ, मङ्गलोंके भी मङ्गल और पवित्रोंको भी पवित्र करनेवाले हैं। जो इनकी आराधना करते हैं, वे सभी पापोंसे मुक्त होकर सूर्यलोकको प्राप्त करते हैं। वेदादि शास्त्रोंमें भगवान् दिवस्पति उपासना आदिके द्वारा जिस प्रकार सुलभ हो जाते हैं, उसी प्रकार सूर्यदेव समस्त लोकोंके उपास्य हैं।

राजा शतानीकने पूछा—मुने! देवता तथा ऋषियोंने किस प्रकार भगवान् सूर्यका सुन्दर रूप बनवाया? यह आप बतायें।

सुमन्तु मुनि बोले—राजन्! एक समय सभी ऋषियोंने ब्रह्मलोकमें जाकर ब्रह्माजीसे प्रार्थना की कि 'ब्रह्मन्! अदितिके पुत्र सूर्यनारायण आकाशमें अति प्रचण्ड तेजसे तप रहे हैं। जिस प्रकार नदीका किनारा सूख जाता है, वैसे ही अखिल जगत् विनाशको प्राप्त हो रहा है, हम सब भी अति पीड़ित हैं और आपका आसन कमल-पुष्प भी सूख रहा है, तीनों लोकोंमें कोई सुखी नहीं है, अतः आप ऐसा उपाय करें, जिससे यह तेज शान्त हो जाय।'

ब्रह्माजीने कहा—मुनीश्वरो! सभी देवताओंके साथ आप और हम सब सूर्यनारायणकी शरणमें जायँ, उसीमें सबका कल्याण है। ब्रह्माजीकी आज्ञा पाकर ब्रह्मा, विष्णु तथा शंकर सभी देवता और ऋषिगण उनकी शरणमें गये और उन्होंने भक्तिभावपूर्वक नम्र होकर अनेक प्रकारसे उनकी स्तुति की। देवताओंकी स्तुतिसे सूर्यनारायण प्रसन्न हो गये।

सूर्यभगवान् बोले—आपलोग वर माँगिये। उस समय देवताओंने यही वर माँगा कि 'प्रभो! आपके तेजको विश्वकर्मा कम कर दें, ऐसी आप आज्ञा प्रदान करें।' इन्होंने देवताओंकी प्रार्थना स्वीकार कर ली। तब विश्वकर्माने उनके तेजको तराश कर कम किया। इसी तेजसे भगवान् विष्णुका चक्र और अन्य देवताओंके शूल, शक्ति, गदा,

---

किन्नर, सिद्ध, नाग तथा तिर्यक् योनियोंके आप ही जीवनाधार हैं। आप ही ब्रह्मा, शिव, विष्णु, प्रजापति, वायु, इन्द्र, सोम, विवस्वान्, वरुण तथा काल हैं एवं जगत्के स्रष्टा, संहर्ता, पालनकर्ता और सबके शासक भी आप ही हैं। आप ही नदी, सागर, पर्वत, विद्युत्, इन्द्रधनुष इत्यादि सब कुछ हैं। प्रलय, प्रभव, व्यक्त एवं अव्यक्त भी आप ही हैं। ईश्वरसे परे विद्या, विद्यासे परे शिव तथा शिवसे परतर आप परमदेव हैं। हे परमात्मन्! आपके पाणि, पाद, अक्षि, सिर, मुख सर्वत्र—चतुर्दिक् व्याप्त हैं। आपकी देदीप्यमान सहस्रों किरणें सब ओर व्याप्त हैं। भूः, भुवः, स्वः, महः, जनः, तपः तथा सत्य इत्यादि समस्त लोकोंमें आपका ही प्रचण्ड एवं प्रदीप्त तेज प्रकाशित है। इन्द्रादि देवताओंसे भी दुर्निरीक्ष्य, भृगु, अत्रि, पुलह आदि ऋषियों एवं सिद्धोंद्वारा सेवित अत्यन्त कल्याणकारी एवं शान्त रूपवाले आपको नमस्कार है। हे देव! आपका वह रूप पाँच, दस अथवा एकादश इन्द्रियों आदिसे अगम्य है, उस रूपकी देवता सदा वन्दना करते रहते हैं। देव! विश्वस्रष्टा, विश्वमें स्थित तथा विश्वभूत आपके अचिन्त्य रूपकी इन्द्रादि देवता अर्चना करते रहते हैं। आपके उस रूपको नमस्कार है। नाथ! आपका रूप यज्ञ, देवता, लोक, आकाश—इन सबसे परे है, आप दुरतिक्रम नामसे विख्यात हैं, इससे भी परे आपका अनन्त रूप है, इसीलिये आपका रूप परमात्मा नामसे प्रसिद्ध है। ऐसे रूपवाले आपको नमस्कार है। हे अनादिनिधन ज्ञाननिधे! आपका रूप अविज्ञेय, अचिन्त्य, अव्यय एवं अध्यात्मगत है, आपको नमस्कार है। हे कारणोंके कारण, पाप एवं रोगके विनाशक, वन्दितोंके भी वन्द्य, पञ्चदशात्मक, सभीके लिये श्रेष्ठ वरदाता तथा सभी प्रकारके बल देनेवाले! आपको सदा बार-बार नमस्कार है।

वज्र, बाण, धनुष, दुर्गा आदि देवियोंके आभूषण तथा शिविका (पालकी), परशु आदि आयुध बनाकर विश्वकर्माने उन्हें देवताओंको दिया।

भगवान् सूर्यका तेज सौम्य हो जानेसे तथा उत्तम-उत्तम आयुध प्राप्त कर देवता अत्यन्त प्रसन्न हुए और उन्होंने पुनः उनकी भक्तिपूर्वक स्तुति की।

देवताओंकी स्तुतिसे प्रसन्न हो भगवान् सूर्यने और भी अनेक वर उन्हें प्रदान किये। अनन्तर देवताओंने परस्पर विचार किया कि दैत्यगण वर पाकर अत्यन्त अभिमानी हो गये हैं। वे अवश्य भगवान् सूर्यको हरण करनेका प्रयत्न करेंगे। इसलिये उन सबको नष्ट करनेके लिये तथा इनकी रक्षाके लिये हमें चाहिये कि हम इनके चारों ओर खड़े हो जायँ, जिससे ये दैत्य सूर्यको देख न सकें। ऐसा विचारकर स्कन्द दण्डनायकका रूप धारण कर भगवान् सूर्यके बायीं ओर स्थित हो गये। भगवान् सूर्यने दण्डनायकको जीवोंके शुभाशुभ कर्मोंको लिखनेका निर्देश दिया। दण्डका निर्णय करने तथा दण्डनीतिका निर्धारण करनेसे दण्डनायक नाम पड़ा। अग्निदेव पिंगलवर्णके होनेके कारण पिंगल नामसे प्रसिद्ध हुए और सूर्यभगवान्की दाहिनी ओर स्थित हुए। इसी प्रकार दोनों पार्श्वोंमें दो अश्विनीकुमार स्थित हुए। वे अश्वरूपसे उत्पन्न होनेके कारण अश्विनीकुमार कहलाये। महाबलशाली राज्ञ और श्रौष दो द्वारपाल हुए। राज्ञ कार्तिकेयके और श्रौष हरके अवतार कहे गये हैं। लोकपूज्य ये दोनों द्वारपाल धर्म और अर्थके रूपमें प्रथम द्वारपर रहते हैं। दूसरे द्वारपर कल्माष और पक्षी ये दो द्वारपाल रहते हैं। इनमेंसे कल्माष यमराजके रूप हैं और पक्षी गरुडरूप हैं। ये दोनों दक्षिण दिशामें स्थित हैं। कुबेर और विनायक उत्तरमें तथा दिण्डी और रेवन्त पूर्व दिशामें स्थित हैं। दिण्डी रुद्ररूप हैं और रेवन्त भगवान् सूर्यके पुत्र हैं। ये सब देवता दैत्योंको मारनेके लिये सूर्यनारायणके चारों ओर स्थित हैं और सुन्दर रूपवाले, विरूप, अन्यरूप और कामरूप हैं तथा अनेक प्रकारके आयुध धारण किये हैं। चारों वेद भी उत्तम रूप धारणकर भगवान् सूर्यके चारों ओर स्थित हैं। (अध्याय १२१—१२४)

श्रीसूर्यनारायणके आयुध—व्योमका लक्षण और माहात्म्य

सुमन्तु मुनिने कहा—राजन्! अब भगवान् सूर्यके मुख्य आयुध व्योमका लक्षण कहता हूँ, उसे आप सुनें।

भगवान् सूर्यका आयुध व्योम सर्वदेवमय है, वह चार शृङ्गोंसे युक्त है तथा सुवर्णका बना हुआ है। जिस प्रकार वरुणका पाश, ब्रह्माका हुंकार, विष्णुका चक्र, त्र्यम्बकका त्रिशूल तथा इन्द्रका आयुध वज्र है, उसी प्रकार भगवान् सूर्यका आयुध व्योम है। उस व्योममें ग्यारह रुद्र, बारह आदित्य, दस विश्वेदेव*, आठ वसुगण तथा दो अश्विनीकुमार—ये सभी अपनी-अपनी कलाओंके साथ स्थित हैं। हर, शर्व, त्र्यम्बक, वृषाकपि, शम्भु, कपर्दी, रैवत, अपराजित, ईश्वर, अहिर्बुध्न्य और भुवन (भव)-ये ग्यारह रुद्र हैं। ध्रुव, धर, सोम, अनिल, अनल, अप्, प्रत्यूष और प्रभास—ये आठ वसु हैं। नासत्य और दस्र—ये दो अश्विनीकुमार हैं। क्रतु, दक्ष, वसु, सत्य, काल, काम, धृति, कुरु, शंकुमात्र तथा वामन—ये दस विश्वेदेव हैं। इसी प्रकार

* अन्य सभी पुराणोंमें विश्वेदेवोंकी संख्या कहीं दस, कहीं बारह, कहीं तेरह बतलायी गयी है। विशेष जानकारीके लिये 'कल्याण' विशेषाङ्क 'देवताङ्क' देखना चाहिये।

साध्य, तुषित, मरुत् आदि देवता हैं। इनमें आदित्य और मरुत कश्यपके पुत्र हैं। विश्वेदेव, वसु और साध्य—ये धर्मके पुत्र हैं। धर्मका तीसरा पुत्र वसु (सोम) है और ब्रह्माजीका पुत्र धर्म है।

स्वायम्भुव, स्वारोचिष, उत्तम, तामस, रैवत और चाक्षुष—ये छः मनु तो व्यतीत हो गये हैं, वर्तमानमें सप्तम वैवस्वत मनु हैं। अर्कसावर्णि, ब्रह्मसावर्णि, रुद्रसावर्णि, धर्मसावर्णि, दक्षसावर्णि, रौच्य और भौत्य—ये सब मनु आगे होंगे। इन चौदहों मन्वन्तरोंमें इन्द्रोंके नाम इस प्रकार हैं—विष्णुभुक्, विद्युति, विभु, प्रभु, शिखी तथा मनोजव—ये छः इन्द्र व्यतीत हो गये हैं। ओजस्वी नामक इन्द्र वर्तमानमें हैं। बलि, अद्भुत, त्रिदिव, सुसात्त्विक, कीर्ति, शतधामा तथा दिवस्पति—ये सात इन्द्र आगे होंगे। कश्यप, अत्रि, वसिष्ठ, भरद्वाज, गौतम, विश्वामित्र और जमदग्नि—ये सप्तर्षि हैं। प्रवह, आवह, उद्वह, संवह, विवह, निवह और परिवह—ये सात मरुत् हैं। (प्रत्येकमें सात-सात मरुद्गणोंका समूह है)। ये उनचास मरुत् आकाशमें पृथक्-पृथक् मार्गसे चलते हैं। सूर्याग्निका नाम शुचि, वैद्युत अग्निका नाम पावक और अरणि-मन्थनसे उत्पन्न अग्निका नाम पवमान है। ये तीन अग्नियाँ हैं। अग्नियोंके पुत्र-पौत्र उनचास हैं और मरुत् भी उनचास ही हैं। संवत्सर, परिवत्सर, इद्वत्सर (इडावत्सर) अनवत्सर और वत्सर—ये पाँच संवत्सर हैं—ये ब्रह्माजीके पुत्र हैं। सौम्य, बर्हिषद् और अग्निष्वात्त—ये तीन पितर हैं। सूर्य, सोम, भौम, बुध, गुरु, शुक्र, शनि, राहु और केतु—ये नव ग्रह हैं। ये सदा जगत्का भाव-अभाव सूचित करते हैं। इनमें सूर्य और चन्द्र मण्डलग्रह, भौमादि पाँच तारग्रह और राहु-केतु छायाग्रह कहलाते हैं। नक्षत्रोंके अधिपति चन्द्रमा हैं और ग्रहोंके राजा सूर्य हैं। सूर्य कश्यपके पुत्र हैं, सोम धर्मके, बुध चन्द्रके, गुरु और शुक्र प्रजापति भृगुके, शनि सूर्यके, राहु सिंहिकाके और केतु ब्रह्माजीके पुत्र हैं।

पृथ्वीको भूलोक कहते हैं। भूलोकके स्वामी अग्नि, भुवर्लोकके वायु और स्वर्लोकके स्वामी सूर्य हैं। मरुद्गण भुवर्लोकमें रहते हैं और रुद्र, अश्विनीकुमार, आदित्य, वसुगण तथा देवगण स्वर्लोकमें निवास करते हैं। चौथा महर्लोक है, जिसमें प्रजापतियोंसहित कल्पवासी रहते हैं। पाँचवें जनलोकमें भूमिदान करनेवाले तथा छठे तपोलोकमें ऋभु, सनत्कुमार तथा वैराज आदि ऋषि रहते हैं। सातवें सत्यलोकमें वे पुरुष रहते हैं, जो जन्म-मरणसे मुक्ति पा जाते हैं। इतिहास-पुराणके वक्ता तथा श्रोता भी उस लोकको प्राप्त करते हैं। इसे ब्रह्मलोक भी कहा गया है, इसमें न किसी प्रकारका विघ्न है न किसी प्रकारकी बाधा।

देव, दानव, गन्धर्व, यक्ष, राक्षस, नाग, भूत, और विद्याधर—ये आठ देवयोनियाँ हैं। इस प्रकार इस व्योममें सातों लोक स्थित हैं। मरुत्, पितर, अग्नि, ग्रह और आठों देवयोनियाँ तथा मूर्त, अमूर्त सब देवता इसी व्योममें स्थित हैं। इसलिये जो भक्ति और श्रद्धासे व्योमका पूजन करता है, उसे सब देवताओंके पूजनका फल प्राप्त हो जाता है तथा वह सूर्यलोकको जाता है। अतः अपने कल्याणके लिये सदा व्योमका पूजन करना चाहिये।

महीपते! आकाश, ख, दिक्, व्योम, अन्तरिक्ष, नभ, अम्बर, पुष्कर, गगन, मेरु, विपुल, बिल, आपोछिद्र, शून्य, तमस्, रोदसी—व्योमके इतने नाम कहे गये हैं। लवण, क्षीर, दधि, घृत, मधु, इक्षु तथा सुस्वादु (जलवाला)—ये सात समुद्र हैं। हिमवान्, हेमकूट, निषध, नील, श्वेत, शृङ्गवान्—ये छः वर्षपर्वत हैं। इनके मध्य महाराजत नामक पर्वत है। माहेन्द्री, आग्नेयी, याम्या, नैर्ऋती, वारुणी, वायवी, सौम्या तथा ईशानी—ये देवनगरियाँ ऊपर

समाश्रित है। पृथ्वीके ऊपर लोकालोक पर्वत है। अनन्तर अण्डकपाल, इससे परे अग्नि, वायु, आकाश आदि भूत कहे गये हैं। इससे परे महान् अहंकार, अहंकारसे परे प्रकृति, प्रकृतिसे परे पुरुष और इस पुरुषसे परे ईश्वर है, जिससे यह सम्पूर्ण जगत् आवृत है। भगवान् भास्कर ही ईश्वर हैं, उनसे यह जगत् परिव्याप्त है। ये सहस्रों किरणवाले, महान् तेजस्वी, चतुर्बाहु एवं महाबली हैं।

भूर्लोक, भुवर्लोक, स्वर्लोक, महर्लोक, जनलोक, तपोलोक और सत्यलोक—ये सात लोक कहे गये हैं। भूमिके नीचे जो सात लोक हैं, वे इस प्रकार हैं—तल, सुतल, पाताल, तलातल, अतल, वितल और रसातल। काञ्चन मेरु पर्वत भूमण्डलके मध्यमें फैला हुआ चार रमणीय शृङ्गोंसे युक्त तथा सिद्ध-गन्धर्वोंसे सुसेवित है। इसकी ऊँचाई चौरासी हजार योजन है। यह सोलह हजार योजन भूमिमें नीचे प्रविष्ट है। इस प्रकार सब मिलाकर एक लाख योजन मेरुपर्वतका मान है। उसका सौमनस, नामका प्रथम शृङ्ग सुवर्णका है, ज्योतिष्क नामका द्वितीय शृङ्ग पद्मराग मणिका है। चित्र नामका तृतीय शृङ्ग सर्वधातुमय है और चन्द्रौजस्क नामक चतुर्थ शृङ्ग चाँदीका है। गाङ्गेय नामक प्रथम सौमनस शृङ्गपर भगवान् सूर्यका उदय होता है, सूर्योदयसे ही सब लोग देखते हैं, अतः उसका नाम उदयाचल है। उत्तरायण होनेपर सौमनस शृङ्गसे और दक्षिणायन होनेपर ज्योतिष्क शृङ्गसे भगवान् सूर्य उदित होते हैं। मेष और तुला-संक्रान्तियोंमें मध्यके दो शृङ्गोंमें सूर्यका उदय होता है। इस पर्वतके ईशानकोणमें ईश और अग्निकोणमें इन्द्र, नैर्ऋत्यकोणमें अद्रि और वायव्यकोणमें मरुत् तथा मध्यमें साक्षात् ब्रह्मा, ग्रह एवं नक्षत्र स्थित हैं। इसे व्योम कहते हैं। व्योममें सूर्यभगवान् स्वयं निवास करते हैं, अतः यह व्योम सर्वदेवमय और सर्वलोकमय है। राजन्! पूर्वकोणमें स्थित शृङ्गपर शुक्र हैं, दूसरे शृङ्गपर हेलिज (शनि), तीसरेपर कुबेर, चौथे शृङ्गपर सोम हैं। मध्यमें ब्रह्मा, विष्णु और शिव स्थित हैं। पूर्वोत्तर शृङ्गपर पितृगण और लोकपूजित गोपति महादेव निवास करते हैं। पूर्वाग्नेय शृङ्गपर शाण्डिल्य निवास करते हैं। अनन्तर महातेजस्वी हेलिपुत्र यम निवास करते हैं। नैर्ऋत्यकोणके शृङ्गमें महाबलशाली विरूपाक्ष निवास करते हैं। उसके बाद वरुण स्थित हैं, अनन्तर महातेजस्वी महाबली वीरमित्र निवास करते हैं। सभी देवोंके नमस्कार्य वायव्य शृङ्गका आश्रयण कर नरवाहन कुबेर निवास करते हैं। मध्यमें ब्रह्मा, नीचे अनन्त, उपेन्द्र और शंकर अवस्थित हैं। इसीको मेरु, व्योम और धर्म भी कहा जाता है। यह व्योमस्वरूप मेरु वेदमय नामसे प्रसिद्ध है। चारों शृङ्ग चारों वेदस्वरूप हैं। (अध्याय १२५-१२६)

साम्बद्वारा भगवान् सूर्यकी आराधना, कुष्ठरोगसे मुक्ति तथा सूर्यस्तवराजका कथन

राजा शतानीकने पूछा—मुने! साम्बने किस प्रकार भगवान् सूर्यकी आराधना की और उस भयंकर रोगसे कैसे मुक्ति पायी? इसे आप कृपाकर बतायें।

सुमन्तु मुनिने कहा—राजन्! आपने बहुत उत्तम कथा पूछी है। इसका मैं विस्तारसे वर्णन करता हूँ, इसके सुननेसे सभी पाप दूर हो जाते हैं। नारदजीके द्वारा सूर्यभगवान्का माहात्म्य सुनकर साम्बने अपने पिता श्रीकृष्णचन्द्रके पास जाकर विनयपूर्वक प्रार्थना की—'भगवन्! मैं अत्यन्त

दारुण रोगसे ग्रस्त हूँ। वैद्योंद्वारा बहुत ओषधियोंका सेवन करनेपर भी मुझे शान्ति नहीं मिल रही है। अब आप आज्ञा दें कि मैं वनमें जाकर तपस्याद्वारा अपने इस भयंकर रोगसे छुटकारा प्राप्त करूँ।' पुत्रका वचन सुनकर भगवान् श्रीकृष्णने आज्ञा दे दी और साम्ब अपने पिताकी आज्ञाके अनुसार सिन्धुके उत्तरमें चन्द्रभागा नदीके तटपर लोकप्रसिद्ध मित्रवन नामके सूर्यक्षेत्रमें जाकर तपस्या करने लगे। वे उपवास करते हुए सूर्यकी आराधनामें तत्पर हो गये। उन्होंने इतना कठोर तप किया कि उनका अस्थिमात्र ही शेष रह गया। वे प्रतिदिन इस गुह्य स्तोत्रसे दिव्य, अव्यय एवं प्रकाशमान आदित्यमण्डलमें स्थित भगवान् भास्करकी स्तुति करने लगे—

प्रजापति परमात्मन्! आप तीनों लोकोंके नेत्र-स्वरूप हैं, सम्पूर्ण प्राणियोंके आदि हैं, अतः आदित्य नामसे विख्यात हैं। आप इस मण्डलमें महान् पुरुषरूपमें देदीप्यमान हो रहे हैं। आप ही अचिन्त्यस्वरूप विष्णु और पितामह ब्रह्मा हैं। रुद्र, महेन्द्र, वरुण, आकाश, पृथ्वी, जल, वायु, चन्द्र, मेघ, कुबेर, विभावसु, यमके रूपमें इस मण्डलमें देदीप्यमान पुरुषके रूपसे आप ही प्रकाशित हैं। यह आपका साक्षात् महादेवमय वृत्त अण्डके समान है। आप काल एवं उत्पत्तिस्वरूप हैं। आपके मण्डलके तेजसे सम्पूर्ण पृथ्वी व्याप्त हो रही है। आप सुधाकी वृष्टिसे सभी प्राणियोंको परिपुष्ट करते हैं। विभावसो! आप ही अन्तःस्थ म्लेच्छजातीय एवं पशु-पक्षीकी योनिमें स्थित प्राणियोंकी रक्षा करते हैं। गलित कुष्ठ आदि रोगोंसे ग्रस्त तथा अन्ध और बधिरोंको भी आप ही रोगमुक्त करते हैं। देव! आप शरणागतके रक्षक हैं। संसार-चक्र-मण्डलमें निमग्न निर्धन, अल्पायु व्यक्तियोंकी भी सर्वदा आप रक्षा करते हैं। आप प्रत्यक्ष दिखायी देते हैं। आप अपनी लीलामात्रसे ही सबका उद्धार कर देते हैं। आर्त और रोगसे पीड़ित मैं स्तुतियोंके द्वारा आपकी स्तुति करनेमें असमर्थ हूँ। आप तो ब्रह्मा, विष्णु और महेश आदिसे सदा स्तुत होते रहते हैं। महेन्द्र, सिद्ध, गन्धर्व, अप्सरा, गुह्यक आदि स्तुतियोंके द्वारा आपकी सदा आराधना करते रहते हैं। जब ऋक्, यजु और सामवेद तीनों आपके मण्डलमें ही स्थित हैं तो दूसरी कौन-सी पवित्र अन्य स्तुति आपके गुणोंका पार पा सकती है? आप ध्यानियोंके परम ध्यान और मोक्षार्थियोंके मोक्षद्वार हैं। अनन्त तेजोराशिसे सम्पन्न आप नित्य अचिन्त्य, अक्षोभ्य, अव्यक्त और निष्कल हैं। जगत्पते! इस स्तोत्रमें जो कुछ भी मैंने कहा है, इसके द्वारा आप मेरी भक्ति तथा दुःखमय परिस्थिति (कुष्ठरोगकी बात)-को जान लें और मेरी विपत्तिको दूर करें*।

सूर्यभगवान्ने कहा—जाम्बवतीपुत्र! मैं तुम्हारी स्तुतिसे प्रसन्न हूँ, वत्स! मुझसे जो तुम चाहते हो वह कहो।

---

* आदिरेष हि भूतानामादित्य इति संज्ञितः। त्रैलोक्यचक्षुरेवात्र परमात्मा प्रजापतिः॥
एष वै मण्डले ह्यस्मिन् पुरुषो दीप्यते महान्। एष विष्णुरचिन्त्यात्मा ब्रह्मा चैष पितामहः॥
रुद्रो महेन्द्रो वरुण आकाशं पृथिवी जलम्। वायुः शशाङ्कः पर्जन्यो धनाध्यक्षो विभावसुः॥
य एष मण्डले ह्यस्मिन् पुरुषो दीप्यते महान्। एकः साक्षान्महादेवो वृत्रमण्डनिभः सदा॥
कालो ह्येष महाबाहुर्निबोधोत्पत्तिलक्षणः। य एष मण्डले ह्यस्मिंस्तेजोभिः पूरयन् महीम्॥
भ्राम्यते ह्यव्यवच्छिन्नो वातैर्योऽमृतलक्षणः। नातः परतरं किंचित् तेजसा विद्यते क्वचित्॥
पुष्णाति सर्वभूतानि एष एव सुधामृतैः। अन्तःस्थान् म्लेच्छजातीयांस्तिर्यग्योनिगतानपि॥
कारुण्यात् सर्वभूतानि पासि त्वं च विभावसो। श्वित्रकुष्ठ्यन्धबधिरान् पंगूंश्चापि तथा विभो॥
प्रपन्नवत्सलो देव कुरुते नीरुजो भवान्। चक्रमण्डलमग्नांश्च निर्धनाल्पायुषस्तथा॥

साम्बने कहा—भगवन्! आपके चरणोंमें मेरी दृढ़ भक्ति हो, यही वर चाहता हूँ।

सूर्यभगवान्ने कहा—ऐसा ही होगा! मैं तुमसे बहुत संतुष्ट हूँ, सुव्रत! द्वितीय वर माँगो।

साम्बने कहा—भगवन्! मेरे शरीरमें रहनेवाला यह मल—कुष्ठ आपकी कृपासे दूर हो जाय, गोपते! मेरा शरीर सर्वथा शुद्ध निर्मल हो जाय।

भगवान् सूर्यने कहा—ऐसा ही होगा।

भगवान् सूर्यके ऐसा कहते ही साम्बके शरीरसे कुष्ठरोग वैसे ही दूर हो गया जैसे सर्पके शरीरसे केंचुल। वह दिव्य रूपसम्पन्न हो गया। साम्ब भगवान् सूर्यको प्रणामकर उनके सम्मुख खड़े हो गये।

सूर्यदेवने कहा—साम्ब! प्रसन्न होकर मैं और भी वर देता हूँ। आजसे मेरा यह स्थान तुम्हारे नामसे प्रसिद्ध होगा। लोकमें तुम्हारी अक्षय कीर्ति होगी। जो व्यक्ति तुम्हारे नामसे मेरा स्थान बनायेगा, उसे सनातन लोक प्राप्त होगा। इस चन्द्रभागा नदीके तटपर मेरी स्थापना करो। मैं तुझे स्वप्नमें दर्शन देता रहूँगा। इतना कहकर सूर्यभगवान् प्रत्यक्ष दर्शन देकर अन्तर्धान हो गये।

इस साम्बकृत स्तोत्रको जो व्यक्ति भक्तिपूर्वक तीनों कालमें पढ़ता है अथवा सात दिनोंमें एक सौ इक्कीस बार पाठ और हवन करता है तो राज्यकी कामना करनेवाला राज्य, धनकी कामना करनेवाला धन प्राप्त कर लेता है और रोगसे पीड़ित व्यक्ति वैसे ही रोगमुक्त हो जाता है, जैसे साम्ब कुष्ठरोगसे मुक्त हो गये।

सुमन्तु मुनि बोले—राजन्! तपस्याके समय रोगसे दुर्बल साम्बने सूर्यकी स्तुति उनके सहस्रनामसे की थी। उसे दुःखी देखकर स्वप्नमें भगवान् सूर्यने साम्बसे कहा—'साम्ब! सहस्रनामसे मेरी स्तुति करनेकी आवश्यकता नहीं है। मैं अपने अतिशय गोपनीय, पवित्र और इक्कीस शुभ नामोंको बताता हूँ। प्रयत्नपूर्वक उन्हें ग्रहण करो, उनके पाठ करनेसे सहस्रनामके पाठका फल प्राप्त होगा। मेरे इक्कीस नाम इस प्रकार हैं—

(१) विकर्तन (विपत्तियोंको काटने तथा नष्ट करनेवाले), (२) विवस्वान् (प्रकाश-रूप), (३) मार्तण्ड (जिन्होंने अण्डमें बहुत दिन निवास किया), (४) भास्कर, (५) रवि, (६) लोकप्रकाशक, (७) श्रीमान्, (८) लोकचक्षु, (९) ग्रहेश्वर, (१०) लोकसाक्षी, (११) त्रिलोकेश, (१२) कर्ता, (१३) हर्ता, (१४) तमिस्रहा (अन्धकारको नष्ट करनेवाले), (१५) तपन, (१६) तापन, (१७) शुचि (पवित्रतम), (१८) सप्ताश्ववाहन, (१९) गभस्तिहस्त (किरणें ही जिनके हाथस्वरूप हैं), (२०) ब्रह्मा और (२१) सर्वदेवनमस्कृत।*

साम्ब! ये इक्कीस नाम मुझे अतिशय प्रिय हैं। यह स्तवराजके नामसे प्रसिद्ध है। यह स्तवराज

प्रत्यक्षदर्शी त्वं देव समुद्धरसि लीलया। का मे शक्तिः स्तवैः स्तोतुमार्तोऽहं रोगपीडितः॥
स्तूयसे त्वं सदा देवैर्ब्रह्मविष्णुशिवादिभिः। महेन्द्रसिद्धगन्धर्वैरप्सरोभिः सगुह्यकैः॥
स्तुतिभिः किं पवित्रैर्वा तव देव समीरितैः। यस्य ते ऋग्यजुःसाम्नां त्रितयं मण्डलस्थितम्॥
ध्यानिनां त्वं परं ध्यानं मोक्षद्वारं च मोक्षिणाम्। अनन्ततेजसाक्षोभ्यो ह्यचिन्त्याव्यक्तनिष्कलः॥
यदयं व्याहृतः किंचित् स्तोत्रेऽस्मिञ्जगतः पतिः। आर्तिं भक्तिं च विज्ञाय तत्सर्वं ज्ञातुमर्हसि॥

(ब्राह्मपर्व १२७। १०—२३)

* वैकर्तनो विवस्वांश्च मार्तण्डो भास्करो रविः। लोकप्रकाशकः श्रीमाँल्लोकचक्षुर्ग्रहेश्वरः॥
लोकसाक्षी त्रिलोकेशः कर्ता हर्ता तमिस्रहा। तपनस्तापनश्चैव शुचिः सप्ताश्ववाहनः॥
गभस्तिहस्तो ब्रह्मा च सर्वदेवनमस्कृतः।

(ब्राह्मपर्व १२८। ५—७)

शरीरको नीरोग बनानेवाला, धनकी वृद्धि करनेवाला और यशस्कर है एवं तीनों लोकोंमें विख्यात है। महाबाहो! इन नामोंसे उदय और अस्त दोनों संध्याओंके समय प्रणत होकर जो मेरी स्तुति करता है, वह सभी पापोंसे मुक्त हो जाता है। मानसिक, वाचिक और शारीरिक जो भी दुष्कृत हैं, वे सभी एक बार मेरे सम्मुख इसका जप करनेसे विनष्ट हो जाते हैं। यही मेरे लिये जपने योग्य तथा हवन एवं संध्योपासना है। बलिमन्त्र, अर्घ्यमन्त्र, धूपमन्त्र इत्यादि भी यही है। अन्नप्रदान, स्नान, नमस्कार, प्रदक्षिणामें यह महामन्त्र प्रतिष्ठित होकर सभी पापोंका हरण करनेवाला और शुभ करनेवाला है। यह कहकर जगत्पति भगवान् भास्कर कृष्णपुत्र साम्बको उपदेश देकर वहीं अन्तर्धान हो गये। साम्ब भी इस स्तवराजसे ससाश्ववाहन भास्करकी स्तुति कर नीरोग, श्रीमान् और उस भयंकर शारीरिक रोगसे सर्वथा मुक्त हो गये। (अध्याय १२७-१२८)

साम्बको सूर्य-प्रतिमाकी प्राप्ति

सुमन्तु मुनि बोले—राजन्! इस प्रकार साम्ब सूर्यनारायणसे वर प्राप्तकर अतिशय प्रसन्न हुए और वर-प्राप्तिको आश्चर्य मानते हुए अन्य तपस्वियोंके साथ समीपमें स्थित चन्द्रभागा नदीमें स्नान करनेके लिये गये। वहाँ वे स्नानकर श्रद्धाके साथ अपने हृदयमें मण्डलाकार भगवान् सूर्यकी भावना कर मनमें यह सोचने लगे कि 'सूर्यनारायणकी कैसी प्रतिमा हो और उसे किस प्रकार कहाँ स्थापित करूँ।' इस प्रकार विचार कर ही रहे थे कि उन्होंने देखा—चन्द्रभागा नदीके ऊपरसे एक अत्यन्त देदीप्यमान प्रतिमा बहती हुई चली आ रही है। प्रतिमा देखकर साम्बको यह निश्चय हो गया कि यह भगवान् सूर्यकी ही मूर्ति है। जैसी उन्होंने आज्ञा दी थी, वही यह सूर्य-प्रतिमा है, इसमें किसी प्रकारका संदेह नहीं। यह सोचकर नदीसे उस तेजसे चमकती हुई मूर्तिको निकालकर उन्होंने मित्रवन (मुल्तान)-में एक स्थानपर तपस्वियोंके साथ विधिपूर्वक उसकी स्थापना की। एक दिन साम्बने सूर्य-प्रतिमाको प्रणामकर पूछा—'नाथ! आपकी यह प्रतिमा किसने बनायी? इसकी आकृति बड़ी सुन्दर है।' आप कृपाकर बतायें।

प्रतिमा बोली—साम्ब! पूर्वकालमें मेरा रूप प्रचण्ड तेजोमय था। उससे व्याकुल होकर सभी देवताओंने प्रार्थना की कि 'आप अपना रूप सभी प्राणियोंके सहन करनेके योग्य बनायें, नहीं तो सभी लोग जल जायँगे।' मैंने महातपस्वी विश्वकर्माको आदेश दिया कि मेरे तेजको कम कर मेरा निर्माण करो। मेरा आदेश प्राप्त कर उन्होंने शाकद्वीपमें चक्रको घुमाकर मेरे तेजको खराद दिया। उसी विश्वकर्माने कल्पवृक्षके काष्ठसे यह मेरी सुलक्षणा प्रतिमा बनायी है। तुम्हारा उद्धार करनेके लिये मेरी आज्ञाके अनुसार विश्वकर्माने ही सिद्धसेवित हिमालयपर इसे निर्मितकर चन्द्रभागा नदीमें प्रवाहित कर दिया है। साम्ब! यह स्थान बड़ा शुभ है, सुन्दर है। यहाँ सदा मेरा सांनिध्य रहेगा। प्रातः मनुष्यगण इत चन्द्रभागाके तटपर मेरा सांनिध्य प्राप्त करेंगे। मध्याह्नमें कालप्रियमें (कालपीमें) और अनन्तर यहाँ प्रतिदिन मेरा दर्शन प्राप्त करेंगे। पूर्वाह्णमें ब्रह्मा, मध्याह्नमें विष्णु और अपराह्णमें शंकर सदा पूजा करेंगे। महाबाहो! इस प्रकार भगवान् सूर्यके ऐसा कहनेपर साम्ब अत्यन्त प्रसन्न हुए और भगवान् सूर्य भी अन्तर्धान हो गये। (अध्याय १२९)

मन्दिर-निर्माण-योग्य भूमि एवं मन्दिरमें प्रतिमाओंके स्थानका निरूपण

राजा शतानीकने पूछा—मुने! साम्बने भगवान् सूर्यकी प्रतिमाकी प्रतिष्ठा किस प्रकार की? किसके कथनानुसार उन्होंने भगवान् आदित्यके प्रासादका निर्माण कराया।

सुमन्तु मुनि बोले—चन्द्रभागा नदीसे प्रतिमा प्राप्त करनेके बाद साम्बने देवर्षि नारदका स्मरण किया। स्मरण करते ही वे वहाँ उपस्थित हो गये। साम्बने विधिवत् उनका पूजन-सत्कार आदि करके उनसे पूछा—'महाराज! भगवान्‌के मन्दिरको जो बनवाता है तथा प्रतिमाकी जो प्रतिष्ठा करता है, उन दोनोंका क्या फल है?'

नारदजीने कहा—नरशार्दूल! जो रमणीय स्थानमें सूर्य-मन्दिरका निर्माण कराता है, वह व्यक्ति सूर्यलोकमें जाता है, इसमें संदेह नहीं।

साम्बने पूछा—सूर्य-मन्दिरका निर्माण किस प्रकार तथा किस स्थानपर कराना चाहिये? आप इसे बतायें।

नारद बोले—जहाँ जलराशि निरन्तर विद्यमान रहे, वहाँ मन्दिर बनवाना चाहिये अर्थात् सर्वप्रथम एक विशाल जलाशयका निर्माण कराना चाहिये। यश और धर्मकी अभिवृद्धिके लिये वहीं देवमन्दिरका निर्माण कराना चाहिये। उसके समीप उद्यान एवं पुष्पवाटिका भी लगवाने चाहिये। ब्राह्मण आदि वर्णोंके लिये जैसी भूमि वास्तुशास्त्रकी दृष्टिसे प्रासाद-निर्माणके लिये वर्णित है, वैसी ही भूमि देवप्रासादके लिये भी प्रशस्त मानी गयी है।

सूर्यनारायणका मन्दिर पूर्वाभिमुख बनवाना चाहिये, पूर्वकी ओर द्वार रखनेका स्थान न हो तो पश्चिमाभिमुख बनवाये। परंतु मुख्य पूर्वाभिमुख ही है। स्थानकी इस प्रकारसे कल्पना करे कि मुख्य मन्दिरसे दक्षिणकी ओर भगवान् सूर्यका स्नान-गृह और उत्तरकी ओर यज्ञशाला रहे। भगवान् शिव और मातृकाका मन्दिर उत्तराभिमुख, ब्रह्माका पश्चिम और विष्णुका उत्तर-मुख बनवाना चाहिये। भगवान् सूर्यके दाहिने पार्श्वमें निक्षुभा तथा बायें पार्श्वमें राज्ञीको स्थापित करना चाहिये। सूर्यनारायणके दक्षिणभागमें पिङ्गल, वामभागमें दण्डनायक, सम्मुख श्री और महाश्वेताकी स्थापना करनी चाहिये। देवगृहके बाहर अश्विनीकुमारोंका स्थान बनाना चाहिये। मन्दिरके दूसरे कक्षमें राज्ञ और श्रौष, तीसरे कक्षमें कल्माष और पक्षी, दक्षिणमें दण्ड और माठर, उत्तरमें लोकपूजित कुबेरको स्थापित करना चाहिये। कुबेरसे उत्तर रेवन्त एवं विनायककी स्थापना करनी चाहिये या जिस दिशामें उत्तम स्थान हो वहींपर उनकी स्थापना करे। दाहिनी एवं बायीं ओर अर्घ्य प्रदान करनेके लिये दो मण्डल बनवाये। उदयके समय दक्षिण मण्डलमें और अस्तके समय वाम मण्डलमें भगवान्‌को अर्घ्य दे। चक्राकार पीठके ऊपर स्नानगृहमें चार कलशोंसे भगवान् सूर्यकी प्रतिमाको सविधि स्नान कराये। स्नानके समय शङ्ख आदि मङ्गल वाद्य बजाने चाहिये। तीसरे मण्डलमें सूर्यनारायणकी पूजा करे। सूर्यनारायणके सामने दिण्डीकी स्थानक (खड़ी हुई) प्रतिमा स्थापित करनी चाहिये। सूर्यनारायणके सम्मुख समीपमें ही सर्वदेवमय व्योमकी रचना करनी चाहिये। मध्याह्नके समय वहाँ सूर्यको अर्घ्य देना चाहिये अथवा मध्याह्नमें अर्घ्य देनेके लिये चन्द्र नामक तृतीय मण्डल बनाये। प्रथम स्नान कराकर बादमें अर्घ्य दे। भगवान् सूर्यके समीप ही उचित स्थानपर पुराणका पाठ करनेके लिये

स्थान बनाना चाहिये। यह देवताओंके स्थापनका विधान है। गृहराज और सर्वतोभद्र—ये दो प्रासाद सूर्यनारायणको अतिशय प्रिय हैं।

(अध्याय १३०)

सात प्रकारकी प्रतिमा एवं काष्ठ-प्रतिमाके निर्माणोपयोगी वृक्षोंके लक्षण

नारदजी बोले—साम्ब! अब मैं विस्तारके साथ प्रतिमा-निर्माणका विधान बतलाता हूँ। भक्तोंके कल्याणकी अभिवृद्धिके लिये भगवान् सूर्यकी प्रतिमा सात प्रकारकी बनायी जा सकती है। सोना, चाँदी, ताम्र, पाषाण, मृत्तिका, काष्ठ तथा चित्रलिखित। इनमें काष्ठकी प्रतिमाके निर्माणका विधान इस प्रकार है—

नक्षत्र तथा ग्रहोंकी अनुकूलता एवं शुभ शकुन देखकर मङ्गलस्मरणपूर्वक काष्ठ-ग्रहण करनेके लिये वनमें जाकर प्रतिमोपयोगी वृक्षका चयन करना चाहिये। दूधवाले वृक्ष, कमजोर वृक्ष, चौराहे, देवस्थान, वल्मीक, श्मशान, चैत्य, आश्रम आदिमें लगे हुए वृक्ष तथा पुत्रक वृक्ष—जिसको किसी बिना पुत्रवाले व्यक्तिने पुत्रके रूपमें लगाया हो अथवा बाल वृक्ष, जिसमें बहुत कोटर हों, अनेक पक्षी रहते हों, शस्त्र, वायु, अग्नि, बिजली तथा हाथी आदिसे दूषित वृक्ष, एक-दो शाखावाले वृक्ष, जिनका अग्रभाग सूख गया हो ऐसे वृक्ष प्रतिमाके योग्य नहीं होते। महुआ, देवदारु, वृक्षराज चन्दन, बिल्व, आम्र, खदिर, अंजन, निम्ब, श्रीपर्ण (अग्निमन्थ), पनस (कटहल), सरल, अर्जुन और रक्तचन्दन—ये वृक्ष प्रतिमाके लिये उत्तम हैं। चारों वर्णोंके लिये भिन्न-भिन्न ग्राह्य काष्ठोंका विधान है।

अभिमत वृक्षके पास जाकर वृक्षकी पूजा करनी चाहिये। पवित्र स्थान, एकान्त, केश-अङ्गारशून्य, पूर्व और उत्तरकी ओर स्थित, लोगोंको कष्ट न देनेवाला, विस्तृत सुन्दर शाखाओं तथा पत्तोंसे समृद्ध, सीधा, व्रणशून्य तथा त्वचावाला वृक्ष शुभ होता है। स्वयं गिरे हुए या हाथीसे गिराये गये, शुष्क होकर या अग्निसे जले हुए और पक्षियोंसे रहित वृक्षोंका प्रतिमा-निर्माणमें उपयोग नहीं करना चाहिये। मधुमक्खीके छातेवाला वृक्ष भी ग्राह्य नहीं है। स्निग्ध पत्रसमन्वित, पुष्पित तथा फलित वृक्षोंका कार्तिक आदि आठ मासोंमें उत्तम मुहूर्त देखकर उपवास रहकर अधिवासन-कर्म करना चाहिये। वृक्षके नीचे चारों ओर लीपकर गन्ध, पुष्पमाला, धूप आदिसे यथाविधि वृक्षकी पूजा करे। अनन्तर गायत्रीमन्त्रसे अभिमन्त्रित जलसे प्रोक्षण करे। दो उज्ज्वल वस्त्र धारण कर वृक्षकी गन्ध-माल्यसे पूजा करे तथा उसके सामने कुशासनपर बैठकर देवदारुकी समिधासे अग्निमें आहुतियाँ दे, नमस्कार करे।

ॐ प्रजापतये सत्यसदाय नित्यं
श्रेष्ठान्तरात्मन् सचराचरात्मन्।
सांनिध्यमस्मिन् कुरु देव वृक्षे
सूर्यावृतं मण्डलमाविशेश्च नमः॥

(ब्राह्मपर्व १३१। २६)

'प्रजापतिसत्यस्वरूप इस वृक्षको नित्य नमस्कार है। श्रेष्ठान्तरात्मन्! सचराचरात्मन्! देव! इस वृक्षमें आप सांनिध्य करें। सूर्यावृत-मण्डल इसमें प्रविष्ट हो। आपको नमस्कार है।'

इस प्रकार वृक्षकी पूजा कर उसको सान्त्वना देते हुए कहे—'वृक्षराज! संसारके कल्याणके लिये आप देवालयमें चलें। देव! आप वहाँ छेदन और तापसे रहित होकर स्थित रहेंगे, समयपर धूप आदि प्रदानकर पुष्पोंके द्वारा संसार आपकी पूजा करेगा।'

वृक्षके मूलमें धूप-माल्य आदिसे कुठारका पूजन कर उसका सिर पूर्वकी ओर करके सावधानीसे स्थापित करे। अनन्तर मोदक, खीर आदि भक्ष्य द्रव्य तथा सुगन्धित पुष्प, धूप, गन्ध आदिसे वृक्षकी और देवता, पितर, राक्षस, पिशाच, नाग, सुरगण, विनायक आदिकी पूजा करके रात्रिमें वृक्षका स्पर्श कर यह कहे—'देवदेव! आप पूजामें देवोंके द्वारा परिकल्पित हैं। वृक्षराज! आपको नमस्कार है। यह विधिवत् की गयी पूजा आप ग्रहण करें। जो-जो प्राणी यहाँ निवास करते हैं, उनको भी मेरा नमस्कार है*।'

प्रभातकालमें पुनः उस वृक्षका पूजन करे तथा ब्राह्मण और भोजकको दक्षिणा देकर विशेषज्ञोंके द्वारा स्वस्तिवाचनपूर्वक वृक्षका छेदन करे। पूर्व-ईशान और उत्तरकी ओर वृक्ष कट करके गिरे तो अच्छा है। शाखाओंके इन दिशाओंमें गिरनेपर ही वृक्षका छेदन करे अन्यथा नहीं। वृक्षका नैर्ऋत्य, आग्नेय और दक्षिण दिशाओंमें गिरना शुभ नहीं है एवं वायव्य और पश्चिममें गिरना मध्यम है। पहले वृक्षके चारों ओरकी शाखाओंको काटनेके बाद वृक्षको कटवाये। वृक्षसे शाखाएँ सर्वथा अलग हो जायँ तथा गिरकर टूटें नहीं एवं शब्द भी नहीं हो तो उत्तम है। जिसके कटनेसे दो भाग हो जाय, जिस वृक्षसे मधुर द्रव, घी, तेल आदि निकले उसका परित्याग कर दे। इन दोषोंसे रहित अच्छा काल देखकर काष्ठका संग्रह करना चाहिये।

(अध्याय १३१)

सूर्य-प्रतिमाकी निर्माण-विधि

नारदजीने कहा—यदुशार्दूल! मैं सभी देवोंकी प्रतिमाका लक्षण विशेषरूपसे आदित्यकी प्रतिमाका लक्षण कहता हूँ। एक हाथ, दो हाथ, तीन हाथ अथवा साढ़े तीन हाथ लम्बी या देवालयके द्वारके प्रमाणके अनुसार भगवान् सूर्यकी प्रतिमाका निर्माण कराना चाहिये। एक हाथकी प्रतिमा सौम्य होती है, दो हाथकी धन-धान्य देती है, तीन हाथकी प्रतिमासे सभी कार्य सिद्ध होते हैं, साढ़े तीन हाथकी लम्बी प्रतिमाकी स्थापनासे राष्ट्रमें सुभिक्ष, कल्याण और आरोग्यकी प्राप्ति होती है। प्रतिमाके अग्रभाग, मध्यभाग और मूलभागमें सौम्य होनेपर उसको गान्धर्वी प्रतिमा कहते हैं। वह धन-धान्य प्रदान करती है। देवालयके द्वारका जितना विस्तार हो, उसके आठवें अंशके समान प्रतिमा बनवानी चाहिये।

भगवान् सूर्यकी प्रतिमा विशाल नेत्र, कमलके समान मुख, रक्तवर्णके बिम्बके समान सुन्दर ओठ, रत्नजटित मुकुटसे अलंकृत मस्तक, मणि-कुण्डल, कटक, अंगद, हार आदि अलंकारोंसे सुशोभित अभ्यङ्ग धारण किये हुए, हाथोंमें प्रफुल्लित कमल और सुवर्णकी माला लिये हुए अतिशय सुन्दर सभी शुभ लक्षणोंसे समन्वित बनवानी चाहिये।

इस प्रकारकी प्रतिमा प्रजाका कल्याण करनेवाली आरोग्य-प्रदायक तथा अभय प्रदान करनेवाली होती है। हीन या कम अङ्गवाली प्रतिमा अनिष्टकारक होती है। अतः प्रतिमा सीधी और सुडौल बनवानी चाहिये।

ब्रह्माजीकी मूर्ति हाथमें कमण्डलु धारण किये कमलासनपर विराजमान तथा चार मुखोंसे संयुक्त बनवानी चाहिये। कार्तिकेयकी प्रतिमा कुमार-स्वरूप, हाथमें शक्ति लिये, अतिशय सुन्दर बनवानी चाहिये। इनकी ध्वजा मयूर-मण्डित होनी चाहिये।

* अर्चासु देवदेव त्वं देवैश्च परिकल्पितः। नमस्ते वृक्ष पूजेयं विधिवत् परिगृह्यताम्॥ (ब्राह्मपर्व १३१। ३३)

इन्द्रकी प्रतिमा चार दाँतोंसे युक्त सफेद दाँतोंवाले ऐरावत गजपर आरूढ़ तथा हाथमें वज्र धारण किये हुए बनवानी चाहिये। इस प्रकार देवोंकी प्रतिमा शुभ लक्षणोंसे युक्त और सुन्दर बनवानी चाहिये।

नारदजी बोले—साम्ब! भगवान् सूर्यकी इस प्रकारकी प्रतिमा बनवाकर ईशानकोणमें चार तोरण, पल्लव, पुष्पमाला, पताका आदिसे विभूषित कर फिर अधिवासनके लिये मण्डपका निर्माण करवाना चाहिये। काष्ठकी मूर्ति श्री, विजय, बल, यश, आयु और धन प्रदान करती है, मिट्टीकी प्रतिमा प्रजाका कल्याण करती है। मणिमयी प्रतिमा कल्याण और सुभिक्ष प्रदान करती है, सुवर्णकी प्रतिमा पुष्टि, चाँदीकी मूर्ति कीर्ति, ताम्रकी मूर्ति प्रजावृद्धि तथा पाषाणकी प्रतिमा विपुल भूमि लाभ कराती है। लोहे, शीशे एवं राँगेकी मूर्तियाँ अनिष्ट करनेवाली होती हैं, इसलिये इन धातुओंकी प्रतिमा नहीं बनवानी चाहिये।

साम्बने पूछा—नारदजी! भगवान् सूर्य सर्वदेवमय कहे गये हैं, यह उनका सर्वदेवमयत्व कैसा है? उसे कृपाकर बतलाइये।

नारदजीने कहा—साम्ब! तुमने बड़ी अच्छी बात पूछी है। अब मैं यह सब बता रहा हूँ। इसे ध्यानसे सुनो—

भगवान् सूर्य सर्वदेवमय हैं, उनके नेत्रोंमें बुध और सोम, ललाटपर भगवान् शंकर, सिरमें ब्रह्मा, कपालमें बृहस्पति, कण्ठमें एकादश रुद्र, दाँतोंमें नक्षत्र और ग्रहोंका निवास है। ओष्ठोंमें धर्म और अधर्म, जिह्वामें सर्वशास्त्रमयी महादेवी सरस्वती स्थित हैं। कर्णोंमें दिशाएँ और विदिशाएँ, तालुदेशमें ब्रह्मा और इन्द्र स्थित हैं। इसी प्रकार भ्रूमध्यमें बारहों आदित्य, रोमकूपोंमें सभी ऋषिगण, पेटमें समुद्र, हृदयमें यक्ष, किन्नर, गन्धर्व, पिशाच, दानव और राक्षसगण विराजमान हैं। भुजाओंमें नदियाँ, कक्षोंमें वृक्ष, पीठके मध्यमें मेरु, दोनों स्तनोंके बीचमें मङ्गल और नाभिमण्डलमें धर्मराजका निवास है। कटिप्रदेशमें पृथ्वी आदि, लिङ्गमें सृष्टि, जानुओंमें अश्विनीकुमार, ऊरुओंमें पर्वत, नखोंके मध्य सातों पाताल, चरणोंके बीच वन और समुद्रसहित भूमण्डल तथा दन्तान्तरोंमें कालाग्नि रुद्र स्थित हैं। इस प्रकार भगवान् सूर्य सर्वदेवमय तथा सभी देवताओंके आत्मा हैं। जैसे वायुसे विश्व व्याप्त है, वैसे ही चराचर जगत् इनसे परिव्याप्त है, क्योंकि वायु भी भगवान् सूर्यके प्रत्येक अङ्गोंमें ही स्थित रहता है। ऐसे ये भगवान् सूर्य सम्पूर्ण प्राणियोंपर अनुग्रह करनेके लिये निरन्तर तत्पर रहते हैं।

(अध्याय १३२-१३३)

सूर्य-प्रतिष्ठाका मुहूर्त और मण्डप बनानेका विधान

नारदजी बोले—साम्ब! भगवान् सूर्यकी स्थापनाके लिये प्रतिपदा, द्वितीया, चतुर्थी, पञ्चमी, दशमी, त्रयोदशी तथा पूर्णिमा—ये तिथियाँ प्रशस्त मानी गयी हैं। चन्द्रमा, बुध, गुरु और शुक्र—इन ग्रहोंके उदित एवं अनुकूल होनेपर भगवान् सूर्यकी प्रतिमाकी प्रतिष्ठा करनी चाहिये। सूर्यकी स्थापनामें तीनों उत्तरा, रेवती, अश्विनी, रोहिणी, हस्त, पुनर्वसु, पुष्य, श्रवण और भरणी—ये नक्षत्र प्रशस्त हैं। प्रतिष्ठाके लिये यज्ञभूमि भूसी, राख, केश आदिसे रहित एवं शुद्ध होनी चाहिये। उसमें बालू, कंकड़ एवं कोयले न हों। दस हाथ लम्बा-चौड़ा मण्डप बनवाना चाहिये। उसके चारों ओर वृक्ष, उद्यान, उपवन आदि होने चाहिये। उस मण्डपमें चार हाथ लम्बी-चौड़ी वेदीका निर्माण करे। नदीके

संगम-स्थानसे मिट्टी अथवा बालू लाकर वहाँ बिछाये। भलीभाँति मण्डपको गोबर आदिसे उपलिप्त करे, पूर्व दिशामें चतुरस्र, दक्षिण दिशामें अर्धचन्द्र, पश्चिम दिशामें वर्तुलाकार और उत्तर दिशामें पद्मके आकारवाले चार कुण्डोंका निर्माण करे। वट, पीपल, गूलर, बेल, पलाश, शमी अथवा चन्दनके द्वारा पाँच-पाँच हाथके खंभे लगाये। शुक्ल वस्त्र, पुष्पमाला, कुश आदिके द्वारा प्रत्येक खंभेको अलंकृत करे।

मण्डपके मध्यमें अलंकृत वेदीके ऊपर कुश बिछाकर पुष्पोंसे आच्छादित करे या ढककर प्रतिमाको रखे। मण्डपके आठों दिशाओंमें क्रमशः पीत, रक्त, कृष्ण, अञ्जनके समान नील, श्वेत, कृष्ण, हरित और चित्रवर्णकी आठ पताकाएँ आठ दिक्पालोंकी प्रसन्नताके लिये लगाये। सफेद और लाल चूर्णसे वेदीके ऊपर कमलकी आकृति बनाये। '**वेद्या वेदिः०**' (यजु० १९।१७) इस मन्त्रसे वेदीका स्पर्श करे। '**योगे योगेति०**' (यजु० ११।१४) इस मन्त्रसे उसपर पूर्वाग्र और उत्तराग्र कुशोंको बिछाये। वहाँ उत्तम बिछावन और दो तकियोंसे युक्त एक शय्या एवं विविध भक्ष्य पदार्थोंको मण्डपमें रखे। एक उत्तम श्वेत छत्र वहाँ स्थापित कर विचित्र दीपमालासे मण्डलको अलंकृत करे। (अध्याय १३४)

साम्बोपाख्यानके प्रसंगमें सूर्यकी अभिषेक-विधि

नारदजी बोले— अब मैं भगवान् सूर्यके स्नपनकी विधि बताता हूँ। वेदपाठी, पवित्र आचारनिष्ठ, शास्त्रमर्मज्ञ, सूर्यभक्त भोजक अथवा अन्य ब्राह्मणोंके साथ मण्डलके ईशानकोणमें एक हाथ लम्बा-चौड़ा और ऊँचा भद्रपीठ स्थापित कर देव-प्रतिमाको प्रासादमें लाये और प्रतिमाको उस पीठपर स्थापित करे। मार्गमें '**भद्रं कर्णेभिः०**' आदि माङ्गलिक मन्त्रोंकी ध्वनि होती रहे तथा भाँति-भाँतिके वाद्य बजते रहें। अनन्तर समुद्र, गङ्गा, यमुना, सरस्वती, चन्द्रभागा, सिन्धु, पुष्कर आदि तीर्थों, नदी, सरोवर, पर्वतीय झरनोंके जलसे भगवान् सूर्यको स्नान कराये। आठ ब्राह्मण और आठ भोजक सोनेके कलशोंके जलसे स्नान करायें। स्नानके जलमें रत्न, सुवर्ण, गन्ध, सर्वबीज, सर्वौषधि, पुष्प, ब्राह्मी, सुवर्चला (सूर्यमुखी), मुस्ता, विष्णुक्रान्ता, शतावरी, दूर्वा, मदार, हल्दी, प्रियंगु, वच आदि सभी ओषधियाँ डाले। कलशोंके मुखपर वट, पीपल और शिरीषके कोमल पल्लवोंको कुशके साथ रखे। भगवान् सूर्यको अर्घ्य देकर गायत्री-मन्त्रसे अभिमन्त्रित सोलह कलशोंसे स्नान कराये। सुवर्ण कलशके अभावमें चाँदी, ताँबा, मृत्तिकाके कलशोंसे ही स्नान कराना चाहिये। इसके अनन्तर पक्के ईंटोंसे बनी हुई वेदीके ऊपर कुश बिछाकर मूर्तिको दो वस्त्र पहनाकर स्थापित करना चाहिये। उस दिन व्रत रखे। मूर्ति स्थापित करनेके पश्चात् निम्न मन्त्रोंसे प्रतिमाका अभिषेक करे—

'देवश्रेष्ठ! ब्रह्मा, विष्णु, शिव आदि देवगण आकाश-गङ्गासे परिपूर्ण जलद्वारा आपका अभिषेक करें। दिवस्पते! भक्तिमान् मरुद्गण मेघजलसे परिपूर्ण द्वितीय कलशसे आपका अभिषेक करें। सुरोत्तम! विद्याधर सरस्वतीके जलसे परिपूर्ण तृतीय कलशके द्वारा आपका अभिषेक करें। देवश्रेष्ठ! इन्द्र आदि लोकपालगण समुद्रके जलसे परिपूर्ण चतुर्थ कलशसे आपका अभिषेक करें। नागगण कमलके परागसे सुगन्धित जलसे परिपूर्ण पञ्चम कलशसे आपका अभिषेक करें। हिमवान् एवं सुवर्णशिखरवाले सुमेरु आदि पर्वतगण दक्षिण-पश्चिममें स्थित छठे कलशके जलसे आपका अभिषेक करें। आकाशचारी

सप्तर्षिगण पद्मपरागसे सुगन्धित सम्पूर्ण तीर्थ-जलोंसे परिपूर्ण सप्तम घटके द्वारा आपका आभिषेक करें। आठ प्रकारके मङ्गलसे समन्वित अष्टम कलशसे वसुगण आपका अभिषेक करें। हे देवदेव! आपको नमस्कार है*।'

इसी प्रकार एक ताम्रके पात्रमें पञ्चगव्य बनाकर स्नान कराये। वैदिक मन्त्रोंसे गोमूत्र, गोमय, दूध, दही, कुशोदक लेकर ताम्रके नवीन पात्रमें पञ्चगव्य बनाकर सूर्यनारायणको स्नान कराये। मन्त्रसे गन्धयुक्त जलसे स्नान कराये, अनन्तर शुद्धोदक-स्नान कराये तथा रक्त वस्त्र एवं अलंकारसे अलंकृत कर इस प्रकार आवाहन करे—

एह्येहि भगवन् भानो लोकानुग्रहकारक।
यज्ञभागं गृहाण त्वमग्निदेव नमोऽस्तु ते॥

'भगवन्! लोकानुग्रहकारक भानो! आप आयें, इस यज्ञभागको ग्रहण करें, भगवान् सूर्यदेव! आपको नमस्कार है।'

तदनन्तर सुवर्णपात्रके द्वारा सूर्यदेवको अर्घ्य प्रदान करें। पहले मिट्टीके कलशसे, अनन्तर ताम्र-कलशसे फिर रजत-कलशसे और अन्तमें सुवर्णके कलशसे मन्त्रोंद्वारा अभिषेक करे। सम्पूर्ण तीर्थोदक और सर्वौषधिसे युक्त शङ्खको सूर्यदेवके मस्तकपर भ्रमण कराये और उसके जलसे स्नान कराये, अनन्तर पुष्प और धूप देकर जल, दूध, घृत, शहद और इक्षुरससे स्नान कराये।

इस प्रकारसे सूर्यदेवको स्नान करानेवाला पुरुष अग्निष्टोम, ज्योतिष्टोम, वाजपेय, राजसूय और अश्वमेध-यज्ञके फलको प्राप्त करता है। जो स्नानके समय सूर्यदेवका भक्तिपूर्वक दर्शन करता है, वह भी पूर्वोक्त फल प्राप्त करता है। ऐसे स्थानमें स्नान कराना चाहिये जहाँ स्नानके जलका कोई लङ्घन न कर सके और स्नानके जल, दही, दूधको कुत्ता, कौआ आदि निन्दित जीव भक्षण न कर सकें।

इस प्रकारके स्नानविधिके सम्पादनके लिये जिस प्रकारके ब्राह्मण और भोजककी आवश्यकता होती है, उनका लक्षण सुनें—

वह व्यक्ति विकलाङ्ग अर्थात् न्यूनाधिक अङ्गवाला न हो। वेदादि-शास्त्रोंका ज्ञाता, सुन्दर, कुलीन और आर्यावर्त देशमें उत्पन्न हो। गुरुभक्त, जितेन्द्रिय, तत्त्ववेता और सूर्यसम्बन्धी शास्त्रोंका ज्ञाता हो। ऐसे श्रेष्ठ ब्राह्मणसे स्नान और प्रतिष्ठा करानी चाहिये।

(अध्याय १३५)

भगवान् सूर्यकी प्रतिमाके अधिवासन और प्रतिष्ठाका विधान तथा फल

नारदजी बोले—साम्ब! अब मैं अधिवासनविधि कहता हूँ। पवित्र भूमिको लीपकर पाँच रंगोंसे चतुरस्र सुन्दर मण्डलकी रचना करे। पताका, ध्वज, तोरण, छत्र, पुष्पमाला आदिसे उसे अलंकृत

* देवास्त्वामभिषिञ्चन्तु ब्रह्मविष्णुशिवादयः। व्योमगङ्गाम्बुपूर्णेन कलशेन सुरोत्तम॥
मरुतश्चाभिषिञ्चन्तु भक्तिमन्तो दिवस्पते। मेघतोयाभिपूर्णेन द्वितीयकलशेन तु॥
सारस्वतेन पूर्णेन कलशेन सुरोत्तम। विद्याधराभिषिञ्चन्तु तृतीयकलशेन तु॥
शक्राद्या अभिषिञ्चन्तु लोकपालाः सुरोत्तमाः। सागरोदकपूर्णेन चतुर्थकलशेन तु॥
वारिणा परिपूर्णेन पद्मरेणुसुगन्धिना। पञ्चमेनाभिषिञ्चन्तु नागास्त्वां कलशेन तु॥
हिमवद्धेमकूटाद्या अभिषिञ्चन्तु चाचलाः। नैर्ऋतोदकपूर्णेन षष्ठेन कलशेन तु॥
सर्वतीर्थाम्बुपूर्णेन पद्मरेणुसुगन्धिना। सप्तमेनाभिषिञ्चन्तु ऋषयः सप्त खेचराः॥
वसवश्चाभिषिञ्चन्तु कलशेनाष्टमेन वै। अष्टमङ्गलयुक्तेन देवदेव नमोऽस्तु ते॥
(ब्राह्मपर्व १३५। २१—२८)

कर मण्डलमें कुशा बिछाये और सूर्यदेवकी मूर्ति स्थापित करे। भगवान् सूर्यका आवाहन कर उन्हें अर्घ्य दे, मधुपर्क तथा वस्त्र, यज्ञोपवीत आदिसे पूजन करे और अव्यङ्ग अर्पण करे। जिस प्रकार देवताओंको पवित्रक अर्पण किया जाता है, वैसे ही प्रतिवर्ष श्रावण मासमें नवीन अव्यङ्गकी रचना कर सूर्यनारायणको समर्पित करना चाहिये। इनका यह पवित्रक है। नवीन अव्यङ्गके समर्पणके समय ब्राह्मणोंको भोजन कराये। भगवान्‌की प्रतिमाको सुगन्धित द्रव्योंसे उपलिप्त कर पुष्पमाला चढ़ाये तथा धूप आदि दिखाये। '**नमः शम्भवाय०**' (यजु० १६। ४१) इस मन्त्रसे भगवान्‌की प्रतिमाको शय्याके ऊपर शयन कराये। सम्पूर्ण कामनाओंकी पूर्तिके लिये इस प्रकार पाँच दिन, तीन दिन अथवा एक ही रात्रि प्रतिमाका अधिवासन करे*।

देवालयके ईशानकोणमें उत्तम स्थानके मध्यमें कुशा बिछाकर वहाँ शुक्ल वस्त्रोंसे सुसज्जित शय्या रखे। शय्याका सिरहाना पूर्वमुख रखा जाय। उसी शय्यापर भगवान् सूर्यकी प्रतिमाको शयन कराये। उनके दाहिने भागमें निक्षुभा, वाम भागमें राज्ञी और चरणोंके समीप दण्डनायक तथा पिङ्गलको स्थापित करे। उस रात्रिमें सूर्यनारायणके समीप जागरण करे, वन्दी-चारणसे स्तुति, नृत्य, गीत आदि उत्सव कराये। प्रभात होते ही ऋग्वेदके विधानसे प्रतिमाका उद्बोधन करे और स्वस्तिवाचनपूर्वक भगवान्‌की पूजा कर ब्राह्मण तथा भोजकोंको हविष्यान्न भोजन कराये तथा उन्हें दक्षिणा देकर प्रसन्न करे। अनन्तर मन्दिरके गर्भगृहमें पिण्डिकाके ऊपर सात अश्वोंसे युक्त सुवर्णका रथ स्थापित कर सूर्यनारायणको अर्घ्य देकर मङ्गल वाद्योंके साथ जलधारा गिराये। फिर उत्तम मुहूर्त और स्थिर लग्नमें प्रतिमाकी स्थापना करे। प्रतिमाका मुख नीचे-ऊपर या अगल-बगल, तिरछा न हो, वरन् सीधा और सम रहे। भगवान् सूर्यकी प्रतिमाके दक्षिणभागमें और वामभागमें क्रमशः निक्षुभा और राज्ञीकी प्रतिमा स्थापित करे। अनन्तर मोदक, शष्कुली, पायस, कृशर आदिसे इन्द्रादि दस दिक्पालोंका आवाहन तथा पूजन कर उन्हें बलि समर्पित करे।

इसके अनन्तर स्तुतियों तथा विविध उपचारोंसे सूर्यदेवका पूजन कर ब्राह्मणों और भोजकोंको भोजन कराये और उन्हें दक्षिणा दे। इस प्रकार भक्तोंद्वारा भक्तिपूर्वक प्रतिमाकी स्थापना किये जानेपर, वह उनकी सभी प्रकार कल्याण, मङ्गल और सुख-समृद्धिकी वृद्धि करती है और उसमें भगवान् सूर्यका नित्य सांनिध्य रहता है। सूर्यकी स्थापना करनेवाला व्यक्ति मोक्ष प्राप्त करता है और उसे सात जन्मोंतक आधि-व्याधियाँ भी नहीं सतातीं। तीन दिनोंतक प्रतिष्ठाके उत्सवोंमें सम्मिलित रहनेवाला व्यक्ति सूर्यलोकको जाता है। सूर्यनारायणकी प्रतिमाकी स्थापना करनेसे दस अश्वमेध तथा सौ वाजपेय-यज्ञोंका फल प्राप्त होता है। मन्दिरकी ईंट जबतक चूर्ण नहीं हो जाती, तबतक मन्दिर बनवानेवाला पुरुष स्वर्ग-सुख भोगता है। सूर्य-मन्दिरके जीर्णोद्धार करनेका पुण्य इससे भी अधिक है। जो पुरुष मन्दिरका निर्माण कराकर प्राणियोंकी सृष्टि, स्थिति एवं प्रलयके हेतुभूत सुरश्रेष्ठ भगवान् सूर्यकी प्रतिमा स्थापित करता है, वह संसारके सब सुखोंको भोगकर सौ कल्पोंतक सूर्यलोकमें निवास करता है। मन्दिरमें इतिहास-पुराणका पाठ भी करना चाहिये।

इसी प्रकार अन्य देवताओंकी प्रतिमाओंका भी शय्याधिवास तथा उद्बोधन करे और शुभ मुहूर्तमें उन प्रतिमाओंको यथास्थान पिण्डिकापर स्थापित कर पूजन करे।

(अध्याय १३६-१३७)

* पाञ्चरात्र-आगमों तथा विविध प्रतिष्ठा-ग्रन्थोंमें अधिवासनकी विस्तृत विधियाँ निर्दिष्ट हैं।

ध्वजारोपणका विधान और फल

नारदजी बोले—साम्ब! अब मैं ब्रह्माजीद्वारा वर्णित ध्वजारोपणकी विधि बतलाता हूँ। पूर्वकालमें देवता और असुरोंमें जो भीषण युद्ध हुआ, उसमें देवताओंने अपने-अपने रथोंपर जिन-जिन चिह्नोंकी कल्पना की, वे ही उनके ध्वज कहलाये। उनका लक्षण इस प्रकार है—ध्वजका दण्ड सीधा, व्रणरहित और प्रासादके व्यासके बराबर लम्बा होना चाहिये अथवा चार, आठ, दस, सोलह या बीस हाथ लम्बा होना चाहिये। ध्वजाका दण्ड बीस हाथसे अधिक लम्बा न हो और सम पर्वोंवाला हो। उसकी गोलाई चार अङ्गुल होनी चाहिये।

ध्वजके ऊपर देवताको सूचित करनेवाला चिह्न बनवाना चाहिये। भगवान् विष्णुके ध्वजपर गरुड, शिवजीकी ध्वजापर वृष, ब्रह्माजीकी ध्वजापर पद्म, सूर्यदेवकी ध्वजापर व्योम, सोमकी पताकापर नर, बलदेवकी पताकापर फालसहित हल, कामदेवकी पताकापर मकरध्वज, इन्द्रकी ध्वजापर हस्ती, दुर्गाकी ध्वजापर सिंह, उमादेवीकी ध्वजापर गोधा, रैवतकी ध्वजापर अश्व, वरुणकी ध्वजापर कच्छप, वायुकी ध्वजापर हरिण, अग्निकी ध्वजापर मेष, गणपतिकी ध्वजापर मूषकका तथा ब्रह्मर्षियोंकी पताकापर कुशका चिह्न बनाना चाहिये। जिस देवताका जो वाहन हो, वही ध्वजापर भी अङ्कित रहता है।

विष्णुकी ध्वजाका दण्ड सोनेका और पताका पीतवर्णकी होनी चाहिये, वह गरुड़के समीप रखनी चाहिये। शिवजीका ध्वजदण्ड चाँदीका और श्वेत वर्णकी पताका वृषके समीप स्थापित करे। ब्रह्माका ध्वजदण्ड ताँबेका और पद्मवर्णकी पताका कमलके समीप रखे। सूर्यनारायणका ध्वजदण्ड सुवर्णका और व्योमके नीचे पँचरंगी पताका होनी चाहिये, जिसमें किंकिणी लगी रहे एवं पुष्पमालाओंसे संयुक्त हो। इन्द्रका ध्वजदण्ड सोनेका और हस्तीके समीप अनेक वर्णकी पताका होनी चाहिये। यमका ध्वजदण्ड लोहेका और महिषके समीप कृष्णवर्णकी पताका रखनी चाहिये। कुबेरका ध्वजदण्ड मणिमय और मनुष्य-पादके समीप रक्त वर्णकी पताका रखे। बलदेवका ध्वजदण्ड चाँदीका और तालवृक्षके नीचे श्वेतवर्णकी पताका रखनी चाहिये। कामदेवका ध्वजदण्ड त्रिलौह (सोना, चाँदी और ताँबा-मिश्रित)-का और मकरके समीप रक्तवर्णकी पताका स्थापित करनी चाहिये। कार्तिकेयका ध्वजदण्ड त्रिलौहका और मयूरके समीप चित्रवर्णकी पताका एवं गणपतिका ध्वजदण्ड ताम्रका अथवा हस्तिदन्तका एवं मूषकके समीप शुक्लवर्णकी पताका और मातृकाओंके ध्वजदण्ड अनेक रूपोंके तथा अनेक वर्णोंकी अनेक पताकाएँ होनी चाहिये। रेवन्तकी पताका अश्वके समीप लालवर्णकी, चामुण्डाका ध्वजदण्ड लौहका और मुण्डमालाके समीप नीले वर्णकी ध्वजा होनी चाहिये। गौरीका ध्वजादण्ड ताम्रका और इन्द्रगोप (बीरबहूटी कीट)-के समान अतिशय रक्तवर्णकी ध्वजा होनी चाहिये। अग्निका ध्वजदण्ड सुवर्णका और मेषके समीप अनेक वर्णकी पताका होनी चाहिये। वायुका ध्वजदण्ड लौहका और हरिणके समीप कृष्णवर्णकी पताका होनी चाहिये। भगवतीका ध्वजदण्ड सर्वधातुमय, उसके ऊपर सिंहके समीप तीन रंगकी पताका होनी चाहिये।

इस प्रकार ध्वजका पहिले निर्माण कर उसका अधिवासन करे। लक्षणके अनुसार वेदीका निर्माण करे, कलशकी स्थापना कर सर्वौषधि-जलसे ध्वजको स्नान कराये। वेदीके मध्यमें उसे खड़ाकर सभी उपचारोंसे उसकी पूजा करे और उसे पुष्पमाला पहिनाये, दिक्पालोंको बलि देकर एक राततक अधिवासन करे। दूसरे दिन भोजन कराकर शुभ

मुहूर्तमें स्वस्तिवाचन आदि मङ्गल-कृत्य सम्पन्न कर ध्वजको मन्दिरके ऊपर आरूढ़ करे। ध्वजारोहणके समय अनेक प्रकारके वाद्योंको बजाये, ब्राह्मणगण वेद-ध्वनि करें। इस प्रकार देवालयपर ध्वजारोहण कराना चाहिये। ध्वजारोहण करानेवालेकी सम्पत्तिकी सदा वृद्धि होती रहती है और वह परम गतिको प्राप्त करता है। ध्वजरहित मन्दिरमें असुर निवास करते हैं, अतः ध्वजरहित मन्दिर नहीं रखना चाहिये। ध्वजारोहणके समय इन मन्त्रोंको पढ़ना चाहिये—

एह्येहि भगवन् देव देववाहन वै खग॥
श्रीकरः श्रीनिवासश्च जय जैत्रोपशोभित।
व्योमरूप महारूप धर्मात्मंस्त्वं च वै गतेः॥
सांनिध्यं कुरु दण्डेऽस्मिन् साक्षी च ध्रुवतां व्रज।
कुरु वृद्धिं सदा कर्तुः प्रासादास्यार्कवल्लभ॥
ॐ एह्येहि भगवन्नीश्वरविनिर्मित उपरिचरवायुमार्गानुसारिञ्छ्रीनिवास रिपुध्वंस यक्षनिलय सर्वदेवप्रियं कुरु सांनिध्यं शान्तिं स्वस्त्ययनं च मे। भयं सर्वविघ्ना व्यपसरन्तु॥

(ब्राह्मपर्व १३८। ७३—७६)

स्वच्छ दण्डमें पताकाको प्रतिष्ठित करे तथा पताकाका दर्शन करे। इस प्रकार भक्तिपूर्वक जो रविका ध्वजारोपण करता है, वह श्रेष्ठ भोगोंको भोगकर सूर्यलोकको प्राप्त करता है।

(अध्याय १३८)

साम्बोपाख्यानमें मगोंका वर्णन

साम्बने कहा—नारदजी! आपकी कृपासे मुझे सूर्यभगवान्‌का प्रत्यक्ष दर्शन प्राप्त हुआ, उत्तम रूप भी प्राप्त हुआ, किंतु मेरा मन चिन्तासे आकुल है, इस मूर्तिका पूजन और रक्षण कौन करेगा? इसे आप बतानेकी कृपा करें।

नारदजी बोले—साम्ब! इस कार्यको कोई भी ब्राह्मण स्वीकार नहीं करेगा, क्योंकि देवपूजा अर्थात् देवधनसे अपना निर्वाह करनेवाले ब्राह्मण देवलक कहे जाते हैं। जो लोग लोभवश देवधन और ब्राह्मणधनको ग्रहण करते हैं, वे नरकमें जाते हैं, अतः कोई भी ब्राह्मण देवताका पूजक नहीं बनना चाहता। तुम भगवान् सूर्यकी शरणमें जाओ और उन्हींसे पूछो कि कौन उनका विधि-विधानसे पूजन करेगा? अथवा राजा उग्रसेनके पुरोहितसे कहो, सम्भव है कि वे इस कार्यको स्वीकार कर लें।

नारदजीकी इस बातको सुनकर जाम्बवतीपुत्र साम्ब उग्रसेनके पुरोहित गौरमुखके पास गये और उन्होंने उन्हें सादर प्रणामकर कहा—'महाराज! मैंने सूर्यभगवान्‌का एक विशाल मन्दिर बनवाया है, उसमें समस्त परिवार तथा परिच्छदों एवं पत्नियोंसहित उनकी प्रतिमा स्थापित की है और अपने नामसे वहाँ एक नगर भी बसाया है। आपसे मेरा यह विनम्र निवेदन है कि आप उन्हें ग्रहण करें।'

गौरमुखने कहा—साम्ब! मैं ब्राह्मण हूँ और आप राजा हैं। आपके द्वारा दिये गये इस प्रतिग्रहको लेनेपर मेरा ब्राह्मणत्व नष्ट हो जायगा। दान लेना ब्राह्मणका धर्म है, किंतु देवप्रतिग्रह ब्राह्मणको नहीं लेना चाहिये। आप यह दान किसी मगको दे दें, वही सूर्यदेवकी पूजाका अधिकारी है।

साम्बने पूछा—महाराज! मग कौन हैं? कहाँ रहते हैं? किसके पुत्र हैं? इनका क्या आचार है। आप कृपाकर बतायें।

गौरमुख बोले—मग भगवान् सूर्य (अग्नि) तथा निक्षुभाके पुत्र हैं। पूर्वजन्ममें निक्षुभा महर्षि ऋग्जिह्वकी अत्यन्त सुन्दर पुत्री थी। एक बार उससे अग्निका उल्लङ्घन हो गया। फलस्वरूप

भगवान् सूर्य (अग्निस्वरूप) रुष्ट हो गये। बादमें अग्निरूप भगवान् सूर्यके द्वारा निक्षुभाका जो पुत्र हुआ, वही मग कहलाया। भगवान् सूर्यके वरदानसे ये ही अग्निवंशमें उत्पन्न अव्यङ्गको धारण करनेवाले मग सूर्यके परम भक्त हुए और सूर्यकी पूजाके लिये नियुक्त हुए। भगवान् सूर्यकी पूजा करनेवाले मग शाकद्वीपमें निवास करते हैं, आप भगवान् सूर्यके पूजकके रूपमें उन्हें प्राप्त करनेके लिये शाकद्वीप जायँ।

अनन्तर साम्बने द्वारका जाकर अपने पिता भगवान् श्रीकृष्णको सब समाचार सुनाया। फिर वे उनकी आज्ञा प्राप्तकर गरुडपर सवार हो शीघ्र ही शाकद्वीप पहुँच गये। वहाँ जाकर उन्होंने अतिशय तेजस्वी महात्मा मगोंको सूर्यभगवान्की आराधनामें संलग्न देखा। साम्बने उन्हें सादर प्रणामकर उनकी प्रदक्षिणा की।

साम्बने कहा—आपलोग धन्य हैं। आप सबका दर्शन सबके लिये कल्याणकारी है, आपलोग सदा भगवान् सूर्यकी आराधनामें लगे हुए हैं। मैं भगवान् श्रीकृष्णका पुत्र हूँ, मेरा नाम साम्ब है। मैंने चन्द्रभागा नदीके तटपर सूर्यदेवकी मूर्तिकी स्थापना की है। उनकी आज्ञाके अनुसार उनकी विधिवत् आराधनाके निमित्त शाकद्वीपसे जम्बूद्वीपमें ले जानेके लिये मैं आपकी सेवामें उपस्थित हुआ हूँ। मेरी सविनय प्रार्थना है कि आपलोग कृपाकर जम्बूद्वीपमें पधारें और भगवान् सूर्यकी पूजा करें।

मगोंने कहा—'साम्ब! इस बातकी जानकारी भगवान् सूर्यने हमें पहले ही दे दी है।'

यह सुनकर साम्ब बहुत प्रसन्न हुए और गरुडपर उन्हें बैठाकर वहाँसे मित्रवन (मूलस्थान—मुल्तान) ले आये। सूर्यभगवान् मगोंको वहाँ उपस्थित देखकर बहुत प्रसन्न हुए और साम्बसे बोले—'साम्ब! अब तुम चिन्ता छोड़ दो, ये मग मेरी विधिवत् पूजा सम्पन्न करेंगे।'

इस प्रकार साम्बने शाकद्वीपसे अव्यङ्ग धारण करनेवाले मगोंको लाकर धन-धान्यसे परिपूर्ण इस साम्बपुरको उन्हें समर्पित कर दिया। वे सब भगवान् सूर्यकी सेवामें तत्पर हो गये और साम्ब भी सूर्यदेव एवं मगोंको प्रणामकर आनन्दचित्तसे द्वारका लौट आये। (अध्याय १३९—१४१)

अव्यङ्गका लक्षण और उसका माहात्म्य

एक बार साम्बने महर्षि व्याससे मगोंद्वारा धारण किये जानेवाले अव्यङ्गके* विषयमें जिज्ञासा की।

व्यासजीने कहा—साम्ब! मैं तुम्हें अव्यङ्गके विषयमें बताता हूँ, उसे सुनो! देवता, ऋषि, नाग, गन्धर्व, अप्सरा, यक्ष और राक्षस ऋतु-क्रमसे भगवान् सूर्यके रथके साथ रहते हैं। यह रथ वासुकि नामक नागसे बँधा रहता है। किसी समय वासुकि नागका कंचुक (केंचुल) उतरकर गिर पड़ा। नागराज वासुकिके शरीरसे उत्पन्न उस निर्मोक (केंचुल)-को भगवान् सूर्यने सुवर्ण और रत्नोंसे अलंकृतकर अपने मध्य भागमें धारण कर लिया। इसीलिये भगवान् सूर्यके भक्त अपने देवकी प्रसन्नताके लिये अव्यङ्ग धारण करते हैं। उसके धारण करनेसे भोजक पवित्र हो जाते हैं और उनपर सूर्यभगवान्का अनुग्रह भी होता है।

इस अव्यङ्गको सर्पके केंचुलकी तरह मध्यमें पोला अर्थात् खाली रखना चाहिये। यह एक वर्णका होना चाहिये। कपासके सूतसे बना अव्यङ्ग दो सौ अङ्गुलका उत्तम, एक सौ बीस अङ्गुलका मध्यम और एक सौ आठ अङ्गुलका

* अहेरङ्गात् समुत्पन्नो ह्यव्यङ्गस्तु ततः स्मृतः॥ (ब्राह्मपर्व १४२। १५)

कनिष्ठ होता है, अतः इससे छोटा नहीं होना चाहिये। यज्ञोपवीतकी तरह आठवें वर्षमें अव्यङ्ग धारण करना चाहिये। भोजकोंके लिये यह मुख्य संस्कार है। इसके धारण करनेसे वह सभी क्रियाओंका अधिकारी होता है। यह अव्यङ्ग सर्वदेवमय, सर्ववेदमय, सर्वलोकमय और सर्वभूतमय है। इसके मूलमें विष्णु, मध्यमें ब्रह्मा और अन्तमें शशाङ्कमौलि भगवान् शिव निवास करते हैं। इसी तरह ऋग्वेद, यजुर्वेद और सामवेद क्रमशः मूल, मध्य और अग्रभागमें रहते हैं, अथर्ववेद ग्रन्थिमें स्थित रहता है। पृथ्वी, जल, तेज, वायु, आकाश और भूर्लोक, भुवर्लोक तथा स्वर्लोक आदि सातों लोक अव्यङ्गमें निवास करते हैं। सूर्यभक्त भोजकको सभी समय अव्यङ्ग धारणकर भगवान् सूर्यकी उपासना करनी चाहिये।

(अध्याय १४२)

साम्बोपाख्यानमें भगवान् सूर्यको अर्घ्य प्रदान करने और धूप दिखानेकी महिमा

सुमन्तु मुनि बोले—राजन्! इस प्रकार व्यासजीके द्वारा अव्यङ्गके विषयमें जानकारी प्राप्त कर साम्ब नारदजीके पास वापस लौट आये और उन्होंने उनसे सब वृत्तान्त बताकर पूछा—'देवर्षे! भोजकोंको भगवान् सूर्यको स्नान, अर्घ्य, आचमन, धूप आदि किस प्रकार समर्पित करना चाहिये?' इसका आप कृपाकर वर्णन करें।

नारदजी बोले—साम्ब! संक्षेपमें मैं वह विधि बता रहा हूँ, सावधान होकर सुनो। सर्वप्रथम शौचादिसे निवृत्त होकर आचमनपूर्वक नदीमें या जलाशय आदिमें स्नान करना चाहिये। अनन्तर स्वर्णदान कर तीन बार आचमन करे। शुद्ध वस्त्र पहनकर पवित्री धारणकर पूर्वाभिमुख या उत्तराभिमुख हो आचमन करना चाहिये। तदनन्तर दो बार मार्जन और तीन बार अभ्युक्षण करे। आचमनके बिना की गयी क्रिया निष्फल होती है एवं इसके बिना पुरुष शुद्ध भी नहीं होता। वेदमें कहा गया है कि देवता पवित्रताको ही चाहते हैं। आचमन करनेके बाद मौन होकर देवालयमें जाना चाहिये। आसनपर बैठकर प्राणायाम कर सिरको कपड़ेसे आच्छादित करे तथा विविध पुष्पोंसे सूर्यभगवान्‌की पूजा करे। व्याहृतिपूर्वक गायत्री-मन्त्रसे गुग्गुलका धूप दे। फिर भगवान् सूर्यके मस्तकपर पुष्पाञ्जलि अर्पित करे।

रक्त चन्दन, पद्म, करवीर, कुंकुम आदिको जलमें मिलाकर ताम्रके पात्रसे भगवान् सूर्यको अर्घ्य देना चाहिये। अर्घ्यपात्रको हाथमें उठाकर भगवान् सूर्यका आवाहन करे तथा दोनों जानुओंपर बैठकर भगवान् सूर्यका अपने हृदयमें ध्यान करते हुए नीचे लिखे मन्त्रसे अर्घ्य प्रदान करे—

एहि सूर्य सहस्त्रांशो तेजोराशे जगत्पते।
अनुकम्पय मां देव गृहाणार्घ्यं दिवाकर॥

तदनन्तर इस प्रकार प्रार्थना करे—

अर्चितस्त्वं यथाशक्त्या मया भक्त्या विभावसो।
ऐहिकामुष्मिकीं नाथ कार्यसिद्धिं ददस्व मे॥

(ब्राह्मपर्व १४३। ४७)

तीनों काल स्नानकर इस प्रकार जो भगवान् सूर्यकी आराधना करता है और धूप देता है, वह अश्वमेध-यज्ञका फल प्राप्त करता है और उसे धन, पुत्र तथा आरोग्यकी भी प्राप्ति हो जाती है एवं अन्तमें वह भगवान् सूर्यमें लीन हो जाता है। उत्तम पुष्पोंके न मिलनेपर पत्रोंसे ही पूजन करे। धूप ही दे या भक्तिपूर्वक जल ही सूर्यको समर्पित करे। यदि यह भी न हो सके तो प्रणाम ही करे। प्रणाम करनेमें असमर्थ हो तो मानसी पूजा करे।

यह विधि द्रव्यके अभावमें करनी चाहिये, द्रव्य रहनेपर विधिपूर्वक सभी सामग्रियोंसे पूजन करे। भक्तिपूर्वक सूर्यभगवान्‌की पूजा देखनेवालेको भी अश्वमेध-यज्ञका फल मिलता है और सूर्यलोककी प्राप्ति होती है। धूप-दानके समय सूर्यका दर्शन करनेपर उत्तम गति प्राप्त होती है। (अध्याय १४३)

सूर्यमण्डलस्थ पुरुषका वर्णन

सुमन्तु मुनि बोले—राजन्! एक बार व्यासजी शङ्ख-चक्र-गदाधारी नारायण भगवान् श्रीकृष्णके दर्शनके लिये द्वारका आये। महातेजस्वी श्रीकृष्णने पाद्य, अर्घ्य, आचमन आदिसे उनका पूजन कर आसनपर उन्हें बैठाया और प्रणाम कर साम्बद्वारा लाये गये भोजकोंकी महिमा तथा उनकी सूर्यभक्तिके विषयमें जिज्ञासा प्रकट की।

भगवान् वेदव्यास बोले—भोजक भगवान् सूर्यके अनन्य उपासक हैं और अन्तमें ये भगवान् सूर्यकी दिव्य तेजस्वी कलामें प्रविष्ट होते हैं। भगवान् भास्करकी तीन कलाएँ हैं। सूर्यनारायणकी प्रथम कला अग्निमें स्थित है, उससे सभी कर्मोंकी सिद्धि होती है। दूसरी प्रकाशिका कला आकाशमें स्थित है। तीसरी कला सूर्यमण्डलमें है। सवितादेवका यह मण्डल अजर एवं अव्यय है। इस मण्डलके मध्यमें सदसदात्मक वह परमात्मा पुरुषरूपमें स्थित है। वह पुरुष क्षर-अक्षररूपमें है, इसको महासूर्य कहते हैं। इसके निष्कल और सकल दो भेद हैं। तत्त्वोंके साथ सभी भूतोंमें अवस्थित वह परमात्मा सकल कहा जाता है और तत्त्वहीन होनेपर निष्कल। तृण, गुल्म, लता, वृक्ष, सिंह, वृक, हाथी, पक्षी, देवता, सिद्ध, मनुष्य, जल-जन्तु आदि सभीकी अन्तरात्मामें वह व्याप्त है। जब वह परमात्मा दूसरी कलामें स्थित होता है, तब वृष्टि आदि करता है। तीसरी तैजस कलामें स्थित होकर अपने भक्तोंको मोक्ष देता है, जिस मोक्षपदको प्राप्तकर वह परम शान्ति प्राप्त करता है।

वह परमात्मा ओंकारस्वरूप है, ओंकारकी साढ़े तीन मात्राएँ हैं, इनमें अर्धमात्रा मकारका जो ध्यान करता है, उसको सदसदात्मक ज्ञान होता है। सूर्यनारायणका रूप मकार है, मकारका ध्यान करनेसे ही ये मग कहे जाते हैं। धूप, माल्य आदिसे सूर्यनारायणका पूजन कर वे विविध पदार्थोंका भोजन कराते हैं, अतः उनकी भोजक संज्ञा है। (अध्याय १४४)

भगवान् व्यासद्वारा योग-ज्ञानका वर्णन

भगवान् श्रीकृष्णने कहा—महामुने! कृपाकर आप भोजकोंके सभी ज्ञानोंकी उपलब्धिका वर्णन करें।

व्यासजीने कहा—यह शरीर अस्थियोंपर ही खड़ा है, स्नायुओंसे बँधा, चमड़ेसे ढका एवं रक्त-मांससे उपलिप्त है। मल-मूत्र आदि दुर्गन्धयुक्त पदार्थोंसे भरा है। यह समस्त रोगोंका घर है और इसमें (भीतर) वृद्धावस्था और शोक छिपे हैं, जो अपने-अपने समयपर प्रकट होते रहते हैं। यह शरीर रजोगुण आदि गुणोंसे भरा है, अनित्य है और इसमें भूतसंघोंका आवास बना है। अतः इसमें आसक्तिका सर्वथा परित्याग कर देना चाहिये*।

* अस्थिस्थूलं स्नायुयुतं मांसशोणितलेपनम्। चर्मावनद्धं दुर्गन्धिपूर्णं मूत्रपुरीषयोः॥
जराशोकसमाविष्टं रोगायतनमातुरम्। रजस्वलमनित्यं च भूतावासमिमं त्यजेत्॥ (ब्राह्मपर्व १४५। २-३)

वृक्षोंके नीचे निवास करना, भोजनके लिये मिट्टीका भिक्षापात्र रखना, साधारण वस्त्र पहनना और किसीसे सहायता न लेना तथा सभी प्राणियोंमें समभाव रखना—यही जीवन्मुक्त पुरुषके लक्षण हैं।

जैसे तिलमें तैल, गायमें दूध, काष्ठमें अग्नि स्थित है, वैसे ही परमात्मा समस्त प्राणियोंमें स्थित हैं। ऐसा समझकर उनकी प्राप्तिका उपाय करना चाहिये। प्रथम प्रमथन स्वभाववाले तथा चञ्चल मनको प्रयत्नपूर्वक वशमें कर बुद्धि और इन्द्रियोंको वैसे ही रोकना चाहिये, जैसे पिंजरेमें पक्षियोंको रोका जाता है। इन संयत इन्द्रियोंके द्वारा इस शरीरको अमृतकी धाराके समान तृप्ति होती है[१]। प्राणायामसे शारीरिक दोष, धारणासे पूर्वजन्मार्जित तथा वर्तमानतकके सभी पाप, प्रत्याहारसे संसर्गजनित दोष एवं ध्यानसे जैविक दोषोंका त्यागकर ईश्वरीय गुणोंको प्राप्त करना चाहिये। जैसे आगके तापमें रखनेसे धातुओंके दोष दग्ध हो जाते हैं, वैसे ही प्राणायामके द्वारा साधकके इन्द्रियजनित दोष दग्ध हो जाते हैं। जैसे एक हाथसे दूसरे हाथको दबाया जाता है, वैसे ही अपनी शुद्ध बुद्धिके द्वारा मनको एवं चित्तको शुद्ध कर पवित्र भावनाओंके द्वारा दुर्व्यसनोंको शान्तकर मन-बुद्धिको अत्यन्त पवित्र कर लेना चाहिये। अतः चित्तकी शुद्धिके लिये प्रयास करना चाहिये। चित्तकी शुद्धि होनेसे शुभ और अशुभ कर्मोंका ज्ञान होता है। शुभ और अशुभ कर्मोंसे छुटकारा प्राप्त कर साधक निर्द्वन्द्व, निर्मम, निष्परिग्रह और निरहंकार होकर मोक्षको प्राप्त कर लेता है[२]।

सूर्यका पूर्वाह्णमें रक्तवर्ण, ऋग्वेदस्वरूप तथा राजसरूप होता है। मध्याह्नमें शुक्लवर्ण, यजुर्वेद-स्वरूप एवं सात्त्विक रूप होता है। सायंकालमें कृष्णवर्ण, सामवेदस्वरूप तथा तामसरूप होता है। इन तीनोंसे भिन्न ज्योतिःस्वरूप, सूक्ष्म और निरञ्जनस्वरूप चतुर्थ स्वरूप है। पद्मासनमें बैठकर सुषुम्णा नाडी-मार्गमें चित्तको स्थिर कर प्रणवसे पूरक, कुम्भक और रेचकरूप प्राणायाम कर पैरके अँगूठेके अग्रभागसे लेकर मस्तकपर्यन्त न्यास करे। नाभिमें अग्निका, हृदयमें चन्द्रमाका और मस्तकमें अग्निशिखाका न्यास करना चाहिये। इन सबसे ऊपर सूर्यमण्डलका न्यास करे—यह चतुर्थ स्थान है, इस स्थानको मोक्षकी इच्छा करनेवाले पुरुषको अवश्य जानना चाहिये। ऋषिगण सूर्यभगवान्‌के इसी तुरीय स्थानमें मनको लीनकर मुक्त हो जाते हैं। मग भी इसी स्थानका ध्यान कर मोक्षके भागी होते हैं। इस ज्ञानको सुनाकर भगवान् वेदव्यास बदरिकाश्रमकी ओर चले गये। (अध्याय १४५)

१-तिले तैलं गवि क्षीरं काष्ठे पावकसंततिः। उपायं चिन्तयेदस्य धिया धीरः समाहितः॥
प्रमाथि च प्रयत्नेन मनः संयम्य चञ्चलम्। बुद्धीन्द्रियाणि संयम्य शकुनानिव पंजरे॥ (ब्राह्मपर्व १४५।५-६)

२-इन्द्रियैर्नियतैर्देहीं धाराभिरिव तृप्यते। सततममृतस्यैव जनार्दन महामते॥
प्राणायामैर्दहेद्दोषान् धारणाभिश्च किल्बिषम्। प्रत्याहारेण संसर्गान् ध्यानेनानीश्वरान् गुणान्॥
ध्यायमानस्य दह्यन्ते चान्ते दोषा यथाग्निना। तथेन्द्रियकृता दोषा दह्यन्ते प्राणनिग्रहात्॥
चितं चित्तेन संशोध्य भावं भावेन शोधयेत्। मनस्तु मनसा शोध्य बुद्धिं बुद्ध्या तु शोधयेत्॥
चित्तस्यातिप्रसादेन भाति कर्म शुभाशुभम्।
शुभाशुभविनिर्मुक्तो निर्द्वन्द्वो निष्परिग्रहः। निर्ममो निरहंकारस्ततो याति परां गतिम्॥
(ब्राह्मपर्व १४५।७—११)

उत्तम एवं अधम भोजकोंके लक्षण

राजा शतानीकने पूछा—मुने! भगवान् सूर्यकी पूजा करनेवाले भोजक दिव्य, उनसे उत्पन्न एवं उन्हें अत्यन्त प्रिय हैं। इसलिये वे पूज्य हुए किंतु वे अभोज्य कैसे कहलाते हैं, इस विषयमें आप बतलायें?

सुमन्तु मुनिने कहा—राजन्! मैं इस विषयमें भगवान् वासुदेव तथा कृतवर्माके द्वारा हुए संवादको अत्यन्त संक्षेपमें बतला रहा हूँ। किसी समय नारद और पर्वत—ये दोनों मुनि साम्बपुर गये। वहाँ उन्होंने भोजकोंके यहाँ भोजन किया, अनन्तर वे दोनों विमानपर आरूढ़ हो द्वारकापुरीमें आ गये। उनके विषयमें कृतवर्माको शंका हुई कि सूर्यके पूजक होनेसे भोजकोंका अन्न अग्राह्य है, फिर नारद तथा पर्वत—इन दोनोंने उनका अन्न कैसे ग्रहण किया? इसपर वासुदेवने कृतवर्मासे कहा—जो भोजक अव्यङ्ग धारण नहीं करते और बिना अव्यङ्गके तथा बिना स्नान किये भगवान् सूर्यकी पूजा करते हैं और शूद्रका अन्न ग्रहण करते हैं तथा देवार्चाका परित्याग कर कृषि-कार्य करते हैं, जिनके जातकर्मादि संस्कार नहीं हुए हैं, शङ्ख धारण नहीं करते, मुण्डित नहीं रहते—वे भोजकोंमें अधम हैं। ऐसे भोजकद्वारा किये गये देवार्चन, हवन, स्नान, तर्पण, दान तथा ब्राह्मण-भोजन आदि सत्कर्म भी निष्फल होते हैं। इसीसे अशुचि होनेके कारण वे अभोज्य कहे गये हैं। भगवान् सूर्यके नैवेद्य, निर्माल्य, कुंकुम आदि शूद्रोंके हाथ बेचनेवाले, भगवान् सूर्यके धनको अपहृत करनेवाले भोजक उन्हें प्रिय नहीं हैं तथा वे भोजकोंमें अधम हैं। जो भोजक भगवान्‌को भोग लगाये बिना भोजन कर लेते हैं, उनका वह भोजन उन्हें नरक प्राप्त करानेवाला बन जाता है। अतः भगवान् सूर्यको अर्पण करके ही नैवेद्य भक्षण करना चाहिये, इससे शरीरकी शुद्धि होती है।

वासुदेवने पुनः बतलाया—कृतवर्मन्! भोजकोंकी प्रियताके विषयमें भगवान् सूर्यने अरुणको जो बतलाया, उसे आप सुनें—

जो भोजक पर-स्त्री तथा पर-धनका हरण करते हैं, देवताओं तथा वेदोंके निन्दक हैं, वे मुझे अप्रिय हैं, उनके द्वारा की गयी पूजा तथा प्रदान किये गये अर्घ्यको मैं ग्रहण नहीं करता। जो भगवती महाश्वेताका यजन नहीं करते एवं सूर्य-मुद्राओंको नहीं जानते तथा मेरे पार्षदोंका नाम नहीं जानते, वे मेरी पूजा करनेके अधिकारी नहीं हैं और न मेरे प्रिय हैं।

इसके विपरीत देव, द्विज, मनुष्य, पितरोंकी पूजा करनेवाले, मुण्डित सिरवाले, अव्यङ्ग धारण करनेवाले, शङ्ख-ध्वनि करनेवाले, क्रोधरहित, तीनों कालमें स्नान एवं पूजन करनेवाले भोजक मुझे अत्यन्त प्रिय हैं एवं मेरे पूजनके अधिकारी हैं। जो रविवारके दिन षष्ठी तिथि पड़नेपर नक्तव्रत तथा सप्तमी एवं संक्रान्तिमें उपवास करते हैं एवं मुझमें विशेष भक्ति रखते हुए मेरे भक्त ब्राह्मणोंकी पूजा करते हैं तथा देव, ऋषि, पितर, अतिथि और भूत-यज्ञ—इन पाँचोंका अनुष्ठान करते हैं, एकभुक्त होकर सूर्यपूजा करते हैं तथा सांवत्सरिक, पार्वण, एकोद्दिष्ट आदि श्राद्ध सम्पन्न करते हैं और उन तिथियोंमें दान देते हैं, वे भोजक मुझे अत्यन्त प्रिय हैं तथा जो भोजक माघ मासकी सप्तमीको करवीर-पुष्प, रक्त चन्दन, मोदकका नैवेद्य, गुग्गुल, धूप, दूध, शङ्खादि वाद्य-ध्वनि, पताका तथा छत्रादिसे मेरी पूजा करते हैं, घृतकी आहुति देकर हवन

करते हैं तथा पुराणवाचक ब्राह्मणोंकी पूजा करते हैं, वे मुझे प्रिय हैं। इतना कहकर भगवान् सूर्यदेव सुमेरु गिरिकी ओर बढ़ गये।

सुमन्तु मुनि बोले—राजन्! अधिक कहनेसे क्या लाभ, क्योंकि जैसे वेदसे श्रेष्ठ अन्य कोई शास्त्र नहीं, गङ्गाके समान कोई नदी नहीं, अश्वमेधके समान कोई यज्ञ नहीं, पुत्र-प्राप्तिके समान कोई सुख नहीं, माताके समान कोई आश्रय नहीं और भगवान् सूर्यके समान कोई देवता नहीं, वैसे ही भोजकोंके समान भगवान् सूर्यके अन्य कोई प्रिय नहीं हैं।

(अध्याय १४६-१४७)

भगवान् सूर्यके कालात्मक चक्रका वर्णन

सुमन्तु मुनि बोले—राजन्! एक बार महातेजस्वी साम्बने अपने पिता भगवान् श्रीकृष्णके हाथमें ज्वाला-मालाओंसे प्रदीप्त सुदर्शनचक्रको देखकर पूछा—'देव! आपके हाथमें जो यह सूर्यके समान चक्र दिखलायी दे रहा है, यह आपको कैसे प्राप्त हुआ तथा भगवान् सूर्यके चक्रको कमलकी उपमा कैसे दी गयी है? इसे आप बतायें।'

भगवान् श्रीकृष्ण बोले—महाबाहो! तुमने अच्छी बात पूछी है, इसे मैं संक्षेपमें बतला रहा हूँ। मैंने अत्यन्त श्रद्धापूर्वक दिव्य हजार वर्षोंतक भगवान् सूर्यकी आराधना कर इस चक्रको प्राप्त किया है। भगवान् भास्कर आकाशमें विचरण करते रहते हैं, जिनके रथ-चक्रके नाभिमण्डलमें चन्द्र आदि ग्रह अवस्थित हैं। अरोंमें द्वादश आदित्य बतलाये गये हैं, पृथ्वी आदि तत्त्व मार्गमें पड़नेवाले तत्त्व हैं, इन तत्त्वोंसे यह कालात्मक चक्र व्याप्त है। भगवान् सूर्यने अपने इस चक्रके समान ही दूसरा चक्र मुझे प्रदान किया है।

इस कमलरूप चक्रके षड्दल ही छः ऋतुएँ हैं। कमलके मध्यमें जो पुरुष अधिष्ठित हैं, वे ही भगवान् सूर्य हैं। जो भूत, भविष्य तथा वर्तमान तीन काल कहे गये हैं, वे चक्रकी तीन नाभियाँ हैं। बारह महीने अरे तथा पक्ष परिधियाँ हैं, नेमियाँ दक्षिणायन तथा उत्तरायण दो अयन हैं, नक्षत्र, ग्रह तथा योग आदि भी इसी चक्रमें अवस्थित हैं। स्थूल और सूक्ष्मके भेदसे यह चक्र सर्वत्र व्याप्त है।

दुष्टोंका दमन करनेके लिये मैंने इस चक्रको आराधनाके द्वारा भगवान् सूर्यसे प्राप्त किया है। इसलिये ग्रहों और तत्त्वोंसे समन्वित इस चक्रकी मैं निरन्तर पूजा करता रहता हूँ। जो चक्रमें स्थित भगवान् सूर्यकी भक्तिपूर्वक पूजा करता है, वह तेजमें भगवान् सूर्यके समान हो जाता है। सप्तमीको जो भगवान् सूर्यका चक्र अङ्कित कर उनकी रक्तचन्दन, करवीर-पुष्प, कुंकुम, रक्त कमल, धूप, दीप, नैवेद्य चामर, छत्र एवं फल आदिसे पूजा करता है तथा विविध नैवेद्योंका भोग लगाता है, पुण्य कथाओंका श्रवण करता है, वह अपनी सम्पूर्ण कामनाओंको प्राप्त कर लेता है। इसी प्रकार जो संक्रान्ति तथा ग्रहण आदिमें चक्रकी पूजा करता है, उसके ऊपर सभी ग्रह प्रसन्न हो जाते हैं, वह सम्पूर्ण रोगों और दुःखोंसे रहित हो जाता है तथा समस्त ऐश्वर्योंसे युक्त होकर चिरजीवी होता है। (अध्याय १४८)

सूर्यचक्रका निर्माण और सूर्य-दीक्षाकी विधि

साम्बने पूछा—भगवन्! भगवान् सूर्यके चक्रका और उसमें स्थित पद्मका कितने विस्तारमें किस प्रकार निर्माण करना चाहिये तथा नेमि, अर और नाभिका विभाग किस प्रकार करना चाहिये।

भगवान् श्रीकृष्ण बोले—साम्ब! चक्र चौंसठ अङ्गुलका और नेमि आठ अङ्गुलकी बनानी चाहिये। नाभिका विस्तार भी आठ अङ्गुलका होना चाहिये और पद्म नाभिका तीन गुना अर्थात् चौबीस अङ्गुलका होना चाहिये। कमलमें नाभि, कर्णिका और केसर भी बनाने चाहिये। नाभिसे कमलकी ऊँचाई अधिक होनी चाहिये। वहींपर द्वारके कोणमें कमल-पुष्पके मुखकी कल्पना करनी चाहिये। ब्रह्मा, विष्णु, शिव और इन्द्रके लिये चार द्वारोंकी कल्पना करनी चाहिये। द्वारोंको बनानेके पश्चात् ब्रह्मा आदि देवताओंका उनके नाम-मन्त्रोंसे भक्तिपूर्वक आवाहन कर पूजन करना चाहिये।

अर्क-मण्डलकी पूजाके लिये इस यज्ञ-क्रियाके अनुरूप दीक्षित होना चाहिये, भगवान् सूर्यने इसे मुझसे पूर्वकालमें कहा था।

साम्बने पूछा—भगवन्! सूर्यचक्र-यज्ञके लिये देवताओंने किन मन्त्रोंको कहा है? तथा यज्ञके स्वरूप और क्रमको भी आप बतानेकी कृपा करें।

भगवान् श्रीकृष्ण बोले—सौम्य! सूर्यनारायणके चक्रमें कमल बनाकर पूर्वकी भाँति हृदयमें स्थित भगवान् सूर्यका 'खखोल्क' नामसे कमलकी कर्णिका-दलोंमें नाममन्त्रपूर्वक चतुर्थ्यन्त विभक्ति और क्रिया लगाते हुए '**नमः**' लगाकर अङ्गन्यास एवं हृदयादि न्यास तथा पूजन करना चाहिये। हवन करते समय नामके अन्तमें 'स्वाहा' शब्दका प्रयोग करना चाहिये। यथा—'**ॐ खखोल्काय स्वाहा।**' '**ॐ खखोल्काय विद्महे दिवाकराय धीमहि। तन्नः सूर्यः प्रचोदयात्॥**' इन चौबीस अक्षरोंवाली सूर्यगायत्रीका जप सभी कर्मोंमें करना चाहिये, अन्यथा कर्मोंका फल प्राप्त नहीं होता। यह सूर्यगायत्री ब्रह्मगोत्रवाली सर्वतत्त्वमयी तथा परम पवित्र है एवं भगवान् सूर्यको अत्यन्त प्रिय है, इसलिये प्रयत्नपूर्वक मन्त्रके ज्ञान और कर्मकी विधिको जानना चाहिये। इससे अभीष्ट मनोरथ सिद्ध होता है।

साम्बने पूछा—भगवन्! आदित्य-मण्डलमें किसकी, किस कार्यके लिये और कैसी दीक्षा होनी चाहिये? इसे बतायें।

भगवान् श्रीकृष्ण बोले—ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और कुलीन शूद्र, पुरुष अथवा स्त्री भी सूर्य-मण्डलमें दीक्षाके अधिकारी हैं। सूर्यशास्त्रके जाननेवाले सत्यवादी, शुचि, वेदवेत्ता ब्राह्मणको गुरु बनाना चाहिये और भक्तिपूर्वक उन्हें प्रणाम करना चाहिये। षष्ठी तिथिमें पूर्वोक्त विधिके अनुसार अग्नि-स्थापन कर विधिपूर्वक सूर्य तथा अग्निकी पूजा करके हवन करना चाहिये। तदनन्तर गुरु पवित्र शिष्यको कुशों और अक्षतोंके द्वारा उसके प्रत्येक अङ्गमें सूर्यकी भावना कर उसका स्पर्श करे। शिष्य वस्त्रादिसे अलंकृत होकर पुष्प, अक्षत, गन्ध आदिसे भगवान् सूर्यकी पूजा करे तथा बलि भी दे। आदित्य, वरुण, अग्नि आदिका अपने हृदयमें ध्यान करे। घी, गुड़, दधि, दूध, चावल आदि रखकर तीन बार जलसे अग्निको सिंचितकर अग्निमें पुनः हवन करे। उसके बाद गुरु शिष्टाचारस्वरूप शिष्यको दातून दे। वह दातून दूधवाले वृक्षका हो और उसकी लम्बाई बारह अङ्गुल होनी चाहिये। दातून करनेके पश्चात् उसे पूर्व-दिशामें फेंक देना चाहिये, उस दिशामें देखे नहीं। पूर्व, पश्चिम और ईशान कोणकी ओर मुख

करके दातून करना शुभ होता है और अन्य दिशाओंमें दातून करना अशुभ माना गया है।

निन्दित दिशामें दन्तधावनसे जो दोष लगता है, उसकी शान्तिके लिये पूजन-अर्चन करना चाहिये। पुनः गुरु शिष्यके अङ्गोंका स्पर्श करे। सूर्यगायत्रीका जपपूर्वक उसके आँखोंका स्पर्श करे। इन्द्रियसंयमके लिये शिष्यसे संकल्प कराये। तदनन्तर आशीर्वाद देकर उसे शयन करनेकी आज्ञा दे। दूसरे दिन आचमनकर सूर्यको प्रातःकाल नमस्कारकर अग्नि-स्थापन करे और हवन करे। स्वप्नमें कोई शुभ संवाद सुने अथवा दिनमें यदि कोई अशुभ लक्षण दिखायी पड़े तो सूर्यनारायणको एक सौ आहुति दे। स्वप्नमें यदि देवमन्दिर, अग्नि, नदी, सुन्दर उद्यान, उपवन, पत्र, पुष्प, फल, कमल, चाँदी आदि और वेदवेत्ता ब्राह्मण, शौर्यसम्पन्न राजा, धनाढ्य क्षत्रिय, सेवामें संलग्न कुलीन शूद्र, तत्त्वको जाननेवाला, सुन्दर भाषण देनेवाला अथवा उत्तम वाहनपर सवार, वस्त्र, रत्न आदिकी प्राप्ति, वाहन, गाय, धान्य आदि उपकरण अथवा समृद्धिकी प्राप्ति आदि स्वप्नमें दिखायी दे तो उस स्वप्नको शुभ मानना चाहिये। शुभ कर्म दिखायी पड़े तो सब कार्य शुभ ही होते हैं। अनिष्टकारक स्वप्न दिखायी पड़नेपर सप्तमीको सूर्यचक्र लिखकर सूर्यदेवकी पूजा करनी चाहिये। ब्राह्मणों तथा गुरुको संतुष्ट करना चाहिये। आदित्यमण्डल पवित्र और सभीको मुक्ति प्रदान करनेवाला है। इसलिये अपने मनमें ही आदित्यमण्डलका ध्यान कर एक सौ आहुति देनी चाहिये। इस क्रमसे दीक्षा-विधि और मन्त्रका अनुसरण करते हुए आदित्यमण्डलपर पुष्पाञ्जलि प्रदान करे। इससे व्यक्तिके कुलका उद्धार हो जाता है। सूर्यप्रोक्त पुराणादिका श्रवण करना चाहिये। पूजनके बाद विसर्जन करे। सूर्यका दर्शन करनेके पश्चात् ही भोजन करना चाहिये। प्रतिमाकी छायाका और न ही ग्रह-नक्षत्र-योग और तिथिका लङ्घन करना चाहिये। सूर्य अयन, ऋतु, पक्ष, दिन, काल, संवत्सर आदि सभीके अधिपति हैं और वे सभीके पूज्य तथा नमस्कार करने योग्य हैं। सूर्यकी स्तुति, वन्दना और पूजा सदा करनी चाहिये। मन, वाणी और कर्मसे देवताओंकी निन्दाका परित्याग करना चाहिये। हाथ-पाँव धोकर, सभी प्रकारके शोकको त्यागकर शुद्ध अन्तःकरणसे सूर्यको नमस्कार करना चाहिये। इस प्रकार संक्षेपसे मैंने सूर्य-दीक्षाकी विधिको कहा है, जो सुखभोग और मुक्तिको प्रदान करनेवाली है। (अध्याय १४९)

भगवान् आदित्यकी सप्तावरण-पूजन-विधि

भगवान् श्रीकृष्ण बोले—वत्स! अब मैं दिवाकर भगवान् सूर्यनारायणकी पूजा-विधि बतलाता हूँ। एक वेदीपर अष्टदल-कमलयुक्त मण्डल बनाकर उसमें कालचक्रकी कल्पना करनी चाहिये। उसे बारह अरोंसे युक्त होना चाहिये। ये ही सर्वात्मा, सभी देवताओंमें श्रेष्ठ, उज्ज्वल किरणोंसे युक्त खखोल्क नामक भगवान् सूर्यदेव हैं। इसमें हजार किरणोंसे युक्त चतुर्बाहु भगवान् सूर्यकी पूजा करनी चाहिये। इनके पश्चिममें अरुण, दक्षिणमें निक्षुभा देवी, दक्षिणमें ही रेवन्त तथा उत्तरमें पिंगलकी पूजा करनी चाहिये और वहीं संज्ञाकी भी पूजा करनी चाहिये। अग्निकोणमें लेखककी, नैर्ऋत्यमें अश्विनीकुमारोंकी और वायव्यकोणमें वैवस्वत मनुकी तथा ईशानकोणमें लोकपावनी देवी यमुनाकी पूजा करनी चाहिये। द्वितीय आवरणमें पूर्वमें आकाशकी, दक्षिणमें देवीकी, पश्चिममें गरुडकी और उत्तरमें नागराज ऐरावतकी पूजा शुभ होती है। अग्निकोणमें हेलि, नैर्ऋत्यकोणमें प्रहेलि, वायव्यमें

उर्वशी और ईशानकोणमें विनतादेवीकी पूजा करनी चाहिये। तृतीयावरणमें पूर्वमें शुक्र, पश्चिममें शनि, उत्तरमें बृहस्पति, ईशानमें बुध और मण्डलके अग्निकोणमें चन्द्रमाकी पूजा करनी चाहिये। नैर्ऋत्यकोणमें राहु तथा वायव्यकोणमें केतुकी पूजा करनी चाहिये। चौथे आवरणमें लेखक, शाण्डिलीपुत्र, यम, विरूपाक्ष, वरुण, वायुपुत्र, ईशान तथा कुबेर आदिकी उन-उनकी दिशाओंमें पूजा करनी चाहिये। पाँचवें आवरणमें पूर्वादि क्रमसे महाश्वेता, श्री, ऋद्धि, विभूति, धृति, उन्नति, पृथ्वी तथा महाकीर्ति आदि देवियोंकी पूजा करनी चाहिये तथा इन्द्र, विष्णु, अर्यमा, भग, पर्जन्य, विवस्वान्, अर्क, त्वष्टा आदि द्वादश आदित्योंकी पूजा छठे आवरणमें करनी चाहिये। सिर, नेत्र, अस्त्र-शस्त्रसे युक्त रथसहित सूर्यकी सातवें आवरणमें पूजा करनी चाहिये। यक्ष, गन्धर्व, मासाधिपति तथा संवत्सर आदिकी भी पूजा करनी चाहिये। इसके बाद भगवान् भास्करका पुष्प, गन्ध आदिसे विधिपूर्वक पूजन कर—'**ॐ खखोल्काय नमः**' इस मूल मन्त्रसे अपने अङ्गोंका स्पर्श अर्थात् हृदयादिन्यास करते हुए पूजन करना चाहिये। जो व्यक्ति भक्तिपूर्वक इस विधिसे सूर्यकी नित्य अथवा दोनों पक्षोंकी सप्तमीके दिन पूजन करता है, वह परमपदको प्राप्त कर लेता है। (अध्याय १५०)

सौरधर्मका वर्णन

राजा शतानीकने पूछा—मुने! भगवान् सूर्यका माहात्म्य कीर्तिवर्धक और सभी पापोंका नाशक है। मैंने भगवान् सूर्यनारायणके समान लोकमें किसी अन्य देवताको नहीं देखा। जो भरण-पोषण और संहार भी करनेवाले हैं वे भगवान् सूर्य किस प्रकार प्रसन्न होते हैं, उस धर्मको आप अच्छी तरह जानते हैं। मैंने वैष्णव, शैव, पौराणिक आदि धर्मोंका श्रवण किया है। अब मैं सौरधर्मको जानना चाहता हूँ। इसे आप मुझे बतायें।

सुमन्तु मुनि बोले—राजन्! अब आप सौरधर्मके विषयमें सुनें।

यह सौरधर्म सभी धर्मोंमें श्रेष्ठ और उत्तम है। किसी समय स्वयं भगवान् सूर्यने अपने सारथि अरुणसे इसे कहा था। सौरधर्म अन्धकाररूपी दोषको दूरकर प्राणियोंको प्रकाशित करता है और यह संसारके लिये महान् कल्याणकारी है। जो व्यक्ति शान्तचित्त होकर सूर्यकी भक्तिपूर्वक पूजा करता है, वह सुख और धन-धान्यसे परिपूर्ण हो जाता है। प्रातः, मध्याह्न और सायं—त्रिकाल अथवा एक ही समय सूर्यकी उपासना अवश्य करनी चाहिये। जो व्यक्ति सूर्यनारायणका भक्तिपूर्वक अर्चन, पूजन और स्मरण करता है, वह सात जन्मोंमें किये गये सभी प्रकारके पापोंसे मुक्त हो जाता है। जो भगवान् सूर्यकी सदा स्तुति, प्रार्थना और आराधना करते हैं, वे प्राकृत मनुष्य न होकर देवस्वरूप ही हैं। षोडशाङ्ग-पूजन-विधिको स्वयं सूर्यनारायणने कहा है, वह इस प्रकार है—

प्रातः स्नान कर शुद्ध वस्त्र धारण करना चाहिये। जप, हवन, पूजन, अर्चनादि कर सूर्यको प्रणाम करके भक्तिपूर्वक ब्राह्मण, गाय, पीपल आदिकी पूजा करनी चाहिये। भक्तिपूर्वक इतिहास-पुराणका श्रवण और ब्राह्मणोंको वेदाभ्यास करना चाहिये। सबसे प्रेम करना चाहिये। स्वयं पूजनकर लोगोंको पुराणादि ग्रन्थोंकी व्याख्या सुनानी चाहिये। मेरा नित्य-प्रति स्मरण करना चाहिये। इस प्रकारके उपचारोंसे जो अर्चन-पूजन-विधि बतायी गयी है, वह सभी प्रकारके लोगोंके लिये उत्तम है। जो कोई इस प्रकारसे भक्तिपूर्वक मेरा पूजन करता है, वही

मुनि, श्रीमान्, पण्डित और अच्छे कुलमें उत्पन्न है। जो कोई पत्र, पुष्प, फल, जल आदि जो भी उपलब्ध हो उससे मेरी पूजा करता है उसके लिये न मैं अदृश्य हूँ और न वह मेरे लिये अदृश्य है। मुझे जो व्यक्ति जिस भावनासे देखता है, मैं भी उसे उसी रूपमें दिखायी पड़ता हूँ। जहाँ मैं स्थित हूँ, वहीं मेरा भक्त भी स्थित होता है। जो मुझ सर्वव्यापीको सर्वत्र और सम्पूर्ण प्राणियोंमें स्थित देखता है, उसके लिये मैं उसके हृदयमें स्थित हूँ और वह मेरे हृदयमें स्थित है। सूर्यकी पूजा करनेवाला व्यक्ति बड़े-बड़े राजाओंपर विजय प्राप्त कर लेता है। जो व्यक्ति मनसे मेरा निरन्तर ध्यान करता रहता है, उसकी चिन्ता मुझे बराबर बनी रहती है कि कहीं उसे कोई दुःख न होने पाये। मेरा भक्त मुझको अत्यन्त प्रिय है। मुझमें अनन्य निष्ठा ही सब धर्मोंका सार है। (अध्याय १५१)

ब्रह्मादि देवताओंद्वारा भगवान् सूर्यकी स्तुति एवं वर-प्राप्ति

सुमन्तु मुनि बोले—राजन्! भगवान् सूर्यकी भक्ति, पूजा और उनके लिये दान करना तथा हवन करना सबके वशकी बात नहीं है तथा उनकी भक्ति और ज्ञान एवं उसका अभ्यास करना भी अत्यन्त दुर्लभ है। फिर भी उनके पूजन-स्मरणसे इसे प्राप्त किया जा सकता है। सूर्य-मन्दिरमें सूर्यकी प्रदक्षिणा करनेसे वे सदा प्रसन्न रहते हैं। सूर्यचक्र बनाकर पूजन एवं सूर्यनारायणका स्तोत्र-पाठ करनेवाला व्यक्ति इच्छित फल एवं पुण्य तथा विषयोंका परित्याग कर भगवान् सूर्यमें अपने मनको लगा देनेवाला मनुष्य निर्भीक होकर उनकी निश्चल भक्ति प्राप्त कर लेता है।

राजा शतानीकने पूछा—द्विजश्रेष्ठ! मुझे भगवान् सूर्यकी पूजन-विधि सुननेकी बड़ी ही अभिलाषा है। मैं आपके ही मुखसे सुनना चाहता हूँ। कृपाकर कहिये कि सूर्यकी प्रतिमा स्थापित करनेसे कौन-सा पुण्य और फल प्राप्त होता है तथा सम्मार्जन करने और गन्ध आदिके लेपनसे किस पुण्यकी प्राप्ति होती है। आरती, नृत्य, मङ्गल-गीत आदि कृत्योंके करनेसे कौन-सा पुण्य प्राप्त होता है। अर्घ्यदान, जल एवं पञ्चामृत आदिसे स्नान, कुश, रक्त पुष्प, सुवर्ण, रत्न, गन्ध, चन्दन, कपूर आदिके द्वारा पूजन, गन्धादि-विलेपन, पुराण-श्रवण एवं वाचन, अव्यङ्ग-दान और व्योमरूपमें भगवान् सूर्य तथा अरुणकी पूजा करनेसे जो फल प्राप्त होता है, वह बतलानेकी कृपा करें।

सुमन्तु मुनि बोले—राजन्! प्रथम आप भगवान् सूर्यके महनीय तेजके विषयमें सुनें। कल्पके प्रारम्भमें ब्रह्मादि देवगण अहंकारके वशीभूत हो गये। तमरूपी मोहने उन्हें अपने वशमें कर लिया। उसी समय उनके अहंकारको दूर करनेके लिये एक महनीय तेज प्रकट हुआ, जिससे यह सम्पूर्ण विश्व व्याप्त हो गया। अन्धकार-नाशक तथा सौ योजन विस्तारयुक्त वह तेजःपुञ्ज आकाशमें भ्रमण कर रहा था। उसका प्रकाश पृथ्वीपर कमलकी कर्णिकाकी भाँति दिखलायी दे रहा था। यह देख ब्रह्मादि देवगण परस्पर इस प्रकार विचार करने लगे—हमलोगोंका तथा संसारका कल्याण करनेके लिये ही यह तेज प्रादुर्भूत हुआ है। यह तेज कहाँसे प्रादुर्भूत हुआ, इस विषयमें वे कुछ न जान सके और इस तेजने सभी देवगणोंको आश्चर्यचकित कर दिया। तेजाधिपति उन्हें दिखायी भी नहीं पड़े। ब्रह्मादि देवताओंने उनसे पूछा—देव! आप कौन हैं, कहाँ हैं, यह तेजकी कैसी शक्ति है? हम सभी लोग आपका दर्शन करना चाहते हैं। उनकी प्रार्थनासे प्रसन्न हो भगवान् सूर्यनारायण अपने विराट्-रूपमें प्रकट हो गये।

उस महनीय तेज:स्वरूप भगवान् भास्करकी देवगण पृथक्-पृथक् वन्दना करने लगे।

ब्रह्माजीकी स्तुतिका भाव इस प्रकार है[१]— हे देवदेवेश! आप सहस्रों किरणोंसे प्रकाशमान हैं। कोणवल्लभ! आप संसारके लिये दीपक हैं, आपको नमस्कार है। अन्तरिक्षमें स्थित होकर सम्पूर्ण विश्वको प्रकाशित करनेवाले भगवान् भास्कर, विष्णु, कालचक्र, अमित तेजस्वी, सोम, काल, इन्द्र, वसु, अग्नि, खग, लोकनाथ तथा एकचक्रवाले रथसे युक्त—ऐसे नामोंवाले आपको नमस्कार है। आप अमित तेजस्वी एवं संसारके कल्याण तथा मङ्गलकारक हैं, आपका सुन्दर रूप अन्धकारको नष्ट करनेवाला है, आप तेजकी निधि हैं, आपको नमस्कार है। आप धर्मादि चतुर्वर्गस्वरूप हैं तथा अमित तेजस्वी हैं, क्रोध-लोभसे रहित हैं, संसारकी स्थितिमें कारण हैं, आप शुभ एवं मङ्गलस्वरूप हैं तथा शुभ एवं मङ्गलके प्रदाता हैं, आप परम शान्तस्वरूप हैं तथा ब्राह्मण एवं ब्रह्मरूप हैं, ऐसे हे परब्रह्म परमात्मा जगत्पते! आप मेरे ऊपर प्रसन्न होइये, आपको नमस्कार है।

ब्रह्माजीके बाद शिवजीने महातेजस्वी सूर्यनारायणको प्रणामकर उनकी स्तुति की—

विश्वकी स्थितिके कारण-स्वरूप भगवान् सूर्यदेव! आपकी जय हो। अजेय, हंस, दिवाकर, महाबाहु, भूधर, गोचर, भाव, खग, लोकप्रदीप, जगत्पति, भानु, काल, अनन्त, संवत्सर तथा शुभानन! आपकी जय हो। कश्यपके आनन्दवर्धन, अदितिपुत्र, सप्ताश्ववाहन, सप्तेश, अन्धकारको दूर करनेवाले, ग्रहोंके स्वामी, कान्तीश, कालेश, शंकर, धर्मादि चतुर्वर्गके स्वामी! आपकी जय हो। वेदाङ्गरूप, ग्रहरूप, सत्यरूप, सुरूप, क्रोधादिके विनाशक, कल्माषपक्षिरूप तथा यतिरूप! आपकी जय हो। प्रभो! आप विश्वरूप, विश्वकर्मा, ओंकार, वषट्कार, स्वाहाकार तथा स्वधारूप हैं और आप ही अश्वमेधरूप, अग्नि एवं अर्यमारूप हैं, संसाररूपी सागरसे मोक्ष दिलानेवाले हे जगत्पते! मैं संसार-सागरमें डूब रहा हूँ, मुझे अपने हाथका अवलम्बन दीजिये, आपकी जय हो[२]।

भगवान् विष्णुने सूर्यनारायणको श्रद्धा और

१-नमस्ते देवदेवेश सहस्रकिरणोज्ज्वल। लोकदीप नमस्तेऽस्तु नमस्ते कोणवल्लभ॥
भास्कराय नमो नित्यं खखोल्काय नमो नमः। विष्णवे कालचक्राय सोमायामिततेजसे॥
नमस्ते पञ्चकालाय इन्द्राय वसुरेतसे। खगाय लोकनाथाय एकचक्ररथाय च॥
जगद्धिताय देवाय शिवायामिततेजसे। तमोघ्नाय सुरूपाय तेजसां निधये नमः॥
अर्थाय कामरूपाय धर्मायामिततेजसे। मोक्षाय मोक्षरूपाय सूर्याय च नमो नमः॥
क्रोधलोभविहीनाय लोकानां स्थितिहेतवे। शुभाय शुभरूपाय शुभदाय शुभात्मने॥
शान्ताय शान्तरूपाय शान्तयेऽस्मासु वै नमः। नमस्ते ब्रह्मरूपाय ब्राह्मणाय नमो नमः॥
ब्रह्मदेवाय ब्रह्मरूपाय ब्रह्मणे परमात्मने। ब्रह्मणे च प्रसादं वै कुरु देव जगत्पते॥ (ब्राह्मपर्व १५३।५०—५७)

२-जय भाव जयाजेय जय हंस दिवाकर। जय शम्भो महाबाहो खग गोचर भूधर॥
जय लोकप्रदीपाय जय भानो जगत्पते। जय कालजयानन्त संवत्सर शुभानन॥
जय देवादितेः पुत्र कश्यपानन्दवर्धन। तमोघ्न जय सप्तेश जय सप्ताश्ववाहन॥
ग्रहेश जय कान्तीश जय कालेश शङ्कर। अर्थकामेश धर्मेश जय मोक्षेश शर्मद॥
जय वेदाङ्गरूपाय ग्रहरूपाय वै नमः। सत्याय सत्यरूपाय सुरूपाय शुभाय च॥
क्रोधलोभविनाशाय कामनाशाय वै जय। कल्माषपक्षिरूपाय यतिरूपाय शम्भवे॥
विश्वाय विश्वरूपाय विश्वकर्माय वै जय। जयोंकार वषट्कार स्वाहाकार स्वधामय॥
जयाश्वमेधरूपाय चाग्निरूपार्यमाय च। संसारार्णवपीताय मोक्षद्वारप्रदाय च॥
संसारार्णवमग्नस्य मम देव जगत्पते। हस्तावलम्बनो देव भव त्वं गोपतेऽद्भुत॥ (ब्राह्मपर्व १५३।६०—६८)

भक्तिपूर्वक प्रणाम कर उनकी स्तुति की, भाव इस प्रकार है—

भूतभावन देवदेवेश! आप दिवाकर, रवि, भानु, मार्तण्ड, भास्कर, भग, इन्द्र, विष्णु, हरि, हंस, अर्क—इन रूपोंमें प्रसिद्ध हैं, आपको नमस्कार है। लोकगुरो! आप विभु, त्रिनेत्रधारी, त्र्यक्षरात्मक, त्र्यङ्गात्मक, त्रिमूर्ति, त्रिगति हैं, आप छः मुख, चौबीस पाद तथा बारह हाथवाले हैं, आप समस्त लोकों तथा प्राणियोंके अधिपति हैं, देवताओं तथा वर्णोंके भी आप ही अधिपति हैं, आपको नमस्कार है। जगत्स्वामिन्! आप ही ब्रह्मा, रुद्र, प्रजापति, सोम, आदित्य, ओंकार, बृहस्पति, बुध, शुक्र, अग्नि, भग, वरुण, कश्यपात्मज हैं। आपसे ही यह सम्पूर्ण चराचर जगत् व्याप्त है, देवता, असुर तथा मानव आदि सभी आपसे ही उत्पन्न हैं, अनघ! कल्पके आरम्भमें संसारकी उत्पत्ति, पालन एवं संहारके लिये ब्रह्मा, विष्णु एवं शिव उत्पन्न हुए हैं, आपको नमस्कार है। प्रभो! आप ही वेदरूप, दिवसस्वरूप, यज्ञ एवं ज्ञानरूप हैं। किरणोज्ज्वल! भूतेश! गोपते! संसारमें निमग्न हुए हमपर आप प्रसन्न होइये, आप वेदान्त एवं यज्ञ-कलात्मक रूप हैं, आपकी जय हो, आपको नित्य नमस्कार है*।

ब्रह्मादि देवताओंकी स्तुतिसे भगवान् सूर्य बहुत ही प्रसन्न हुए और उन्होंने ब्रह्मा, विष्णु तथा महादेवको अपनी अखण्ड भक्ति तथा अपना अनुग्रह प्राप्त करनेका वर प्रदान करते हुए कहा—हे विष्णो! आप देव, दानव, यक्ष, राक्षस, गन्धर्व आदि सभीपर विजय प्राप्त कर अजेय रहेंगे। सम्पूर्ण संसारका पालन करते हुए आपकी मेरे ऊपर अचल भक्ति बनी रहेगी। ब्रह्मा भी इस जगत्की सृष्टि करनेमें समर्थ होंगे और मेरे प्रसादसे शंकर भी इस संसारका संहार कर सकेंगे, इसमें कोई संदेह नहीं है। मेरी पूजाके फलस्वरूप आपलोग ज्ञानियोंमें उत्कृष्ट स्थान प्राप्त कर लेंगे।

भगवान् सूर्यके इन वचनोंको सुनकर महादेवजी बोले—भगवन्! हमलोग आपकी आराधना किस प्रकार करें, उसे आप बतायें। हमें आपकी परम पूजनीय मूर्ति तो दिखायी नहीं दे रही है, केवल प्रकाशकी आकृति और मात्र तेज ही दिखायी पड़ रहा है, यह तेज आकारविहीन होनेके कारण हृदयमें स्थान नहीं पा रहा है। जबतक मन किसी विषय-वस्तुमें नहीं लगता, तबतक किसी भी व्यक्तिकी भक्ति या इच्छा उस विषय-वस्तुको प्राप्त करनेकी नहीं होती। जबतक भक्ति उत्पन्न नहीं होगी, तबतक पूजन आदि करनेमें कोई भी समर्थ नहीं होगा। इसलिये आप साकाररूपमें प्रकट हों, जिससे कि हमलोग उस साकाररूपका पूजन-अर्चन कर सिद्धिको प्राप्त करनेमें समर्थ हो जायँ।

---

* नमामि देवदेवेशं भूतभावनमव्ययम्। दिवाकरं रविं भानुं मार्तण्डं भास्करं भगम्॥
इन्द्रं विष्णुं हरिं हंसमर्कं लोकगुरुं विभुम्। त्रिनेत्रं त्र्यक्षरं त्र्यङ्गं त्रिमूर्त्रिं त्रिगतिं शुभम्॥
षण्मुखाय नमो नित्यं त्रिनेत्राय नमो नमः। चतुर्विंशतिपादाय नमो द्वादशपाणये॥
नमस्ते भूतपतये लोकानां पतये नमः। देवानां पतये नित्यं वर्णानां पतये नमः॥
त्वं ब्रह्मा त्वं जगन्नाथो रुद्रस्त्वं च प्रजापतिः। त्वं सोमस्त्वं तथादित्यस्त्वमोंकारक एव हि॥
बृहस्पतिर्बुधस्त्वं हि त्वं शुक्रस्त्वं विभावसुः। यमस्त्वं वरुणस्त्वं हि नमस्ते कश्यपात्मज॥
त्वया ततमिदं सर्वं जगत्स्थावरजङ्गमम्। त्वत्त एव समुत्पन्नं सदेवासुरमानुषम्॥
ब्रह्मा चाहं च रुद्रश्च समुत्पन्नो जगत्पते। कल्पादौ तु पुरा देव स्थितये जगतोऽनघ॥
नमस्ते वेदरूपाय अहोरूपाय वै नमः। नमस्ते ज्ञानरूपाय यज्ञाय च नमो नमः॥
प्रसीदास्मासु देवेश भूतेश किरणोज्ज्वल।
संसारार्णवमग्नानां प्रसादं कुरु गोपते। वेदान्ताय नमो नित्यं नमो यज्ञकलाय च॥

(ब्राह्मपर्व १५३। ७१—८०)

भगवान् सूर्यने कहा—महादेवजी! आपने बड़ी अच्छी बात पूछी है—आप दत्तचित्त होकर सुनें। इस जगत्में मेरी चार प्रकारकी मूर्तियाँ हैं जो सम्पूर्ण संसारको व्यवस्थित करती हुई सृजन, पालन, पोषण तथा संहार आदिमें प्रत्येक समय संलग्न रहती हैं। मेरी प्रथम मूर्ति राजसी मूर्ति है, जो ब्राह्मी शक्तिके नामसे प्रसिद्ध है, वह कल्पके आदिमें संसारकी सृष्टि करती है। द्वितीय सात्त्विकी मूर्ति विष्णुस्वरूपिणी है, जो संसारका पालन और दुष्टोंका विनाश करती है। तृतीय मूर्ति तामसी है, जो भगवान् शंकरके नामसे विख्यात है, वह हाथमें त्रिशूल धारण किये कल्पके अन्तमें विश्व-सृष्टिका संहार करती है। मेरी चतुर्थ मूर्ति सत्त्वादि गुणोंसे अतीत तथा उत्तम है, वह स्थित रहते हुए भी दिखायी नहीं पड़ती। उस अदृश्य शक्तिके द्वारा यह समस्त संसार विस्तारको प्राप्त हुआ है। ओंकार ही मेरा स्वरूप है। यह सकल तथा निष्कल और साकार एवं निराकार दोनों रूपोंमें है। यह सम्पूर्ण संसारमें व्याप्त रहते हुए भी सांसारिक कर्म-फलोंसे लिप्त नहीं रहती, जलमें पद्मपत्रकी भाँति अलिप्त रहती है। यह प्रकाश आपलोगोंके अज्ञानको दूर करने तथा संसारमें प्रकाश करनेके लिये उत्पन्न हुआ है। आपलोग मेरे इस अस्पृष्ट (निर्लिप्त) रूपकी आराधना करें।

कल्पके अन्तमें मेरे आकाशरूपमें सभी देवताओंका लय हो जाता है। उस समय केवल आकाशरूप ही रहता है[1]। पुनः मुझसे ही ब्रह्मादि देवगण तथा चराचर उत्पन्न होते हैं। हे त्रिलोचन! मैं सम्पूर्ण जगत्में व्याप्त हूँ। इसलिये मेरे व्योमरूपकी आराधना आपसहित ब्रह्मा, विष्णु भी करें। त्रिलोचन! आप गन्धमादनपर दिव्य सहस्र वर्षोंतक तपस्या करके परम शुभ षडङ्ग-सिद्धिको प्राप्त करें। जनार्दन! आप मेरे व्योमरूपकी श्रद्धा और भक्तिपूर्वक आराधना कलापग्राममें निवास कर करें। जगत्पति ब्रह्मा भी अन्तरिक्षमें जाकर लोकपावन पुष्करतीर्थमें मेरी आराधना करें। इस प्रकार आराधना करनेके पश्चात् कदम्बके समान गोलाकार, रश्मिमालासे युक्त मेरी मूर्तिका आपलोग दर्शन करेंगे।

इस प्रकार सूर्यनारायणके वचनको सुनकर भगवान् विष्णुने उन्हें प्रणाम कर कहा—देव! हम सभी लोग उत्तम सिद्धि प्राप्त करनेके लिये आपके परम तेजस्वी व्योमरूपका पूजन-अर्चन कर किस विधिसे आराधना करें। परमपूजित! कृपया आप उस विधिको बतलाकर मुझसहित ब्रह्मा और शिवपर दया कीजिये, जिससे हमलोगोंको परम सिद्धि प्राप्त होनेमें कोई विघ्न-बाधा न पहुँच सके।

भगवान् सूर्य बोले—देवताओंमें श्रेष्ठ वासुदेव! आप शान्तचित्त होकर सुनिये। आपका प्रश्न उचित ही है। मेरे अनुपम व्योमरूपकी आपलोग आराधना करें। मेरी पूजा मध्याह्नकालमें भक्तिपूर्वक सदैव करनेसे इच्छित भक्तिकी प्राप्ति हो जाती है। भगवान् सूर्यके इस वाक्यको सुनकर ब्रह्मादि देवताओंने प्रणामकर कहा—'देव! आप धन्य हैं, हमलोगोंको आपने अपने तेजसे प्रकाशित किया है, हमलोग कृतकृत्य हो गये। आपके दर्शनमात्रसे ही सभी लोगोंको ज्ञान प्राप्त हुआ है तथा तम, मोह, तन्द्रा आदि सभी क्षणमात्रमें ही दूर हो गये हैं। हमलोग

१-अन्य पुराणों तथा सांख्य, वेदान्त आदि दर्शनोंके अनुसार आकाशका मनस्तत्त्वमें, मनका अहंतत्त्वमें और अहंका महत्तत्त्वमें, महत्तत्त्वका अव्यक्त-तत्त्वमें और अव्यक्तका सत्-तत्त्वमें लय होता है, जो संकल्प-विकल्पमें शून्य होता है और पुनः सृष्टिके समय सत्-तत्त्वमें कलनाके साथ अव्यक्त, महत्, मन, अहंकारके बाद आकाशकी उत्पत्ति होती है।

२-योगवासिष्ठमें सबको व्योमके ही अन्तर्गत स्थित मानकर हृद्-व्योम-उपासना (दहर-उपासना)-का निर्देश है और ब्रह्मसूत्रके 'आकाशस्तल्लिङ्गात्' इस सूत्रमें आकाश शब्दका अर्थ परमात्मा माना गया है।

आपके ही तेजके प्रभावसे उत्पत्ति, पालन और संहार करते हैं। अब आप व्योमके पूजन-विधिको बतानेकी कृपा करें।'

भगवान् आदित्यने कहा—आपलोग सत्य ही कह रहे हैं, जो मैं हूँ वही आपलोग भी हैं अर्थात् आपलोगोंके स्वरूपमें मैं ही स्थित हूँ। अहंकारी, विमूढ, असत्य, कलहसे युक्त लोगोंके कल्याणके लिये तथा आपलोगोंके अन्धकार अर्थात् तम-मोहादिकी निवृत्तिके लिये मैंने तेजोमय स्वरूप प्रकट किया, इसलिये अहंकार, मान, दर्प आदिका परित्याग कर श्रद्धा-भक्तिपूर्वक निरन्तर आपलोग मेरी आराधना करें। इससे मेरे सकल-निष्कल उत्तम स्वरूपका दर्शन प्राप्त होगा और मेरे दर्शनसे सभी सिद्धियाँ प्राप्त हो जायँगी। इतना कहकर सहस्रकिरण भगवान् सूर्य देवताओंके देखते-देखते अन्तर्धान हो गये। भगवान् भास्करके तेजस्वी रूपका दर्शन कर ब्रह्मा, विष्णु और शिव सभी आश्चर्यचकित होकर परस्पर कहने लगे—'ये तो अदिति-पुत्र सूर्यनारायण हैं। ये महातेजस्वी लोकोंको प्रकाशित करनेवाले सूर्यनारायण हैं, इन्होंने हम सभी लोगोंको महान् अन्धकाररूपी तमसे निवृत्त किया है। हम अपने-अपने स्थानपर चलकर इनकी पूजा करें, जिससे इनके प्रसादसे हमें सिद्धि प्राप्त हो सके।'

उस व्योमरूपकी श्रद्धा-भक्तिपूर्वक पूजन करनेके लिये ब्रह्माजी पुष्करक्षेत्रमें, भगवान् विष्णु शालग्राममें और वृषध्वज शंकर गन्धमादन पर्वतपर चले गये। वहाँ मान, दर्प तथा अहंकारका परित्याग कर ब्रह्माजी चार कोणसे युक्त व्योमकी, भगवान् विष्णु चक्रमें अङ्कित व्योमकी और शिव अग्निरूपी तेजसे अभिभूत व्योमवृत्तकी सदा भक्तिपूर्वक पूजा करने लगे। ब्रह्मादि देवता गन्ध, माला, नृत्य, गीत आदिसे दिव्य सहस्र वर्षोंतक सूर्यनारायणकी पूजा कर उनकी अचल भक्ति और प्रसन्नता-प्राप्तिके लिये उत्तम तपस्यामें तत्पर हो गये।

सुमन्तु मुनि बोले—महाराज! देवताओंके पूजनसे प्रसन्न हो वे एक रूपसे ब्रह्माके पास, एक रूपसे शंकरके पास तथा एक रूपसे विष्णुके पास गये एवं अपने चतुर्थ रूपसे रथारूढ हो आकाशमें स्थित रहे। भगवान् सूर्यने अपने योगबलसे पृथक्-पृथक् उन्हें दर्शन दिया। दिव्य रथपर आरूढ सूर्यदेवने अपने अद्भुत योगबलसे देखा कि चतुर्मुख ब्रह्माजी कमलमुख-व्योमकी पूजामें अत्यन्त श्रद्धा-भक्तिसे नतमस्तक हैं। यह देखकर ब्रह्माजीसे भगवान् सूर्यदेवने कहा—'सुरश्रेष्ठ! देखो, मैं वर देनेके लिये उपस्थित हूँ।' यह सुनकर ब्रह्माजी हर्षसे प्रफुल्लित हो उठे और हाथ जोड़कर उनके कमलमुखको देखकर अति विनम्रभावसे प्रणाम कर प्रार्थना करने लगे—

'देवेश! आप प्रसन्न हैं तो मेरे ऊपर कृपा कीजिये। देव! आपके अतिरिक्त मेरे लिये अन्य कोई गति नहीं है।'

भगवान् सूर्य बोले—जैसा आप कह रहे हैं, उसमें विचार करनेकी कोई बात नहीं है। आप कारणरूपसे मेरे प्रथम पुत्रके रूपमें उत्पन्न हों। अब आप वर माँगिये, मैं वर देनेके लिये ही आया हूँ।

ब्रह्माजीने कहा—भगवन्! यदि आप मेरे ऊपर प्रसन्न हैं तो मुझे उत्तम वर दें, जिससे मैं सृष्टि कर सकूँ।

भगवान् आदित्यने कहा—जगत्पति चतुर्मुख ब्रह्मन्! आपको मेरे प्रसादसे सिद्धि प्राप्त हो जायगी और आप इस जगत्के सृष्टिकर्ता होंगे।

ब्रह्माजीने कहा—जगन्नाथ! मेरा निवास किस स्थानपर होगा।

भगवान् सूर्य बोले—जिस स्थानपर मेरा महद्-व्योम-पृष्ठ शृंगसे युक्त उत्तम रूप रहेगा, वहीं

कदम्ब-रूपमें आप नित्य स्थित रहेंगे। पूर्व दिशामें इन्द्र, अग्निकोणमें शाण्डिलीसुत अग्नि, दक्षिणमें यम, नैर्ऋत्यकोणमें निर्ऋति, पश्चिममें वरुण और वायव्यकोणमें वायु तथा उत्तर दिशामें कुबेरका निवास रहेगा। ईशानकोणमें शंकर और आपका तथा मध्यमें विष्णुका निवास रहेगा।

ब्रह्माजीने कहा—देव! आज मैं कृतकृत्य हो गया, जो कुछ भी मुझे चाहिये, वह सब प्राप्त हो गया।

सुमन्तु मुनि बोले—राजन्! इस प्रकार भगवान् आदित्य ब्रह्माजीको वर प्रदानकर उनके साथ गन्धमादन पर्वतपर गये, वहाँ उन्होंने देखा—भूत-भावन शिव तीव्र तपस्यामें संलग्न हैं। वे तेजसे युक्त व्योमका पूजन कर रहे हैं। इस प्रकार शिवद्वारा पूजन-अर्चनको देखकर भगवान् भास्कर प्रसन्न हो गये।

सूर्यभगवान्ने कहा—भीम! मैं तुमसे अति प्रसन्न हूँ। वत्स! वर माँगो! मैं वर देनेके लिये उपस्थित हूँ। इसपर महादेवजीने साष्टाङ्ग प्रणाम कर स्तुति की और कहा—'देव! आप मुझपर कृपा करें। आप जगत्पति हैं। संसारका उद्धार करनेवाले हैं। मैं आपके अंशसे आपके पुत्रके रूपमें उत्पन्न हुआ हूँ, आप वही करें जो एक पिता अपने पुत्रके लिये करता है।' यह वचन सुनकर भगवान् सूर्य बोले—'शंकर! जो तुम कह रहे हो, उसमें कोई भी संदेह नहीं है। मेरे ललाटसे तुम पुत्र-रूपमें उत्पन्न हुए हो। जो तुम्हारे मनमें हो वह वर माँगो।'

महादेवजीने कहा—भगवन्! यदि आप मेरे ऊपर संतुष्ट हैं तो मुझे अपनी अचल भक्ति प्रदान करें, जिससे यक्ष, गन्धर्व, देव, दानव आदिपर मैं विजय प्राप्त कर सकूँ और युगके अन्तमें प्रजाका संहार कर सकूँ। देव! मुझे उत्तम स्थान प्रदान करें। भगवान् सूर्यने 'ऐसा ही होगा' कहकर कहा कि इसी प्रकार तुम मेरे परम व्योमरूपकी पूजा प्रतिदिन करते रहो और यही परम तेजस्वी व्योम तुम्हारा शस्त्र—त्रिशूल होगा।

सुमन्तु मुनि बोले—महाराज! तदनन्तर भगवान् सूर्य भगवान् विष्णुको वर देने शालग्राम (मुक्तिनाथ-क्षेत्र) गये। वहाँ उन्होंने देखा कि वे कृष्णाजिन धारणकर शान्तचित्त हो परम उत्कृष्ट तप कर रहे हैं और हृदयमें भगवान् सूर्यका ध्यान कर रहे हैं. भगवान् भास्करने अति प्रसन्न होकर कहा—'विष्णो! मैं आ गया हूँ, मुझे देखो।' भगवान् विष्णुने उन्हें सिर झुकाकर प्रणाम किया और कहा—'जगन्नाथ! आप मेरी रक्षा करें। मेरे ऊपर दया करें। मैं आपका द्वितीय पुत्र हूँ। पिता अपने पुत्रपर जैसी कृपादृष्टि रखता है, उसी प्रकार आप भी मेरे ऊपर दया-दृष्टि बनाये रखें।'

भगवान् सूर्य बोले—महाबाहो! मैं तुम्हारी श्रद्धा-भक्तिसे संतुष्ट हो गया हूँ। जो कुछ भी इच्छा हो, माँग लो। मैं वर प्रदान करनेके लिये ही आया हूँ।

विष्णुभगवान्ने कहा—भगवन्! मैं आज कृतकृत्य हो गया। मेरे समान कोई भी धन्य नहीं है, क्योंकि आप संतुष्ट होकर मुझे स्वयं वर देने आ गये। आप अपनी अचल भक्ति और शत्रुको पराजित करनेकी शक्ति मुझे प्रदान करें तथा जैसे मैं संसारका पालन कर सकूँ ऐसा वर प्रदान करें। मुझे इस प्रकारका स्थान दें जिससे कि मैं सभी लोकोंमें यशस्वी, बल, वीर्य, यश और सुखसे सम्पन्न हो सकूँ।

भगवान् सूर्य बोले—'तथास्तु' महाबाहो! तुम ब्रह्माके छोटे और शिवके बड़े भ्राता हो, तुम्हें सभी देवता नमस्कार करेंगे। तुम मेरे परम भक्त और परम प्रिय हो, इसलिये तुम्हारी मुझमें अचल

भक्ति रहेगी। जिस व्योमरूपका तुमने अर्चन किया है, यह व्योम ही तुम्हारे लिये चक्ररूपमें अस्त्र-शस्त्रका कार्य करेगा। यह सभी आयुधोंमें उत्तम एवं दुष्टोंका विनाशक है। समस्त लोक इसे नमस्कार करते हैं।

सुमन्तु मुनि बोले—राजन्! इस प्रकार भगवान् भास्कर भगवान् विष्णुको वर प्रदानकर अपने लोकको चले गये और ब्रह्मा, विष्णु तथा शंकरने भगवान् सूर्यनारायणकी पूजा कर सृष्टि, पालन और संहार करनेकी शक्ति प्राप्त की। यह आख्यान अति पवित्र, पुण्य और सभी प्रकारके पापोंका नाशक है। यह तीन देवोंका उपाख्यान है और तीन देवता इस लोकमें पूजित हैं। यह तीन स्तोत्रोंसे युक्त तथा धर्म, अर्थ और कामका साधन है। यह धर्म, स्वर्ग, आरोग्य, धन-धान्यको प्रदान करनेवाला है। जो व्यक्ति इस आख्यानको प्रतिदिन सुनता है अथवा जो इन तीन स्तोत्रोंका पाठ करता है, वह आग्नेय विमानपर आरूढ होकर भगवान् सूर्यके परमपदको प्राप्त कर लेता है। पुत्रहीन पुत्र, निर्धन धन, विद्यार्थी विद्या प्राप्तकर तेजमें सूर्यके समान, प्रभामें उनके किरणोंके समान हो जाता है और अनन्तकालतक सुख भोगकर ज्ञानियोंमें उत्तम स्थानको प्राप्त करता है।

(अध्याय १५२—१५६)

सौर-धर्म-निरूपणमें सूर्यावतारका कथन

शतानीकने पूछा—ब्रह्मन्! जिन तेजस्वी भगवान् सूर्यनारायणने ब्रह्माजीको वर प्रदान किया, देवताओं और पृथ्वीको उत्पन्न किया, जो ब्रह्मादि देवताओंको प्रकाशित करनेवाले तथा समस्त जगत्के पालक, महाभूतोंसहित चौदह लोकोंके स्रष्टा, पुराणोंमें तेजरूपसे स्थित एवं पुराणोंकी आत्मा हैं तथा अग्निमें स्वयं स्थित हैं, जिनके सहस्रों सिर, सहस्रों नेत्र तथा सहस्रों चरण हैं, जिनके मुखसे लोकपितामह ब्रह्मा, वक्षःस्थलसे भगवान् विष्णु और ललाटसे साक्षात् भगवान् शिव उत्पन्न हुए हैं, जो विघ्नोंके विनाशक एवं अन्धकारनाशक, लोककी शान्तिके लिये जो अग्नि, वेदि, कुशा, स्रुवा, प्रोक्षणी, व्रत आदिको उत्पन्न कर इनके द्वारा हव्य-भाग ग्रहण करते हैं, जो युगके अनुरूप कर्मोंके विभाजन तथा क्षण, काल, काष्ठ, मुहूर्त, तिथि, मास, पक्ष, संवत्सर, ऋतु, कालयोग, विविध प्रमाण और आयुके उत्पादक तथा विनाशक हैं एवं परमज्योति और परम तपस्वी हैं, जो अच्युत तथा परमात्माके नामसे जाने जाते हैं, वे ही महर्षि कश्यपके यहाँ पुत्रके रूपमें कैसे अवतरित हुए?

ब्रह्मादि जिनकी उपासना करते हैं तथा वेद-वेत्ताओंमें जो उत्तम और देवताओंमें प्रभु विष्णु हैं, जो सौम्योंमें सौम्य और अग्निमें तेजःस्वरूप हैं, मनुष्योंमें मनरूपसे तथा तपस्वियोंमें तप-रूपसे विद्यमान हैं, जो विग्रहोंमें विग्रह हैं, जो देवताओं और मनुष्योंसहित समस्त लोकोंको उत्पन्न करनेवाले हैं, वे देवोंके देव भगवान् सूर्य किसलिये अदितिके गर्भसे स्वयं उत्पन्न हुए? ब्रह्मन्! इस विषयमें मुझे महान् आश्चर्य हो रहा है, भगवान् सूर्यकी उत्पत्तिसे आश्चर्यचकित होकर ही मैंने आपसे उनके आख्यानको पूछा है। महामुने! भगवान् सूर्यके बल-वीर्य, पराक्रम, यश और उज्ज्वलित तेजका आप वर्णन करें।

सुमन्तु मुनि बोले—राजन्! आपने भगवान् भास्करकी उत्पत्तिके सम्बन्धमें बहुत ही जटिल प्रश्न पूछा है। मैं अपनी सामर्थ्यके अनुसार कह रहा हूँ। आप उसे श्रद्धा-भक्तिपूर्वक सुनें।

जो भगवान् सूर्य सहस्रों नेत्रोंवाले, सहस्रों

किरणोंसे युक्त और सहस्रों सिर तथा सहस्रों हाथवाले हैं, सहस्रों मुकुटोंसे सुशोभित तथा सहस्रों भुजाओंसे युक्त एवं अव्यय हैं, जो सभी लोकोंके कल्याण एवं सभी लोकोंको प्रकाशित करनेके लिये अनेक रूपोंमें अवतरित होते हैं, वही भगवान् सूर्य कश्यपद्वारा अदितिके गर्भसे पुत्ररूपमें उत्पन्न हुए। महाराज! कश्यप और अदितिसे जो-जो पुत्र उत्पन्न होते थे, वे उसी क्षण मर जाते थे। इस पुत्र-विनाशको देखकर पुत्र-शोकसे दुःखी माता अदिति व्याकुल हो अपने पति महर्षि कश्यपके पास गयीं। अदितिने देखा कि महर्षि कश्यप अग्निके समान तेजस्वी, दण्ड धारण किये कृष्ण मृगचर्मपर आसीन तथा वल्कल धारण किये हुए भगवान् भास्करके सदृश देदीप्यमान हो रहे हैं। इस प्रकारसे उन्हें स्थित देखकर अदितिने प्रार्थना करते हुए कहा—'देव! आप इस तरह निश्चिन्त होकर क्यों बैठे हैं? मेरे पुत्र उत्पन्न होते ही मृत्युको प्राप्त होते जा रहे हैं। अदितिके इस वचनको सुनकर ऋषियोंमें उत्तम कश्यपजी ब्रह्मलोक गये और उन्होंने अदितिकी बातें ब्रह्माजीको बतलायीं।'

ब्रह्माजीने कहा—पुत्र! हमें भगवान् भास्करके परम दुर्लभ स्थानपर चलना चाहिये। यह कहकर ब्रह्मा कश्यप और अदितिके साथ विमानपर आरूढ होकर सूर्यदेवके भवनको गये। उस समय सूर्यलोककी सभामें कहीं वेद-ध्वनि हो रही थी, कहीं यज्ञ हो रहा था। ब्राह्मण वेदकी शिक्षा दे रहे थे। अठारह पुराणोंके ज्ञाता, विद्याविशारद, मीमांसक, नैयायिक, वेदान्तविद्, लोकायतिक आदि सभी सूर्यकी उपासनामें लगे हुए थे। विद्वान् ब्राह्मण जप, तप, हवन आदिमें संलग्न थे। उस सभामें रश्मिमाली भगवान् दिवाकरको महर्षि कश्यप आदिने देखा। देवताओंके गुरु बृहस्पति, असुरोंके गुरु शुक्राचार्य आदि भी वहींपर भगवान् सूर्यकी उपासना कर रहे थे। दक्ष, प्रचेता, पुलह, मरीचि, भृगु, अत्रि, वसिष्ठ, गौतम, नारद, अन्तरिक्ष, तेज, पृथ्वी, शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध, प्रकृति, विकृति, अङ्ग-उपाङ्गोंसहित चारों वेद और लव, ऋतु, संकल्प, प्रणव आदि बहुत-से मूर्तिमान् होकर भगवान् भास्करकी स्तुति-उपासना कर रहे थे। अर्थ, धर्म, काम, मोक्ष, द्वेष, हर्ष, मोह, मत्सर, मान, वैष्णव, माहेश्वर, सौर, मारुत, विश्वकर्मा तथा अश्विनीकुमार आदि सुन्दर-सुन्दर वचनोंसे भगवान् सूर्यका गुणगान कर रहे थे।

ब्रह्माजीने भगवान् भास्करसे निवेदन किया—भगवन्! आप देवमाता अदितिके गर्भसे उत्पन्न होकर लोकका कल्याण कीजिये। इस त्रैलोक्यको अपने तेजसे प्रकाशित कीजिये। देवताओंको शरण दीजिये। असुरोंका विनाश एवं अदिति-पुत्रोंकी रक्षा कीजिये।

भगवान् सूर्यने कहा—आप जैसा कह रहे हैं, वैसा ही होगा। प्रसन्न होकर महर्षि कश्यप देवी अदितिके साथ अपने आश्रममें चले आये और ब्रह्माजी भी अपने लोकको चले गये।

सुमन्तु मुनि बोले—महाराज! कालान्तरमें भगवान् सूर्य अदितिके गर्भसे उत्पन्न हुए, जिससे तीनों लोकोंमें सुख छा गया और दैत्योंका विनाश हो गया, देवताओंकी वृद्धि हुई तथा उनके प्रभावसे सभी लोगोंमें परम आनन्द व्याप्त हो गया।

इस प्रकार देवमाता अदितिके गर्भसे भगवान् सूर्यके जन्म ग्रहण करनेपर आकाशमें दुन्दुभियाँ बजने लगीं, गन्धर्वगण गान करने लगे। द्वादशात्मा भगवान् सूर्यकी सभी देवगण, ऋषि-महर्षि तथा दक्ष प्रजापति आदि स्तुति करने लगे। उस समय एकादश रुद्र, अश्विनीकुमार, आठों वसु, महाबली गरुड, विश्वेदेव, साध्य, नागराज वासुकि तथा अन्य बहुत-से नाग और राक्षस भी हाथ जोड़े खड़े थे। पितामह ब्रह्मा भी स्वयं पृथ्वीपर आये

और सभी देवता एवं ऋषि-महर्षियोंसे बोले—'देवर्षिगण! जिस प्रकार बालकरूपमें उत्पन्न होकर ये सभीको देख रहे हैं, उसी प्रकार ये लोकेश्वर श्रीमान् और विवस्वान्-रूपमें विख्यात होंगे। देव, दानव, यक्ष, गन्धर्व आदिके जो कारण हैं वे ही आदिदेव भगवान् आदित्य हैं।' इस प्रकार कहकर पितामह ब्रह्माने देवताओं और ऋषियोंसहित उन्हें नमस्कार कर विधिपूर्वक उनकी अर्चना की तत्पश्चात् वे अपने-अपने लोकोंको चले गये।

वेदोंद्वारा गेय तथा इन्द्रादि बारह नामोंसे युक्त भगवान् सूर्यको पुत्ररूपमें प्राप्तकर महर्षि कश्यप अदितिके साथ परम संतुष्ट हो गये एवं सारा विश्व हर्षसे व्याप्त हो गया तथा सभी राक्षस भयभीत हो गये।

भगवान् सूर्य बोले—महर्षे! आपके पुत्र नष्ट हो जाते थे, इसलिये गर्भकी सिद्धिके लिये मैं आपके यहाँ पुत्ररूपमें उत्पन्न हुआ हूँ।

सुमन्तु मुनि बोले—राजन्! इस प्रकार भगवान् भास्करकी आराधना करके ब्रह्माजीने सृष्टि करनेका वर प्राप्त किया और कश्यपमुनिने भी भगवान् भास्करको प्रसन्नकर उन्हें पुत्ररूपमें प्राप्त कर लिया।

(अध्याय १५७—१५९)

ब्रह्मादि देवताओंद्वारा सूर्यके विराट्-रूपका दर्शन

महाराज शतानीकने कहा—मुने! आपने भगवान् सूर्यके अद्भुत चरित्रका वर्णन किया है, जिनका पूजन ब्रह्मा आदि देवता प्रतिदिन विधिपूर्वक करते रहते हैं तथा जिस ब्रह्मकी ब्रह्मा, विष्णु, शिव और सभी देवता आराधना करते रहते हैं, उसे आप बतायें।

सुमन्तु मुनि बोले—राजन्! एक बार भगवान् विष्णु और ब्रह्माजी हिमाचलपर गये। वहाँ उन्होंने देखा कि भगवान् शिव सिरपर अर्धचन्द्र धारण किये भगवान् विवस्वान्की पूजा कर रहे हैं। ब्रह्मा और विष्णुको वहाँ आये देखकर शिवजीने उन्हें प्रणाम किया और विधिपूर्वक उनकी पूजा की तथा उनसे कहा—'भगवन्! आपलोगोंने भगवान् सूर्यकी आराधना कर उनके किस स्वरूपका दर्शन किया है। मुझे उनके परम रूपको जाननेकी बड़ी ही अभिलाषा है, उसे आप बतायें।'

इसपर वे दोनों बोले—हमलोगोंने भी उस परम अद्भुत रूपको नहीं देखा है। हमें उस परम अद्भुत रूपकी आराधनाके लिये सुवर्णके समान उज्ज्वल पवित्र उदयगिरिपर एक साथ चलना चाहिये। अनन्तर तीनों देव तीव्र गतिसे पर्वतश्रेष्ठ उदयाचलपर गये और वहाँ भगवान् सूर्यनारायणकी विधिपूर्वक आराधना करने लगे। सहस्रों दिव्य वर्षतक पद्मासन लगाकर ब्रह्माजी निश्चलरूपसे स्थिर हो, ऊपर हाथ करके त्रिलोचन भगवान् शङ्कर और सिर नीचे करके पञ्चाग्निका सेवन करते हुए भगवान् विष्णु सूर्यदेवका दर्शन प्राप्त करनेके लिये कठोर तप करने लगे। ब्रह्मा, विष्णु और शिवजीके उत्तम तपसे संतुष्ट हो भगवान् सूर्यनारायणने प्रकट होकर उनसे कहा—'आपलोग क्या चाहते हैं? मैं आपलोगोंसे संतुष्ट हूँ और वर देनेके लिये उपस्थित हुआ हूँ।'

उन्होंने कहा—गोपते! हमलोग आपके दर्शनसे कृतकृत्य हो गये हैं। पहले ही आपकी आराधना करके हमलोगोंने शुभ वरोंको प्राप्त कर लिया है। आपकी दयासे हमलोग उत्पत्ति, स्थिति और विनाश करनेमें समर्थ हैं, इसमें किसी प्रकारका संशय नहीं है, किंतु देवदेवेश! हमलोग आपके परम दुर्लभ रूपका दर्शन करना चाहते हैं।

उनके वचनोंको सुनकर लोकपूजित भगवान्

सूर्यने उन्हें अपना परम दुर्लभ तेजस्वी अद्भुत विराट्-रूप दिखलाया। इनके अनेक सिर तथा अनेक मुख हैं, सभी देव तथा सभी लोक उसमें स्थित हैं। पृथ्वी पैर, स्वर्ग सिर, अग्नि नेत्र, पैरकी अँगुलियाँ पिशाच, हाथकी अँगुलियाँ गुह्यक, विश्वेदेव जंघा, यज्ञ कुक्षि, अप्सरागण केश तथा तारागण ही इनके रोमरूपमें हैं। दसों दिशाएँ इनके कान और दिक्पालगण इनकी भुजाएँ हैं। वायु नासिका, प्रसाद ही क्षमा तथा धर्म ही मन है। सत्य इनकी वाणी, देवी सरस्वती जिह्वा, ग्रीवा महादेवी अदिति और तालु वीर्यवान् रुद्र हैं। स्वर्गका द्वार नाभि, वैश्वानर अग्नि मुख, भगवान् ब्रह्मा हृदय और उदर महर्षि कश्यप हैं, पीठ आठों वसु तथा सभी संधियाँ मरुद्देव हैं। समस्त छन्द दाँत एवं ज्योतियाँ निर्मल प्रभा हैं। महादेव रुद्र प्राण, कुक्षियाँ समुद्र हैं। इनके उदरमें गन्धर्व और नाग हैं। लक्ष्मी, मेधा, धृति, कान्ति तथा सभी विद्याएँ इनके कटिदेशमें स्थित हैं। इनका ललाट ही परमात्माका परमपद है। दो स्तन, दो कुक्षि और चार वेद ये आठ ही इनके यज्ञ हैं।

सुमन्तु मुनि बोले—राजन्! सर्वदेवमय भगवान् सूर्यके इस विराट् रूपको देखकर ब्रह्मा, शिव और भगवान् विष्णु परम विस्मित हो गये। उन्होंने बड़ी श्रद्धासे भगवान् सूर्यको प्रणाम किया।

भगवान् सूर्यने कहा—देवो! आप सबकी कठिन तपस्यासे प्रसन्न होकर आप सबके कल्याणके लिये मैंने योगियोंके द्वारा समाधिगम्य अपने इस विराट्-रूपको दिखलाया है। इसपर वे बोले—भगवन्! आपने जो कहा है, उसमें कोई भी संदेह नहीं है। इस विराट्-रूपका दर्शन पाना योगियोंके लिये भी दुर्लभ है। आपकी आराधना करने तथा आपका दर्शन करनेपर कुछ अप्राप्य नहीं है। आपके समान इस लोकमें दूसरा कोई देव नहीं है।

राजन्! ब्रह्मादि देवता परम उत्कृष्ट इस रूपका दर्शन कर हर्षित हो गये और उन्होंने भगवान् सूर्यका पूजन-आराधन कर परम सिद्धि प्राप्त की।

(अध्याय १६०)

सूर्योपासनाका फल

शतानीकने पूछा—मुने! आपने भगवान् सूर्यके विषयमें जो कहा, वह सत्य ही है, संसारके मूल कारण तथा परम दैवत भगवान् सूर्य ही हैं, सभीको यही तेज प्रदान करते हैं। भगवान् सूर्यनारायणके पूजनसे जो फल प्राप्त होता है, आप उसे बतलानेकी कृपा करें।

सुमन्तु मुनि बोले—राजन्! जो व्यक्ति सर्वदेवमय भगवान् सूर्यकी प्रतिष्ठा कर पूजन करता है, वह अमरत्व तथा भगवान् सूर्यका सामीप्य प्राप्त कर लेता है। जो व्यक्ति भगवान् सूर्यका तिरस्कार कर सभी देवताओंका पूजन करता है, उस व्यक्तिके साथ भाषण करनेवाला व्यक्ति भी नरकगामी होता है। जो व्यक्ति श्रद्धा-भक्तिपूर्वक सूर्यदेवकी प्रतिष्ठा कर पूजन-अर्चन करता है, उसे यज्ञ, तप, तीर्थ-यात्रा आदिकी अपेक्षा कोटि गुना अधिक फल प्राप्त होता है तथा उसके मातृकुल, पितृकुल एवं स्त्रीकुल—इन तीनोंका उद्धार हो जाता है और वह इन्द्रलोकमें पूजित होता है तथा वहाँ ज्ञानयोगके आश्रयणसे वह मुक्ति प्राप्त कर लेता है अथवा जो राज्य चाहता है वह दूसरे जन्ममें सप्तद्वीपवती वसुमतीका राजा होता है। जो व्यक्ति मिट्टीका सर्वदेवमय व्योम बनाकर भगवान् सूर्यका पूजन-अर्चन करता है, वह तीनों लोकोंमें पूजित एवं इस लोकमें धन-

धान्यसे परिपूर्ण होकर अन्तमें सूर्यलोकको प्राप्त कर लेता है।

जो व्यक्ति भगवान् सूर्यके पिष्टमय व्योमकी रचना कर गन्ध, धूप, पुष्प, माला, चन्दन, फल आदि उपचारोंसे पूजा करता है, वह सब पापोंसे मुक्त हो जाता है और कोई क्लेश नहीं पाता। वह भगवान् सूर्यके समान प्रतापपूर्ण हो अव्यय पदको प्राप्त करता है। अपनी शक्तिके अनुसार भक्तिपूर्वक भगवान् सूर्यका मन्दिर निर्माण करानेवाला स्वर्णमय विमानपर आरूढ होकर भगवान् सूर्यके साथ विहार करता है। यदि साधन-सम्पन्न होनेपर भी श्रद्धा-भक्तिसे शून्य होकर मन्दिर आदिका निर्माण करता है तो उसे कोई फल नहीं होता। इसलिये अपने धनका तीन भाग करना चाहिये, उसमेंसे दो भाग धर्म तथा अर्थोपार्जनमें व्यय करे और एक भागसे जीवन-यापन करे। धन-सम्पत्तिसे सम्पन्न रहनेपर भी यदि कोई बिना भक्तिके अपना सर्वस्व भगवान् सूर्यके लिये अर्पण कर दे, तब भी वह धर्मका भागी नहीं होता, क्योंकि इसमें भक्तिकी ही प्रधानता है*। मानव संसारमें दुःख और शोकसे व्याकुल होकर तबतक भटकता है, जबतक भगवान् सूर्यकी पूजा नहीं करता। संसारमें आसक्त प्राणियोंको भगवान् सूर्यके अतिरिक्त और कौन ऐसा देवता है जो बन्धनसे छुटकारा दिला सके। (अध्याय १६१-१६२)

विभिन्न पुष्पोंद्वारा सूर्य-पूजनका फल

सुमन्तु मुनि बोले—राजन्! अमित तेजस्वी भगवान् सूर्यको स्नान कराते समय 'जय' आदि माङ्गलिक शब्दोंका उच्चारण करना चाहिये तथा शङ्ख, भेरी आदिके द्वारा मङ्गल-ध्वनि करनी चाहिये। तीनों संध्याओंमें वैदिक ध्वनियोंसे श्रेष्ठ फल होता है। शङ्ख आदि माङ्गलिक वाद्योंके सहारे नीराजन करना चाहिये। जितने क्षणोंतक भक्त नीराजन करता है, उतने युग सहस्र वर्ष वह दिव्यलोकमें प्रतिष्ठित होता है। भगवान् सूर्यको कपिला गौके पञ्चगव्यसे और मन्त्रपूत कुशयुक्त जलसे स्नान करानेको ब्रह्मस्नान कहते हैं। वर्षमें एक बार भी ब्रह्मस्नान करानेवाला व्यक्ति सभी पापोंसे मुक्त होकर सूर्यलोकमें प्रतिष्ठित होता है।

जो पितरोंके उद्देश्यसे शीतल जलसे भगवान् सूर्यको स्नान कराता है, उसके पितर नरकोंसे मुक्त होकर स्वर्ग चले जाते हैं। मिट्टीके कलशकी अपेक्षा ताम्र-कलशसे स्नान कराना सौ गुना श्रेष्ठ होता है। इसी प्रकार चाँदी आदिके कलशद्वारा स्नान करानेसे और अधिक फल प्राप्त होता है। भगवान् सूर्यके दर्शनसे स्पर्श करना श्रेष्ठ है और स्पर्शसे पूजा श्रेष्ठ है तथा घृतस्नान कराना उससे भी श्रेष्ठ है। इस लोक और परलोकमें प्राप्त होनेवाले पापोंके फल भगवान् सूर्यको घृतस्नान करानेसे नष्ट हो जाते हैं एवं पुराण-श्रवणसे सात जन्मोंके पाप दूर हो जाते हैं।

एक सौ पल (लगभग छः किलो बीस ग्राम) प्रमाणसे (जल, पञ्चामृत आदिसे) स्नान कराना 'स्नान' कहलाता है। पचीस पल (लगभग डेढ़ किलो)-से स्नान कराना 'अभ्यङ्ग-स्नान' कहलाता है और दो हजार पल (लगभग एक सौ चौबीस किलो)-से स्नान करानेको 'महास्नान' कहते हैं।

जो मानव भगवान् सूर्यको पुष्प-फलसे युक्त अर्घ्य प्रदान करता है, वह सभी लोकोंमें पूजित होता है और स्वर्गलोकमें आनन्दित होता है। जो

* सर्वस्वमपि यो दद्यादर्के भक्तिविवर्जितः। न तेन धर्मभागी स्याद्भक्तिरेवात्र कारणम्॥ (ब्राह्मपर्व १६२। २९)

अष्टाङ्ग अर्घ—जल, दूध, कुशका अग्रभाग, घी, दही, मधु, लाल कनेरका फूल तथा लाल चन्दन—बनाकर भगवान् सूर्यको निवेदित करता है, वह दस हजार वर्षतक सूर्यलोकमें विहार करता है। यह अष्टाङ्ग अर्घ भगवान् सूर्यको अत्यन्त प्रिय है*।

बाँसके पात्रसे अर्घ-दान करनेसे सौ गुना फल मिट्टीके पात्रसे होता है, मिट्टीके पात्रसे सौ गुना फल ताम्रके पात्रसे होता है और पलाश एवं कमलके पत्तोंसे अर्घ देनेपर ताम्रपात्रका फल प्राप्त होता है। रजतपात्रके द्वारा अर्घ प्रदान करना लाख गुना फल देता है। सुवर्णपात्रके द्वारा दिया गया अर्घ कोटि गुना फल देनेवाला होता है। इसी प्रकार स्नान, अर्घ, नैवेद्य, धूप आदिका क्रमशः विभिन्न पात्रोंकी विशेषतासे उत्तरोत्तर श्रेष्ठ फल प्राप्त होता है।

धनिक या दरिद्र दोनोंको समान ही फल मिलता है, किंतु जो भगवान् सूर्यके प्रति भक्ति-भावनासे सम्पन्न रहता है, उसे अधिक फल मिलता है। वैभव रहनेपर भी मोहवश जो पूर्व विधि-विधानके साथ पूजन आदि नहीं करता, वह लोभसे आक्रान्त-चित्त होनेके कारण उसका फल नहीं प्राप्त कर पाता। इसलिये मन्त्र, फल, जल तथा चन्दन आदिसे विधिपूर्वक सूर्यकी पूजा करनी चाहिये। इससे वह अनन्त फलको प्राप्त करता है। इस अनन्त फल-प्राप्तिमें भक्ति ही मुख्य हेतु है। भक्तिपूर्वक पूजा करनेसे वह सौ दिव्य कोटि वर्ष सूर्यलोकमें प्रतिष्ठित होता है।

राजन्! सूर्यको भक्तिपूर्वक तालपत्रका पंखा समर्पित करनेवाला दस हजार वर्षतक सूर्यलोकमें निवास करता है। मयूर-पंखका सुन्दर पंखा सूर्यको समर्पित करनेवाला सौ कोटि वर्षोंतक सूर्यलोकमें निवास करता है।

नरश्रेष्ठ! हजारों पुष्पोंसे कनेरका पुष्प श्रेष्ठ है, हजारों बिल्वपत्रोंसे एक कमल-पुष्प श्रेष्ठ है। हजारों कमल-पुष्पोंसे एक अगस्त्य-पुष्प श्रेष्ठ है, हजारों अगस्त्य-पुष्पोंसे एक मोंगरा-पुष्प श्रेष्ठ है, सहस्र कुशाओंसे शमीपत्र श्रेष्ठ है तथा हजार शमी-पत्रोंसे नीलकमल श्रेष्ठ है। सभी पुष्पोंमें नीलकमल ही श्रेष्ठ है। लाल कनेरके द्वारा जो भगवान् सूर्यकी पूजा करता है, वह अनन्त कल्पोंतक सूर्यलोकमें सूर्यके समान श्रीमान् तथा पराक्रमी होकर निवास करता है। चमेली, गुलाब, विजय, श्वेत मदार तथा अन्य श्वेत पुष्प भी श्रेष्ठ माने गये हैं। नाग-चम्पक, सदाबहार-पुष्प, मुद्गर (मोंगरा) ये सब समान ही माने गये हैं। गन्धयुक्त किंतु अपवित्र पुष्पोंको देवताओंपर नहीं चढ़ाना चाहिये। गन्धहीन होते हुए भी पवित्र कुशादिकोंको ग्रहण करना चाहिये। पवित्र पुष्प सात्त्विक पुष्प हैं और अपवित्र पुष्प तामसी हैं। रात्रिमें मोंगरा और कदम्बका पुष्प चढ़ाना चाहिये। अन्य सभी पुष्पोंको दिनमें ही समर्पित करना चाहिये। अधखिले पुष्प तथा अपक्व पदार्थ भगवान् सूर्यको नहीं चढ़ाने चाहिये। फलोंके न मिलनेपर पुष्प, पुष्प न मिलनेपर पत्र और इनके अभावमें तृण, गुल्म और औषध भी समर्पित किये जा सकते हैं। इन सबके अभावमें मात्र भक्तिपूर्वक पूजन-आराधनसे भगवान् प्रसन्न हो जाते हैं। जो माघ मासके कृष्णपक्षमें सुगन्धित मुक्ता-पुष्पोंद्वारा सूर्यकी पूजा करता है, उसे अनन्त फल प्राप्त होता है। संयतचित्त होकर करवीर-पुष्पोंसे पूजा करनेवाला सभी पापोंसे रहित हो सूर्यलोकमें प्रतिष्ठित होता है।

---

* आपः क्षीरं कुशाग्राणि घृत दधि तथा मधु। रक्तानि करवीराणि तथा रक्तं च चन्दनम्॥
अष्टाङ्ग एष अर्घो वै ब्रह्मणा परिकीर्तितः। सततं प्रीतिजननो भास्करस्य नराधिप॥
(ब्राह्मपर्व १६३। ३७-३८)

अगस्त्यके पुष्पोंसे जो एक बार भी भक्तिपूर्वक सूर्यकी पूजा करता है, वह दस लाख गोदानका फल प्राप्त करता है और उसे स्वर्ग प्राप्त होता है।

मालती, रक्त कमल, चमेली, पुंनाग, चम्पक, अशोक, श्वेत मन्दार, कचनार, अंधुक, करवीर, कल्हार, शमी, तगर, कनेर, केसर, अगस्त्य, बक तथा कमल-पुष्पोंद्वारा यथाशक्ति भगवान् सूर्यकी पूजा करनेवाला कोटि सूर्यके समान देदीप्यमान विमानसे सूर्यलोकको प्राप्त करता है अथवा पृथ्वी या जलमें उत्पन्न पुष्पोंद्वारा श्रद्धापूर्वक पूजन करनेवाला सूर्यलोकमें प्रतिष्ठित होता है।

(अध्याय १६३)

सूर्यषष्ठी-व्रतकी महिमा

सुमन्तु मुनि बोले—राजन्! अब आप भगवान् सूर्यको अत्यन्त प्रिय सूर्यषष्ठी-व्रतके विषयमें सुनें। सूर्यषष्ठी-व्रत करनेवालेको जितेन्द्रिय एवं क्रोधरहित होकर अयाचित-व्रतका पालन करते हुए भगवान् सूर्यकी पूजामें तत्पर रहना चाहिये। व्रतीको अल्प और सात्त्विक-भोजी तथा रात्रिभोजी होना चाहिये। स्नान एवं अग्निकार्य करते रहने चाहिये और अधःशायी होना चाहिये। मध्याह्नमें देवताओंद्वारा, पूर्वाह्नमें ऋषियोंद्वारा, अपराह्नमें पितरोंद्वारा और संध्यामें गुह्यकोंद्वारा भोजन किया जाता है। अतः इन सभी कालोंका अतिक्रमण कर सूर्यव्रतीके भोजनका समय रात्रि ही माना गया है। मार्गशीर्ष मासके कृष्ण पक्षकी षष्ठीसे यह व्रत आरम्भ करना चाहिये। इस दिन भगवान् सूर्यकी 'अंशुमान्' नामसे पूजा करनी चाहिये तथा रात्रिमें गोमूत्रका प्राशन कर निराहार हो विश्राम करना चाहिये। ऐसा करनेवाला व्यक्ति अतिरात्र-यज्ञका फल प्राप्त करता है। इसी प्रकार पौषमें भगवान् सूर्यकी 'सहस्त्रांशु' नामसे पूजा करे तथा घृतका प्राशन करे, इससे वाजपेययज्ञका फल प्राप्त होता है। माघ माससमें कृष्ण पक्षकी षष्ठीको रात्रिमें गोदुग्ध-पान करे। सूर्यकी पूजा 'दिवाकर' नामसे करे, इससे महान् फल प्राप्त होता है। फाल्गुन माससमें 'मार्तण्ड' नामसे पूजाकर, गोदुग्धका पान करनेसे अनन्त कालतक सूर्यलोकमें प्रतिष्ठित होता है। चैत्र माससमें भास्करकी 'विवस्वान्' नामसे भक्तिपूर्वक पूजाकर हविष्य-भोजन करनेवाला सूर्यलोकमें अप्सराओंके साथ आनन्द प्राप्त करता है। वैशाख माससमें 'चण्डकिरण' नामसे सूर्यकी पूजा करनेसे दस हजार वर्षोंतक सूर्यलोकमें आनन्द प्राप्त करता है। इसमें पयोव्रती होकर रहना चाहिये। ज्येष्ठ माससमें भगवान् भास्करकी 'दिवस्पति' नामसे पूजा कर गो-शृङ्गका जल-पान करना चाहिये। ऐसा करनेसे कोटि गोदानका फल प्राप्त होता है। आषाढ़ मासके कृष्ण पक्षकी षष्ठीको 'अर्क' नामसे सूर्यकी पूजा कर, गोमयका प्राशन करनेसे सूर्यलोककी प्राप्ति होती है। श्रावण माससमें 'अर्यमा' नामसे सूर्यका पूजन कर दुग्ध-पान करे, ऐसा करनेवाला सूर्यलोकमें दस हजार वर्षोंतक आनन्दपूर्वक रहता है। भाद्रपद माससमें 'भास्कर' नामसे सूर्यकी पूजा कर पञ्चगव्य-प्राशन करे, इससे सभी यज्ञोंका फल प्राप्त होता है। आश्विन मासके कृष्ण पक्षकी षष्ठीमें 'भग' नामसे सूर्यकी पूजा करे, इसमें एक पल गोमूत्रका प्राशन करनेसे अश्वमेध-यज्ञका फल प्राप्त होता है। कार्तिक मासके कृष्ण पक्षकी षष्ठीको 'शक्र' नामसे सूर्यकी पूजाकर दूर्वाङ्कुरका एक बार भोजन करनेसे राजसूय-यज्ञका फल प्राप्त होता है।

वर्षके अन्तमें सूर्य-भक्तिपरायण ब्राह्मणोंको मधुसंयुक्त पायसका भोजन कराये तथा यथाशक्ति स्वर्ण और वस्त्रादि समर्पित करे। भगवान् सूर्यके

लिये काले रंगकी दूध देनेवाली गाय देनी चाहिये। जो इस व्रतका एक वर्षतक निरन्तर विधिपूर्वक सम्पादन करता है, वह सभी पापोंसे विनिर्मुक्त हो जाता है एवं सभी कामनाओंसे पूर्ण होकर शाश्वत कालतक सूर्यलोकमें आनन्दित रहता है।

सुमन्तु मुनि बोले—राजन्! इस कृष्ण-षष्ठी-व्रतको भगवान् सूर्यने अरुणसे कहा था। यह व्रत सभी पापोंका नाश करनेवाला है। भक्तिपूर्वक भगवान् भास्करकी पूजा करनेवाला मनुष्य अमित तेजस्वी भगवान् भास्करके अमित स्थानको प्राप्त करता है।

(अध्याय १६४)

उभयसप्तमी-व्रतका वर्णन

सुमन्तु मुनिने कहा—राजन्! अब मैं आपको धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष इस चतुर्वर्गकी प्राप्ति करानेवाले भगवान् सूर्यके उत्तम व्रतको बतलाता हूँ। पौष मासके उभयपक्षकी सप्तमियोंको जो शालि (धान) गेहूँके आटेसे बने पक्वान्न तथा दूधका रात्रिमें भोजन करता है और जितेन्द्रिय रहता है, सत्य बोलता है तथा दिनभर उपवास करता है, तीनों संध्याओंमें भगवान् सूर्य तथा अग्निकी उपासना करता है, सभी भोग-पदार्थोंका परित्याग कर भूमिपर शयन करता है, मास बीतनेपर सप्तमीको घृतादिके द्वारा भगवान् सूर्यको स्नान कराता है तथा उनकी पूजा करता है, नैवेद्यमें मोदक, पका दूध तथा पक्वान्न निवेदित करता है, आठ ब्राह्मणोंको भोजन कराता है और भगवान्‌को कपिला गाय निवेदित करता है, वह कोटि सूर्योंके समान देदीप्यमान उत्तम विमानमें आरूढ होकर भगवान् अंशुमालीके परम स्थानको प्राप्त करता है। कपिला गौके तथा उसकी संततियोंके शरीरमें जितने रोम हैं, उतने हजार युग वर्षोंतक वह सूर्यलोकमें प्रतिष्ठा प्राप्त करता है। अपने इक्कीस कुलोंके साथ वह यथेच्छ भोगोंका उपभोग कर अन्तमें ज्ञानयोगका समाश्रयण कर मुक्त हो जाता है।

राजन्! इस प्रकार मैंने आपको इस संसार-समुद्रसे पार उतारनेवाले सौरधर्ममें मोक्ष-क्रमके उपाय बतलाये। यह विद्वानोंके लिये समाश्रयणीय है।

इसी प्रकार अन्य महीनोंमें (माघसे मार्गशीर्षतक) निर्दिष्ट नियमोंका पालन करते हुए व्रत और भगवान् सूर्यकी पूजा करनेसे विभिन्न कामनाओंकी पूर्ति होती है तथा सूर्यलोककी प्राप्ति होती है।

कुरुनन्दन! अहिंसा, सत्य-वचन, अस्तेय, शान्ति, क्षमा, ऋजुता, तीनों कालोंमें स्नान तथा हवन, पृथ्वी-शयन, रात्रिभोजन—इनका पालन सभी व्रतोंमें करना चाहिये। इन गुणोंका आश्रयणकर उत्तम व्रतका आचरण करनेवाले व्यक्तिके सभी पाप और भय नष्ट हो जाते हैं एवं रोगोंका नाश हो जाता है और सभी कामनाओंके अनुरूप फलकी प्राप्ति होती है। इस प्रकारका सूर्यव्रती व्यक्ति अमित तेजस्वी होकर सूर्यलोकको प्राप्त कर लेता है।

(अध्याय १६५)

निक्षुभार्क-सप्तमी तथा निक्षुभार्क-चतुष्टय-व्रत-माहात्म्य-वर्णन

सुमन्तु मुनि बोले—राजन्! जो स्त्री उत्तम पुत्रकी आकाङ्क्षा रखती है, उसे निक्षुभार्क नामका व्रत करना चाहिये। यह व्रत स्त्री एवं पुरुषमें परस्पर प्रीतिवर्धक, अवियोगकारक और धर्म, अर्थ तथा कामका साधक है। इस व्रतको षष्ठी, सप्तमी, संक्रान्ति या रविवारके दिन करना चाहिये। भगवान् सूर्यके सहित उनकी पत्नी महादेवी निक्षुभाकी द्यौ-रूपमें कांस्य, रजत तथा सुवर्णकी सुन्दर प्रतिमा बनवाये। उसे घृतादिसे स्नान कराकर गन्ध-माल्यादि तथा वस्त्रोंसे अलंकृत करे। अनन्तर प्रतिमा स्थापित किये उस वितान और छत्रसे शोभित पात्रको सिरपर रखकर भगवान् सूर्यके मन्दिरमें ले जाय। उस प्रतिमाको एक वेदीपर स्थापित करे और प्रदक्षिणापूर्वक उसे नमस्कार कर क्षमा-याचना करे एवं उपवास रहकर हविके द्वारा हवन करे। फिर सूर्य-भक्त ब्राह्मणोंको शुक्ल वस्त्र पहनाकर भोजन कराये। इस व्रतको करनेवाला व्यक्ति देदीप्यमान महायानसे सूर्यलोकमें सूर्यभक्तोंके साथ आनन्द प्राप्त करता है, फिर वह अनन्त वर्षोंतक विष्णुलोकमें आनन्दमय जीवन व्यतीत करता है।

सुमन्तु मुनि बोले—राजन्! जो स्त्री सौभाग्यकी आकाङ्क्षासे संयतेन्द्रिय होकर षष्ठी अथवा सप्तमीको एक वर्षतक भोजन नहीं करती और वर्षके अन्तमें निक्षुभा तथा सूर्यकी प्रतिमा बनाकर विधिपूर्वक स्नानादि पूर्वोक्त क्रियाएँ करती है, वह पूर्वोक्त फलोंको प्राप्त करती है तथा चारों द्वारोंसे सुशोभित स्वर्णमय यानके द्वारा रमणीय सूर्यलोकमें जाकर सभी फलोंको प्राप्तकर सौर आदि सभी लोकोंमें अभीप्सित फलका उपभोग कर इस लोकमें जन्म ग्रहण करती है तथा राजाको पतिरूपमें प्राप्त करती है।

इसी प्रकार जो नारी कृष्ण पक्षकी सप्तमीको उपवास कर वर्षके अन्तमें शालिके चूर्णसे सुन्दर निक्षुभार्ककी प्रतिमाका निर्माण करके पीत रंगकी मालासे और पीत वस्त्रोंसे उनकी पूजा करती है तथा ये सभी कर्म सूर्यको निवेदित करती है, वह हाथी-दाँतके समान कान्तिवाले महायानसे सातों लोकोंमें गमनकर, सौ करोड़ वर्षतक सूर्यलोकमें प्रतिष्ठित होती है। नरश्रेष्ठ! सौर आदि लोकोंमें भोगोंका उपभोगकर क्रमशः इस लोकमें जन्म ग्रहण करती तथा अभीप्सित धन-धान्य-समन्वित मनोऽनुकूल पतिको प्राप्त करती है*।

जो दृढव्रती नारी माघ मासके कृष्ण पक्षकी सप्तमीको सभी भोगोंका परित्याग कर एक वर्षतक प्रत्येक सप्तमीको उपवास करती और वर्षके अन्तमें गन्धादि पदार्थ निक्षुभार्कको निवेदित करती है तथा मगकी स्त्रियोंको भोजन कराती है, वह गन्धर्वसे सुशोभित विचित्र दिव्य महायानद्वारा सूर्यलोकमें जाकर अनेक सहस्र वर्षोंतक निवास करती है। वहाँ यथेष्ट सभी भोगोंका उपभोग कर इस लोकमें आनेपर राजाको पतिरूपमें वरण करती है।

राजन्! जो स्त्री पाप और भयका नाश करनेवाले इस निक्षुभार्क-व्रतको करती है, वह परमपदको प्राप्त करती है। एक वर्षतक परम श्रद्धाके साथ

* चतुर्वर्गचिन्तामणि (हेमाद्रि)-के व्रत-खण्डमें भविष्यपुराणके नामसे निक्षुभार्क-चतुष्टय नामक इस व्रतका संग्रह हुआ है। उपलब्ध भविष्यपुराणमें पाठका कुछ अंश कम है, जिसे हेमाद्रिके आधारपर यहाँ दिया जा रहा है—

जो नारी एक वर्षतक संयतेन्द्रिय होकर सप्तमीको निराहार व्रत रखती है और जिसकी कर्णिकाएँ सुवर्णकी हों ऐसे चाँदीके कमलको, पिष्टमय गजका निर्माणकर उसकी पीठपर स्थापित कर वर्षान्तमें उसका दान करती है, उसके सभी पाप नष्ट हो जाते हैं। शेष पूजन पूर्वोक्त विधिसे ही करना चाहिये। इससे वह पुरुषरूपसे सभी सौरादि लोकोंमें भ्रमण करते हुए पृथ्वीलोकमें आकर कुलीन तथा रूपसम्पन्न महाबली राजाको पतिरूपमें प्राप्त करती है।

इस व्रतको सम्पन्न कर वर्षान्तमें भोजक-दम्पतिको भोजन कराये और गन्ध-माल्य, सुन्दर वस्त्र आदिसे उनकी पूजा करे। ताम्रमय पात्रमें हीरेसे अलंकृत निक्षुभार्ककी सुवर्णमयी प्रतिमा भोजक-दम्पतिको निवेदित करे। देवी निक्षुभा भोजकी हैं और अर्क भोजक हैं। अतः उन दोनोंकी विधिवत् श्रद्धापूर्वक पूजा करनी चाहिये।

(अध्याय १६६-१६७)

कामप्रद स्त्री-व्रतका वर्णन

सुमन्तु मुनि बोले—राजन्! जो स्त्री कार्तिक मासके दोनों पक्षोंकी षष्ठी एवं सप्तमी तिथियोंमें क्षमा, अहिंसा आदि नियमोंका पालन कर, संयतेन्द्रिय होती हुई एकभुक्त रहती एवं उपवास करती है और गुड़-घीसे युक्त शालि-अन्न श्रद्धाके साथ भगवान् सूर्यको अर्पित करती है तथा करवीरके पुष्प और घृतके साथ गुग्गुल निवेदित करती है, वह स्त्री इन्द्रनीलके समान सार्वकालिक विमानपर बैठकर दस लाख वर्षोंतक सूर्यलोकमें आनन्दमय जीवन व्यतीत करती है। सभी लोकोंके भोगोंको भोगकर क्रमशः इस लोकमें आकर जन्म ग्रहण करती तथा अभीप्सित पतिको प्राप्त करती है। इस प्रकार वर्षभरके सभी व्रतोंकी विधि समान कही गयी है। एक समय भोजन और उपवासका समान ही फल होता है। क्षमा, सत्य, दया, दान, शौच, इन्द्रियनिग्रह, सूर्यपूजा, अग्निहवन, संतोष तथा अचौर्यव्रत—ये दस सभी व्रतोंके लिये सामान्य (आवश्यक) धर्म (अङ्ग) हैं।

इसी तरह मार्गशीर्ष आदि मासोंमें निर्दिष्ट नियमोंका पालन करते हुए सूर्यकी पूजा करनेसे अभ्युदयकी प्राप्ति होती है, साथ ही सहस्रों वर्षोंतक सूर्यलोकका सुख भोगकर वह नारी अन्तमें राजपत्नी बनती है।

जो कोई भी पुरुष या स्त्री अथवा नपुंसक भक्तिपूर्वक भगवान् सूर्यकी उपासना करते हैं वे सभी अपने मनोऽनुकूल फल प्राप्त करते हैं।

(अध्याय १६८)

भगवान् सूर्यके निमित्त गृह एवं रथ आदिके दानका माहात्म्य

सुमन्तु मुनि बोले—राजन्! अपने वित्तके अनुसार मिट्टी, लकड़ी, पत्थर तथा पके हुए ईंटोंसे जो मठ या गृहका निर्माण कर उसे सभी उपकरणोंसे युक्त करके भगवान् सूर्यके लिये समर्पित करता है, वह सभी कामनाओंको प्राप्त कर लेता है। माघ मासमें तन्द्रारहित होकर एक-भुक्तव्रत करे और मासके अन्तमें एक रथका निर्माण करे जो विचित्र वस्त्रसे सुशोभित, चार श्वेत अश्वोंसे अलंकृत, श्वेत ध्वज, पताका एवं छत्र, चामर, दर्पणसे युक्त हो। उस रथपर ढाई सेर चावलके चूर्णसे सूर्यकी प्रतिमाका निर्माण कर उसे संज्ञा देवीके साथ रथके पिछले भागमें (जहाँ रथी बैठता है) स्थापित कर शङ्ख, भेरी आदि ध्वनियोंके साथ रात्रिमें राजमार्गमें उस रथको घुमाकर क्रमशः धीरे-धीरे सूर्य-मन्दिरमें ले जाय। वहाँ जागरण एवं पूजा करे तथा दीपक एवं दर्पण आदिसे अलंकृत कर रात्रि व्यतीत करे। प्रातः मधु, क्षीर और घृतसे उस प्रतिमाको स्नान कराकर दीन, अन्ध एवं अनाथोंको अपनी शक्तिके अनुसार भोजन कराकर दक्षिणा दे और संवाहनसे युक्त रथ भगवान् भास्करको निवेदित करे तथा अपने बन्धुओंके साथ भोजन करे।

मन्त्र और धर्मसे समन्वित अपने सभी व्रतोंमें श्रेष्ठ यह सूर्यरथ-व्रत समस्त कामनाओं तथा अर्थकी सिद्धि करनेवाला है। सभी व्रतोंके पुण्य और सभी यज्ञोंके फल इसी व्रतके करनेसे प्राप्त हो जाते हैं। जो भगवान् सूर्यके निमित्त एक सवत्सा गौ दान करता है, वह ससद्वीपवती वसुन्धराके दानका फल प्राप्त करता है।

(अध्याय १६९-१७०)

सौर-धर्ममें सदाचरणका वर्णन

सुमन्तु मुनि बोले—राजन्! अब मैं सौरधर्मसे सम्बद्ध सदाचारोंका संक्षेपमें वर्णन करता हूँ। सूर्य-उपासकको भूखे-प्यासे, दीन-दुःखी, थके हुए, मलिन तथा रोगी व्यक्तिका अपनी शक्तिके अनुसार पालन और रक्षण करना चाहिये, इससे सम्पूर्ण कामनाएँ पूर्ण हो जाती हैं। पतित, नीच तथा चाण्डाल और पक्षी आदि सभी प्राणियोंको अपनी शक्तिके अनुसार दी गयी थोड़ी भी वस्तु करुणाके कारण दिये जानेसे अक्षय-फल प्रदान करती है, अतः सभी प्राणियोंपर दया करनी चाहिये। जो मधुर वाणी बोलता है, उसे इस लोक तथा परलोकमें सभी सुख प्राप्त होते हैं। अमृत प्रवाहित करनेवाली प्रिय वाणी चन्दनके स्पर्शके समान शीतल होती है। धर्मसे युक्त वाणी बोलनेवालेको अक्षय सुखकी प्राप्ति होती है[१]। प्रिय वाणी स्वर्गका अचल सोपान है, इसकी तुलनामें दान, पूजन, अध्यापन आदि सब व्यर्थ हैं। अतिथिके आनेपर सादर उससे कुशल-प्रश्न करना चाहिये और यात्राके समय 'आपका मार्ग मङ्गलमय हो, आपको सभी कार्यके साधक सुख नित्य प्राप्त हों'—ऐसा कहना चाहिये। सभी समय ऐसे आशीर्वादात्मक वचन बोलने चाहिये। नमस्कारात्मक वाक्यमें 'स्वस्ति', मङ्गल-वचन तथा सभी कर्मोंमें 'आपका नित्य कल्याण हो', ऐसा कहना चाहिये। इस प्रकारके आचरणोंका अनुष्ठान करके व्यक्ति सम्पूर्ण पापोंसे मुक्त होकर सूर्यलोकमें प्रतिष्ठित होता है। मनुष्योंको जैसी भक्ति भगवान् सूर्यमें हो वैसी ही भक्ति सूर्यभक्तोंके प्रति भी रखनी चाहिये। किसीके द्वारा आक्रोश करने या ताडित होनेपर जो न आक्रोश करता है, न ताड़न करता है, वाणीमें अधिकार होनेके कारण ऐसा क्षमाशील एवं शान्त व्यक्ति सदा दुःखसे रहित होता है। सभी तीर्थोंमें क्षमा सबसे श्रेष्ठ है, इसलिये सभी क्रियाओंमें क्षमा धारण करना चाहिये। ज्ञान, योग, तप एवं यज्ञ-दानादि सत्क्रियाएँ क्रोधी व्यक्तिके लिये व्यर्थ हो जाती हैं, इसलिये क्रोधका परित्याग कर देना चाहिये[२]। अप्रिय वाणी मर्म, अस्थि, प्राण तथा हृदयको जलानेवाली होती है, इसलिये अप्रिय वाणीका कभी प्रयोग नहीं करना चाहिये। क्षमा, दान, तेजस्विता, सत्य, शम, अहिंसा—ये सब भगवान् सूर्यकी कृपासे ही प्राप्त होते हैं।

सुमन्तु मुनि पुनः बोले—महाराज! अब आप आदित्यसम्मत सौर-धर्मको पुनः सुनें। यह सौर-धर्म पापनाशक, भगवान् सूर्यको प्रिय तथा परम पवित्र है। यदि मार्गमें कहीं रविकी पूजा-अर्चा

१-न हीदृक् स्वर्गयानाय यथा लोके प्रियं वचः। इहामुत्र सुखं तेषां वाग्येषां मधुरा भवेत्॥
अमृतस्यन्दिनीं वाचं चन्दनस्पर्शशीतलाम्। धर्माविरोधिनीमुक्त्वा सुखमक्षय्यमाप्नुयात्॥ (ब्राह्मपर्व १७१। ३८-३९)

२-सर्वेषामेव तीर्थानां क्षान्तिः परमपूजिता। तस्मात्पूर्वं प्रयत्नेन क्षान्तिः कार्या क्रियासु वै॥
ज्ञानयोगतपो यस्य यज्ञदानानि सत्क्रिया। क्रोधनस्य वृथा यस्मात् तस्मात् क्रोधं विवर्जयेत्॥ (ब्राह्मपर्व १७१। ४७-४८)

होती देखे तो यह समझना चाहिये कि वहाँ भगवान् सूर्यदेव स्वयं प्रत्यक्ष उपस्थित हैं। भगवान् सूर्यका मन्दिर देखकर वहाँ भगवान् सूर्यको नमस्कार करके ही वहाँसे आगे जाना चाहिये। देव-पर्व, उत्सव, श्राद्ध तथा पुण्य दिनोंमें विधिपूर्वक भगवान् सूर्यकी पूजा करनी चाहिये। देवगण तथा पितृगण सूर्यका आश्रयण करके ही स्थित हैं। भगवान् सूर्यके प्रसन्न होनेपर निःसंदेह सभी प्रसन्न हो जाते हैं। सौर-धर्मके अनुष्ठानसे ज्ञान प्राप्त होता है तथा उससे वैराग्य। ज्ञान और वैराग्यसे सम्पन्न व्यक्तिकी सूर्ययोगमें प्रवृत्ति होती है। सूर्यके योगसे वह सर्वज्ञ एवं परिपूर्ण हो जाता है तथा अपनी आत्मामें अवस्थित होकर सूर्यके समान स्वर्गमें आनन्द-लाभ करता है।

ब्रह्मचर्य, तप, मौन, क्षमा तथा अल्पाहार—ये तपस्वियोंके पाँच विशिष्ट गुण हैं। भाग्य या अन्य विशिष्ट मार्गसे तथा न्यायपूर्वक प्राप्त धन गुणवान् व्यक्तिको देना ही दान है। हजारों सस्य-राशियोंको उत्पन्न करनेवाली जल-युक्त उर्वरा भूमिका दान भूमिदान कहा जाता है। सभी दोषोंसे रहित, कुलीन अलंकृता कन्या निर्धन विद्वान् द्विजको देना कन्यादान कहा जाता है। मध्यम या उत्तम नवीन वस्त्रका दान वस्त्रदान कहा जाता है। एक मासमें दो सौ चालीस ग्रासोंका[1] भक्षण करना चान्द्रायण[2]-व्रत कहलाता है। सभी शास्त्रोंके ज्ञाता तथा तपस्यापरायण जितेन्द्रिय ऋषियों एवं देवोंसे सेवित जल-स्थान तीर्थ कहा जाता है। सूर्यसम्बन्धी स्थानोंको पुण्य-क्षेत्र कहा जाता है। उन सूर्यसम्बन्धी क्षेत्रोंमें मरनेवाला व्यक्ति सूर्य-सायुज्यको प्राप्त करता है। तीर्थोंमें दान-देनेसे, उद्यान लगाने एवं देवालय, धर्मशाला आदि बनवानेसे अक्षय फल प्राप्त होता है। क्षमा एवं निःस्पृहता, दया, सत्य, दान, शील, तप तथा अध्ययन—इन आठ अङ्गोंसे युक्त व्यक्ति श्रेष्ठ पात्र कहा जाता है। भगवान् सूर्यमें भक्ति, क्षमा, सत्य, दसों इन्द्रियोंका विनिग्रह तथा सभीके प्रति मैत्रीभाव रखना सौर-धर्म है।

जो भक्तिपूर्वक भविष्यपुराण लिखवाता है, वह सौ कोटि युग वर्षोंतक सूर्यलोकमें प्रतिष्ठित होता है। जो सूर्यमन्दिरका निर्माण करवाता है, उसे उत्तम स्थानकी प्राप्ति होती है।

(अध्याय १७१-१७२)

सौर-धर्मकी महिमाका वर्णन, ब्रह्माकृत सूर्य-स्तुति

राजा शतानीकने कहा—ब्राह्मणश्रेष्ठ! आप सौर-धर्मका पुनः विस्तारसे वर्णन कीजिये।

सुमन्तु मुनि बोले—महाबाहो! तुम धन्य हो, इस लोकमें सौर-धर्मका प्रेमी तुम्हारे समान अन्य कोई भी राजा नहीं है। इस सम्बन्धमें मैं आपको प्राचीन कालमें गरुड एवं अरुणके बीच हुए संवादको पुनः प्रस्तुत कर रहा हूँ। आप इसे ध्यानपूर्वक सुनें।

अरुणने कहा—खगश्रेष्ठ! यह सौर-धर्म अज्ञान-सागरमें निमग्न समस्त प्राणियोंका उद्धार करनेवाला

१-शुक्ल पक्षमें प्रतिदिन एक-एक ग्रासकी वृद्धि तथा कृष्ण पक्षमें एक-एक ग्रासकी न्यूनताके नियमका पालन करनेसे दो सौ चालीस ग्रास एक मासमें होते हैं।

२-चान्द्रायणके मुख्य तीन भेद हैं— यव-मध्य, पिपीलिका-मध्य और शिशु-चान्द्रायण। यव-मध्यमें शुक्ल पक्षकी प्रतिपदासे आरम्भ कर पूर्णिमाको पंद्रह ग्राससे लेकर क्रमशः घटाते हुए अमावास्याको समाप्त कर दिया जाता है। पिपीलिकामें पूर्णिमाको प्रारम्भ कर कृष्ण पक्षमें क्रमशः एक-एक ग्रास घटाते हुए अमावास्याको उपवास कर फिर पूर्णिमाको पूरा किया जाता है और शिशु या सामान्य चान्द्रायणमें प्रतिदिन आठ ग्रास लिया जाता है। इस प्रकार तीस दिनोंमें दो सौ चालीस ग्रास हो जाता है।

क्षिराज! जो लोग भक्तिभावसे भगवान् सूर्यका
ग-कीर्तन और भजन करते हैं, वे परमपदको
होते हैं। खगाधिप! जिसने इस लोकमें जन्म
ाकर इन देवेश भगवान् भास्करकी उपासना
की, वह संसारके क्लेशोंमें ही निमग्न रहता
मनुष्य-जीवन परम दुर्लभ है, इसे प्राप्त कर
ने भगवान् सूर्यका पूजन किया, उसीका जन्म
सफल है। जो श्रद्धा-भक्तिसे भगवान् सूर्यका
ण करता है, वह कभी किसी प्रकारके दुःखका
ी नहीं होता।

जिन्हें महान् भोगोंके सुख-प्राप्तिकी कामना
तथा जो राज्यासन पाना चाहते हैं अथवा
र्गीय सौभाग्य-प्राप्तिके इच्छुक हैं एवं जिन्हें
ुल कान्ति, भोग, त्याग, यश, श्री, सौन्दर्य,
त्की ख्याति, कीर्ति और धर्म आदिकी अभिलाषा
उन्हें सूर्यकी भक्ति करनी चाहिये।

जो परम श्रद्धा-भावसे भगवान् सूर्यकी आराधना
ता है, वह सभी पापोंसे मुक्त हो जाता है।
विध आकारवाली डाकिनियाँ, पिशाच और
क्षस अथवा कोई भी उसे कुछ भी पीड़ा नहीं
सकते। इसके अतिरिक्त कोई भी जीव उसे
हीं सता सकते। सूर्यकी उपासना करनेवाले
ुष्यके शत्रुगण नष्ट हो जाते हैं और उन्हें संग्राममें
जय प्राप्त होती है। वीर! वह नीरोग होता है।
ापत्तियाँ उसका स्पर्शतक नहीं कर पातीं। सूर्योपासक
नुष्यकी धन, आयु, यश, विद्या और सभी
कारके कल्याण-मङ्गलकी अभिवृद्धि होती रहती
, उसके सभी मनोरथ पूर्ण हो जाते हैं।

ब्रह्माजीने भगवान् सूर्यकी आराधना कर ब्राह्म-
दकी प्राप्ति की थी। देवोंके ईश भगवान् विष्णुने
ष्णुत्व-पदको सूर्यके अर्चनसे ही प्राप्त किया
। भगवान् शंकर भी भगवान् सूर्यकी आराधनासे
ी जगन्नाथ कहे जाते हैं तथा उनके प्रसादसे ही
उन्हें महादेवत्व-पद प्राप्त हुआ है एवं उनकी ही आराधनासे एक सहस्र नेत्रोंवाले इन्द्रने भी इन्द्रत्वको प्राप्त किया है। मातृवर्ग, देवगण, गन्धर्व, पिशाच, उरग, राक्षस और सभी सुरोंके नायक भगवान् सूर्यकी सदा पूजा किया करते हैं। यह समस्त जगत् भगवान् सूर्यमें ही नित्य प्रतिष्ठित है। जो मनुष्य अन्धकारनाशक भगवान् सूर्यकी पूजा नहीं करता, वह धर्म, अर्थ, काम और मोक्षका अधिकारी नहीं है। पक्षिश्रेष्ठ! आपत्तिग्रस्त होनेपर भी भगवान् सूर्यकी पूजा सदा करणीय है। जो मनुष्य भगवान् सूर्यकी पूजा नहीं करता, उसका जीवन व्यर्थ है। प्रत्येक व्यक्तिको देवाधिदेव भगवान् सूर्यकी पूजा-उपासना करके ही भोजन करना चाहिये। जो सूर्यभक्त हैं, वे समस्त द्वन्द्वोंके सहन करनेवाले, वीर, नीति-विधि-युक्तचित्त, परोपकारपरायण तथा गुरुकी सेवामें अनुरक्त रहते हैं। वे अमानी, बुद्धिमान्, असक्त, अस्पर्धावाले, निःस्पृह, शान्त, स्वात्मानन्द, भद्र और नित्य स्वागतवादी होते हैं। सूर्यभक्त अल्पभाषी, शूर, शास्त्रमर्मज्ञ, प्रसन्नमनस्क, शौचाचारसम्पन्न और दाक्षिण्ययुक्त होते हैं।

सूर्यके भक्त दम्भ, मत्सरता, तृष्णा एवं लोभसे वर्जित हुआ करते हैं। वे शठ और कुत्सित नहीं होते। जिस प्रकार कमलका पत्र जलसे निर्लिप्त रहता है, उसी प्रकार सूर्यभक्त मनुष्य विषयोंमें कभी लिप्त नहीं होते। जबतक इन्द्रियोंकी शक्ति क्षीण नहीं होती, तबतक भगवान् सूर्यकी आराधना सम्पन्न कर लेनी चाहिये; क्योंकि मानव असमर्थ होनेपर इसे नहीं कर सकता और यह मानव-जीवन यों ही व्यर्थ चला जाता है। भगवान् सूर्यकी पूजाके समान इस जगत्में अन्य कोई भी धर्मका कार्य नहीं है। अतः देवदेवेश भगवान् सूर्यका पूजन करे। जो मानव भक्तिपूर्वक शान्त, अज, प्रभु, देवदेवेश सूर्यकी पूजा किया करते हैं,

वे इस लोकमें सुख प्राप्त करके परम पदको प्राप्त हो जाते हैं। सर्वप्रथम ब्रह्माजीने अपने परम प्रहृष्ट अन्तरात्मासे भगवान् सूर्यकी पूजा कर अञ्जलि बाँधकर जो स्तोत्र* कहा था, उसका भाव इस प्रकार है—

'षडैश्वर्यसम्पन्न, शान्त-चित्तसे युक्त, देवोंके मार्ग-प्रणेता एवं सर्वश्रेष्ठ श्रीभगवान् सूर्यको मैं सदा प्रणाम करता हूँ। जो देवदेवेश शाश्वत, शोभन, शुद्ध, दिवस्पति, चित्रभानु, दिवाकर और ईशोंके भी ईश हैं, उनको मैं प्रणाम करता हूँ। समस्त दु:खोंके हर्ता, प्रसन्नवदन, उत्तमाङ्ग, वरके स्थान, वर-प्रदाता, वरद तथा वरेण्य भगवान् विभावसुको मैं प्रणाम करता हूँ। अर्क, अर्यमा, इन्द्र, विष्णु, ईश, दिवाकर, देवेश्वर, देवरत और विभावसु नामधारी भगवान् सूर्यको मैं प्रणाम करता हूँ।' इस स्तुतिका जो नित्य श्रवण करता है, वह परम कीर्तिको प्राप्तकर सूर्यलोकको प्राप्त करता है।

(अध्याय १७३-१७४)

सौर-धर्ममें शान्तिक कर्म एवं अभिषेक-विधि

गरुडजीने पूछा—अरुण! जो आधि-व्याधिसे पीड़ित एवं रोगी, दुष्ट ग्रह तथा शत्रु आदिसे उत्पीडित और विनायकसे गृहीत हैं, उन्हें अपने कल्याणके लिये क्या करना चाहिये? आप इसे बतलानेकी कृपा करें।

अरुणजी बोले—विविध रोगोंसे पीड़ित, शत्रुओंसे संतप्त व्यक्तियोंके लिये भगवान् सूर्यकी आराधनाके अतिरिक्त अन्य कोई भी कल्याणकारी उपाय नहीं है, अत: ग्रहोंके घात और उपघातके नाशक, सभी रोगों एवं राज-उपद्रवोंको शमन करनेवाले भगवान् सूर्यकी आराधना करनी चाहिये।

गरुडजीने पूछा—द्विजश्रेष्ठ! ब्रह्मवादिनीके शापसे मैं पंखविहीन हो गया हूँ, आप मेरे इन अङ्गोंको देखें। मेरे लिये अब कौन-सा कार्य उपयुक्त है? जिससे मैं पुन: पंखयुक्त हो जाऊँ।

अरुणजी बोले—गरुड! तुम शुद्ध-चित्तसे अन्धकारको दूर करनेवाले जगन्नाथ भगवान् भास्करकी पूजा एवं हवन करो।

गरुडजीने कहा—मैं विकलाङ्ग होनेसे भगवान् सूर्यकी पूजा एवं अग्निकार्य करनेमें असमर्थ हूँ। इसलिये मेरी शान्तिके लिये अग्निका कार्य आप सम्पादित करें।

अरुणजी बोले—विनतानन्दन! महाव्याधिसे प्रपीडित होनेके कारण तुम इसके सम्पादनमें समर्थ नहीं हो, अत: मैं तुम्हारे रोगकी शान्तिके लिये पावकार्चन (अग्निहोम) करूँगा। यह लक्ष-होम सभी पापों, विघ्नों तथा व्याधियोंका नाशक, महापुण्यजनक, शान्ति प्रदान करनेवाला, अपमृत्यु-निवारक, महान् शुभकारी तथा विजय प्रदान करनेवाला है। यह सभी देवोंको तृप्ति प्रदान करनेवाला तथा भगवान् सूर्यको अत्यन्त प्रिय है।

इस पावकार्चनमें सूर्य-मन्दिरके अग्निकोणमें गोमयसे भूमिको लीपकर अग्निकी स्थापना करे

---

* भगवन्तं भगकरं शान्तचित्तमनुत्तमम्। देवमार्गप्रणेतारं प्रणतोऽस्मि रविं सदा॥
शाश्वतं शोभनं शुद्धं चित्रभानुं दिवस्पतिम्। देवदेवेशमीशेशं प्रणतोऽस्मि दिवाकरम्॥
सर्वदु:खहरं देवं सर्वदु:खहरं रविम्। वराननं वराङ्गं च वरस्थानं वरप्रदम्॥
वरेण्यं वरदं नित्यं प्रणतोऽस्मि विभावसुम्। अर्कमर्यमणं चेन्द्रं विष्णुमीशं दिवाकरम्॥
देवेश्वरं देवरतं प्रणतोऽस्मि विभावसुम्। य इदं शृणुयान्नित्यं ब्रह्मणोक्तं स्तवं परम्।
स हि कीर्तिं परां प्राप्य पुन: सूर्यपुरं व्रजेत्॥ (ब्राह्मपर्व १७४। ३६—४०)

और सर्वप्रथम दिक्पालोंको आहुति प्रदान करे[१]।

खगश्रेष्ठ! इस प्रकार विधिपूर्वक आहुतियाँ प्रदान करनेके अनन्तर '**ॐ भूर्भुवः स्वाहा**' इसके द्वारा लक्ष हवनका सम्पादन करे। सौर-महाहोममें यही विधि कही गयी है। भगवान् भास्करके उद्देश्यसे इस अग्निकार्यको करे। यह सभी लोकोंकी सभी प्रकारकी शान्तिके लिये उपयोगी है।

हवनके अनन्तर शान्तिके लिये निर्दिष्ट मन्त्रोंका पाठ करते हुए अभिषेक करना चाहिये। सर्वप्रथम ग्रहोंके अधिपति भगवान् सूर्य तथा सोमादि ग्रहोंसे शान्तिकी प्रार्थना करे[२]।

'रक्त कमलके समान नेत्रोंवाले, सहस्र किरणोंवाले,

१- आरक्तदेहरूपाय रक्ताक्षाय महात्मने। धराधराय शान्ताय सहस्राक्षशिराय च॥
'अधोमुखाय श्वेताय स्वाहा'—इससे प्रथम आहुति दे।
चतुर्मुखाय शान्ताय पद्मासनगताय च॥ पद्मवर्णाय वेधाय कमण्डलुधराय च।
'ऊर्ध्वमुखाय स्वाहा'—इससे द्वितीय आहुति दे।
हेमवर्णाय देहाय ऐरावतगजाय च। सहस्राक्षशरीराय पूर्वदिश्युन्मुखाय च॥
देवाधिपाय चेन्द्राय विहस्ताय शुभाय च।
'पूर्ववदनाय स्वाहा'—इससे तृतीय आहुति दे।
दीप्ताय व्यक्तदेहाय ज्वालामालाकुलाय च। इन्द्रनीलाभदेहाय सर्वारोग्यकराय च॥
यमाय धर्मराजाय दक्षिणाशामुखाय च।
'कृष्णाम्बरधराय स्वाहा'—इससे चौथी आहुति दे।
नीलजीमूतवर्णाय रक्ताम्बरधराय च। मुक्ताफलशरीराय पिङ्गाक्षाय महात्मने॥
शुक्लवस्त्राय पीताय दिव्यपाशधराय च।
'पश्चिमाभिमुखाय स्वाहा'—इससे पाँचवीं आहुति दे।
कृष्णपिङ्गलनेत्राय वायव्याभिमुखाय च। नीलध्वजाय वीराय तथा चेन्द्राय वेधसे॥
'पवनाय स्वाहा'—इस मन्त्रसे छठी आहुति दे।
गदाहस्ताय सूर्याय चित्ररत्नविभूषणायच॥ महोदराय शान्ताय स्वाहाधिपतये तथा।
'उत्तराभिमुखाय महादेवप्रियाय स्वाहा'—इससे सातवीं आहुति दे।
श्वेताय श्वेतवर्णाय चित्राक्षायमहात्मने। शान्ताय शान्तरूपाय पिनाकवरधारिणे॥
'ईशानाभिमुखायेशाय स्वाहा'—इससे आठवीं आहुति दे। (ब्राह्मपर्व १७५। १८—३२)

[यह दश दिक्पाल-होम प्रतीत होता है, किंतु पाठकी गड़बड़ीसे आग्नेय तथा नैर्ऋत्यकोणकी आहुतियोंका स्वरूप अस्पष्ट है]

२- शान्त्यर्थं सर्वलोकानां ततः शान्तिकमाचरेत्। सिन्दूरासनरक्ताभो रक्तपद्मविलोचनः॥
सहस्रकिरणो देवः सप्ताश्वरथवाहनः। गभस्तिमाली भगवान् सर्वदेवनमस्कृतः॥
करोतु ते महाशान्तिग्रहपीडानिवारिणीम्। त्रिचक्ररथमारूढ अपां सारमयं तु यः॥
दशाश्ववाहनो देव आत्रेयश्चामृतस्रवः। शीतांशुरमृतात्मा च क्षयवृद्धिसमन्वितः।
सोमः सौम्येन भावेन ग्रहपीडां व्यपोहतु॥
पद्मरागनिभो भौमो मधुपिङ्गललोचनः। अङ्गारकोऽग्निसदृशो ग्रहपीडां व्यपोहतु॥
पुष्परागनिभेनेह देहेन परिपिङ्गलः। पीतमाल्याम्बरधरो बुधः पीडां व्यपोहतु॥
तप्तगैरिकसंकाशः सर्वशास्त्रविशारदः। सर्वदेवगुरुर्विप्रो ह्यथर्वणवरो मुनिः॥
बृहस्पतिरिति ख्यात अर्थशास्त्रपरश्चयः। शान्तेन चेतसा सोऽपि परेण सुसमाहितः॥
ग्रहपीडां विनिर्जित्य करोतु तव शान्तिकम्। सूर्यार्चनपरो नित्यं प्रसादाद्भास्करस्य तु॥
हिमकुन्देन्दुवर्णाभो दैत्यदानवपूजितः। महेश्वरस्ततो धीमान् महासौरो महामतिः॥
सूर्यार्चनपरो नित्यं शुक्रःशुक्लनिभस्तदा। नीतिशास्त्रपरो नित्यं ग्रहपीडां व्यपोहतु॥
नानारूपधरोऽव्यक्त अविज्ञातगतिश्चयः। नोत्पत्तिर्जायते यस्य नोदयपीडितैरपि॥
एकचूलो द्विचूलश्च त्रिशिखःपञ्चचूलकः। सहस्रशिररूपस्तु चन्द्रकेतुरिव स्थितः॥
सूर्यपुत्रोऽग्निपुत्रस्तु ब्रह्मविष्णुशिवात्मकः। अनेकशिखरः केतुः स ते पीडां व्यपोहतु॥
एते ग्रहा महात्मानः सूर्यार्चनपराःसदा। शान्तिं कुर्वन्तु ते हृष्टाः सदाकालं हितेक्षणाः॥
(ब्राह्मपर्व १७५। ३६—५०)